प्रथम मस्करण	श्री दि० जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट सोनगढ	१,१००
द्वितीय मस्करण	पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर	१,०००
तृतीय मस्करण	अखिल भारतीय जैन यवा फेडरेशन	५,०००
चतर्थ मस्करण	अखिल भारतीय जैन यवा फेडरेशन	३,२००
पचम मस्करण	अखिल भारतीय जैन यवा फेडरेशन	३,२००
	योग =	१३,५००

मूल्य ग्यारह रुपए

1300

मुद्रक गजश्वरी फोटोसटा (प्रा लि) २/१२ पजाबी बाग नई दिल्ली–११००२६

विषय-सूची

प्रकाशकीय

(पंचमसंस्करण)

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन की ओर से 'सिद्धचक्रविधान' का यह पचम सस्करण फोटो कम्पोज के माध्यम से ऑफसेट पद्धति द्वारा प्रकाशित करते हुए हमे अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

इस सिद्धचक्र विधान के रचयिता कविवर प श्री सन्तलालजी है, जो सहारनपुर के कस्बा नकुड के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम श्री सज्जनकुमार था। ये सहारनपुर के प्रतिष्ठित घराने मे श्री शीलचदजी के वशज थे। कविवर का जन्म सन् १८३४ मे हुआ था। कवि के सस्कार प्रारम्भ से ही धार्मिक थे, जो उन्हे माता-पिता से विरासत मे मिले थे। परिवार के सब लोग धर्मात्मा थे। आपने रुडकी कालेज मे अध्ययन किया था।

आपको साहित्य से प्रेम था। सिद्धचक्र की हिन्दी पूजा न होने से आपने इसका विचार किया और प्रस्तुत रचना कर डाली। आप विद्वान थे, कवि थे और भक्त थे। जैनधर्म पर किसी प्रकार का आघात आप सहन नही करते थे। आर्य समाज के साथ कई बार आपके शास्त्रार्थ हुए, जिनमे आप विजयी रहे।

आप स्वतन्त्र व्यवसायी थे, आपने नौकरी नही की। आप सुधारवादी विचारो के थे। समाज मे व्याप्त कई कुरीतियो के निवारण मे आप और आपके परिवार ने काफी योगदान किया है। जैन विवाह विधि के अनुसार विवाह करने की परिपाटी उस प्रान्त मे चलाई। मिथ्यात्ववर्धक कई रूढ़ियों को आपने मिटाया। आप अधिक नहीं जिये, अन्यथा और भी कई साहित्यिक कार्य आप कर जाते। ५२ वर्ष की आयु मे जून सन् १८८६ मे आपका स्वर्गवास हुआ। आपने सिद्धचक्र मण्डल विधान के अतिरिक्त भी अनेक पूजाये एव भजन लिखे हैं।

इस सिद्धचक्रविधान के माध्यम मे कवि ने सिद्ध भगवन्तो के गुणानुवादो के साथ-साथ उनका स्वरूप एव सिद्धपद प्राप्ति की प्रक्रिया का भी वर्णन किया है, जो कवि के गहन अध्ययन एव आध्यात्मिक रुचि का परिचायक है। पूजन के माध्यम से जैनधर्म का सैद्धान्तिक पक्ष प्रस्तुत करना—इस विधान की मौलिक विशेषता है। पूजा के अष्टको मे भी कवि ने अष्ट द्रव्य का वर्णन न करके उन्हे चढ़ाने के प्रयोजन का वर्णन भी किया है। इस प्रकार भावो की प्रधानता से लिखा गया—यह विधान भावो की शुद्धि का विशेष निमित्त भूत है।

इसमे भावपूर्णता के साथ-साथ कवि की काव्यकला भी अपने प्रौढ़रूप मे सामने आयी है। यह ब्रजभाषा मे लिखा गया है। कवि की भाषा भावानुगामिनी, सरल और माधुर्यगुणयुक्त है। इसमे ४७ प्रकार के छन्दो के प्रयोग से ज्ञात होता है कि कवि छन्दशास्त्र के विशेष ज्ञाता थे। उपमा और रूपक अलकारो के स्वाभाविक प्रयोग ने काव्यगत सौन्दर्य द्विगुणित कर दिया है। विधान मे सर्वत्र भक्तिरस व्याप्त होकर मानो सिद्ध भगवन्तो से साक्षात्कार ही कर रहा है।

इस प्रकार अनेक दृष्टिकोणो से यह विधान कवि की श्रेष्ठतम कृति है। इस विधान मे आठ पूजने हैं। प्रत्येक पूजन के अर्घ्यो की सख्या उसके पहले की पूजन से द्विगुणित है। इस क्रम मे प्रथम पूजन मे आठ, दूसरी मे सोलह, तीसरी मे बत्तीस, चौथी मे चौसठ, पाँचवी मे एक सौ अट्ठाईस, छठवी मे दो सौ छप्पन, सातवी मे पाँच सौ बारह, और आठवी मे एक हजार चौबीस अर्घ्य है।

यद्यपि अष्टान्हिका महापर्व के साथ-साथ दशलक्षण महापर्व भी वर्ष मे तीन बार आता है, तथापि अष्टान्हिका महापर्व इस अर्थ मे दशलक्षण महापर्व से अधिक भाग्यशाली है कि वह वर्ष मे तीन बार मनाया भी जाता है, जबकि दशलक्षण महापर्व केवल एक बार। अभी तो बहुत से जैन भाइयो को यह भी पता न होगा कि दशलक्षण महापर्व भी वर्ष मे तीन बार आता है।

अष्टान्हिका महापर्व के साथ सिद्धचक्रविधान का ऐसा सहज सबध स्थापित हो गया है कि बिना सिद्धचक्रविधान कराये यह महसूस ही नही होता कि हमने अष्टान्हिका महापर्व मनाया भी है। यद्यपि इस धारणा मे यह दोष उत्पन्न हो गया है कि किसी जैनी भाई को सिद्धचक्रविधान कराने का भाव उत्पन्न हुआ हो तो वह अष्टान्हिका के आने की राह देखता है। वह सोचता है कि कब अष्टान्हिका आये और सिद्धचक्रविधान कराया जाये, भले ही तब तक उसका विधान कराने का भाव ही न रहे।

अत यह ध्यान रखना चाहिए कि यह विधान कभी भी कराया जा सकता है। अरे! यह जब कराया जायेगा, तभी आठ दिन का पर्व हो जायेगा, भले ही उसे अष्टान्हिका महापर्व नाम न मिले।

इसके पूर्व इस विधान की विभिन्न प्रकाशन सस्थाओ से हजारो प्रतिया प्रकाशित हो चुकी हैं। स्व पूज्य कानजी स्वामी के देहावसान के उपरान्त सोनगढ़ मे सिद्धचक्र विधान के आयोजन के समय इसकी ११०० प्रतिया प्रकाशित की गईं जो हाथो हाथ बिक गईं। इसके पश्चात् १००० प्रतियो का द्वितीय सस्करण टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर द्वारा प्रकाशित हुई परन्तु वे भी अतिशीघ्र समाप्त हो गई। मार्च ८४ मे युवा फैडरेशन द्वारा ५००० प्रतिया प्रकाशित की गई जो २ वर्ष मे ही समाप्त हो गई। इसका चतुर्थ सस्करण ३२०० की सख्या मे प्रकाशित किया गया जो हाथो-हाथ बिक गया फलत यह

पंचम संस्करण प्रकाशित किया गया है।

प्रस्तुत प्रकाशन को अल्प मूल्य में उपलब्ध कराने के उद्देश्य से जिन महानुभावों का आर्थिक सहयोग हमें प्राप्त हुआ है उसके लिये हम सभी दातारों का हृदय से आभार मानते हैं। साथ ही साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग के प्रबन्धक श्री अखिल बंसल एम ए , जे डी भी बधाई के पात्र हैं, जिनका सहयोग प्रकाशन एवं बाईण्डिंग व्यवस्था में प्राप्त हुआ है।

सभी आत्मार्थी बन्धु इस पुस्तक को पढ़कर लाभान्वित हों और अपने जीवन को निर्मल बनाते हुए मुक्तिपथ का मार्ग प्रशस्त करें, इसी आशा और विश्वास के साथ–

ब्र० जतीशचन्द शास्त्री
अध्यक्ष, अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन

मकलन

प्रस्तावना

प्रतिष्ठचार्य ब्र पण्डित अभिनन्दनकुमार जैन
शास्त्री, बी एस सी

सिद्धचक्र मण्डल विधान · उद्देश्य एवं महत्व

जैन शास्त्रो मे वर्णित अनेक पूजन-विधान है, उनमे सिद्धचक्र मडल विधान का विशेष महत्त्व है, क्योंकि हमारा चरम लक्ष्य सिद्ध दशा प्रगट करना है और इस विधान मे सिद्ध भगवान का विस्तृत गुणानुवाद किया गया है।

जो मसार के बन्धनों से छूट गए हैं, जिनमे अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य प्रगट हो गए है, जो द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म से सर्वथा रहित हो गए हैं, उन्हे सिद्ध कहते हे। ऐसे अनन्त सिद्ध परमात्मा लोक के अग्रभाग मे विराजमान हैं। सिद्धो का समुदाय ही सिद्धचक्र कहलाता है और इस मिद्धचक्र विधान मे सिद्ध दशा प्रगट करने का विधान (उपाय) बतलाते हुए सिद्धो का गुणानुवाद किया गया है।

ज्ञानी का चरम लक्ष्य पूर्ण सुख प्रकट करना है, अत उसके हृदय मे पूर्ण सुखी अरहन्त और सिद्ध परमेष्ठी तथा पूर्ण सुख के आराधक आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी तथा पूर्ण सुख का मार्ग बताने वाली जिनवाणी के प्रति भक्ति-भाव होना स्वाभाविक है। ज्ञानी जीव विपयकपाय रूप अशुभ भावो मे तो रहना नही चाहते और सिद्धो के समान पूर्ण शुद्ध भाव प्रगट करने की उनकी सामर्थ्य नही है, अत सिद्ध भगवन्तो के गुणानुवाद के माध्यम से अपने लक्ष्य के प्रति सतर्क रहते हुए वे अशुभ भावो से सहज ही बच जाते है।

सिद्धचक्र विधान के साथ श्रीपाल और उनके साथियो का कुष्ठरोग दूर होने की घटना जुड गई है। सिद्ध भगवन्तो मे अत्यधिक गुणानुरागरूप शुभ भाव, तदनुसार सातावेदनीय कर्म का उदय और बाह्य अनुकूल सयोग की प्राप्ति—इस निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध से किसी के रोगादि दूर हो जाना आश्चर्य की बात नही है, परन्तु सिद्धचक्र की महिमा मात्र कुष्ठनिरोध तक सीमित करना, उसकी महानता मे कमी करना है। कुष्ठ तो शरीर का रोग है, आत्मा का रोग तो मोह-राग द्वेषादि विकारी भाव है। सिद्धो का स्वरूप

जानकर, उन जैसी अपनी आत्मा को पहचानकर, उममे ही लीन हो जाने पर मोह-राग-द्वेष और जन्म-मरण जैसे महान रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

सिद्धों की आराधना का सच्चा फल तो वीतराग भाव की वृद्धि होना है, क्योंकि वे स्वय वीतराग हे। सिद्धो का सच्चा भक्त उनमे लोकिक लाभ की चाह नही रखता, फिर भी पुण्यवन्ध होने से उसे लौकिक अनुकूलताएँ सहज ही प्राप्त होती है, परन्तु ज्ञानी की दृष्टि मे उनका कोई महत्त्व नही हैं।

लौकिक अनुकूलताओ के लक्ष्य से वीतरागी देव-गुरु-धर्म की या कुदेव-कुगुरु-कुधर्म की आराधना से तो पापवन्ध होता है, अत लौकिक अनुकूलताएँ भी उपलब्ध नही होती। इस सम्वन्ध मे पण्डितप्रवर टोडरमलजी मोक्षमार्ग प्रकाशक में लिखते है –

"इस प्रयोजन के हेतु अरहन्तादिक की भक्ति करने से भी तीव्र कषाय होने के कारण पापवन्ध ही होता है, इसलिए अपने को इस प्रयोजन का अर्थी होना योग्य नही है। अरहन्तादिक की भक्ति करने से ऐसे प्रयोजन तो स्वयमेव सिद्ध होते है।"[1]

अत हमे वीतरागी देव-गुरु-शास्त्र का सही स्वरूप पहचान कर सिद्धचक्र विधान के माध्यम से वीतराग भावो का ही पोषण करना चाहिए।

विधान प्रारभ करने की विधि

जिस दिन से विधान करना हो, उसके एक दिन पूर्व वेदी के सामने ८×८ फुट अथवा छोटा-बडा चौकोर समतल तखतो पर मॉडना तैयार कर लेना चाहिये। माडना के बीच मे ॐ बनाना चाहिये तथा गोलाई मे आठ वलयो मे क्रम से ८, १६, ३२, ६४, १२८, २५६, ५१२, १०२४, श्री या फूल या साथिया या बिन्दू आदि बनाना चाहिये।

विधान प्रारभ करने वाले दिन प्रात काल मे सूर्योदय के बाद जाप प्रारभ करना चाहिये। जाप करने का स्थान बद (शांतिवाला) होना चाहिये, जहाँ बालक आदि जप मे व्यवधान न कर सके। सामने पूर्व या उत्तर दिशा की ओर यत्रजी विराजमान करने के लिये टेबिल शुद्ध जल से धोकर रखे, उस पर चौकी के ऊपर सिहासन रखे और उस टेबिल के ऊपर एक चदोवा बाँधे व बीच मे सिहासन के ऊपर छत्र बॉधे। जापवाले कमरे को शुद्ध जल से धोकर टेबिल को दोनो ओर जापवालो के हिसाब से गिनती करके शुद्ध जल से धोकर पाटे लगावे, जिन पर पूजन की सामग्री, पस्तक आदि रखी जावे। सिहासन पर विनायक यत्र विराजमान कर यत्रजी की बॉयी तरफ टेबिल पर पुष्पो से स्वस्तिक बनाकर

---

१ मोक्षमाग प्रकाशक, पहला अधिकार, पृष्ठ ७

विधान करने वाले की पत्नी से अथवा किसी प्रमुख व्यक्ति से निम्नमत्र बोलकर मगलकलश विराजमान करे–

ॐ अद्य भगवतो महापुरुषस्य श्रीमदादि ः ब्रह्मणो मतेऽस्मिन् मासे, पक्षे, तिथौ, वासरे, वर्षे इह नगरे, जैनेन्द्र-मन्दिरे, . कार्यस्य निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं मण्डपभूमिशुद्धयर्थं पात्रशुद्धयर्थं शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं नवरत्नगध-पुष्पाक्षतादि-बीजपूरशोभित मगलकलशस्थापन करोम्यहम् क्ष्वीं क्ष्वीं ह स स्वाहा।

(मगल कलश मे हल्दी, सुपारी, सवा रुपया, पुष्प, पीली सरसो आदि डालकर उसके मुँह पर नारियल रखकर केशरिया कपडे से रक्षाबधन के धागे से अच्छी तरह से पहिले से बद कर चदन, गोटा, कागज आदि की माला तैयार रखना चाहिये)

इसी प्रकार के चार कलश और तेयार कर मडल के चारो कोनो पर रखना चाहिये।

पश्चात यत्रजी का अभिपेक निम्न मत्र बोलकर करना चाहिये –

'ॐ ह्रीं भूर्भुव स्वदिह विघ्नौघवारक यत्र वय परिषेचयाम ।'

जप मे सम्मिलित होने के लिए आवश्यक निर्देश .–

१ सिद्धचक्र मडल विधान मे अपनी शक्ति व समय का विचारकर २१ हजार, ५१ हजार, ७१ हजार या सवा लाख तक जप प्रतिष्ठाचार्य द्वारा निर्दिष्ट मत्र का किया जाना चाहिए।
२ जप करने वाले व्यक्ति कम से कम गृहीत-मिथ्यात्व, लोकनिंद्य कार्य, अन्याय व अभक्ष्य के त्यागी अवश्य हो।
३ अनुष्ठान के दिनो मे पूर्ण सयम से रहे।
४ रात्रि में चारो प्रकार के आहार (खाद्य, पाद्य, लेहा, स्वार्द्य) ग्रहण नही करे। बाजार (होटलादि) का भोजन न ले तथा बार-बार न खाये।
५ मत्र का शुद्ध उच्चारण करे।
६ शारीरिक व मानसिक व्याधि न हो।
७ शुद्ध धोती-दुपट्टे पहने।
८ जप के समय परस्पर बाते न करे।
९ जप मे नियमित सम्मिलित होकर अपना सकल्प पूरा करे।
१० ,जप के पूर्ण होने पर्यत यज्ञोपवीत धारण करे तथा बताये गये नियमो का पालन करे।

११ कम से कम महोत्सव की अवधि तक चमडे की वस्तुओ के प्रयोग का त्याग करे।

जाप्यविधि

जाप का मत्र कठस्थ होने पर भी अपने-अपने पाटे पर कागज पर लिखकर रखना चाहिये। प्रत्येक पाटे पर पूजन की सामग्री-जल, चन्दन, हल्दी, सुपारी, पीली सरसो, यज्ञोपवीत, रक्षासूत्र, माला-पूजन की पुस्तक तथा मालाये गिनने को २० लवग रखकर तैयार रहे।

इसके बाद सभी जाप मे वैठनेवाले अपने-अपने पाटे के पास वेठ जावे और प्रतिष्ठाचार्य मगलाष्टक या मगल पञ्चक पढ़े और "कुर्वन्तु ते मगलम्" पद बोलते समय सभी थाली मे पुष्पक्षेपण करे।

मंगलाष्टक

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिता सिद्धाश्च सिद्धीश्वरा,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकरा पूज्या उपाध्यायका ।
श्रीसिद्धान्तसुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका,
पञ्चैते परमेष्ठिन प्रतिदिन कुर्वन्तु ते मगलम् ।।१।।

श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योत - रत्नप्रभा,
भास्वत्पादन खेन्दव प्रवचनाम्भोधीन्दव स्थायिन ।
ये सर्वै जिनसिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठका साधव,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरुव कुर्वन्तु ते मगलम् ।।२।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममल रत्नत्रय पावन,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ - जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रद ।
धर्म सूक्तिसुधा च चैत्यमखिल चैत्यालय श्रयालय,
प्रोक्त च त्रिविध चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मगलम् ।।३।।

नाभेयादि - जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याता चतुर्विंशति,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णु प्रतिविष्णु-लागलधरा सप्तोत्तरा विंशति,
त्रैलोक्यो प्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषा कुर्वन्तु ते मगलम् ।।४।।

ये सर्वौषधऋृद्धय सुतपसो वृद्धिगता पञ्च ये,
ये चाष्टाँग महानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणा ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपिवलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्वरा,
सप्तैते सकलार्चिता गुणभृत कुर्वन्तु ते मगलम् ।।५।।

कैलासे वृषभस्य निवृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पाया वसुपूज्य सज्जिनपते सम्मदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनया प्रसिद्धविभवा कुर्वन्तु ते मगलम् ।।६।।

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्वू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रौप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नदीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहा कुर्वन्तु ते मगलम् ।।७।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवता जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जात परिनिष्क्रमेण विभवो य केवलज्ञानभाक् ।
य कैवल्यपरप्रवेशमहिमा सभावित स्वर्गिभि,
कल्याणानि च तानि पञ्च सतत कुर्वन्तु ते मगलम् ।।८।।

इत्थ श्री जिनमगलाष्टकमिद सौभाग्यसपत्पद,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणा मुखात् ।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धमार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ।।९।।

मंगल पञ्चक

गुणरत्नभूषा विगतदूषा सौम्यभावनिशाकरा
सद्वोध भानुविभा - विभाषितदिक्चंया विदषावरा
नि सीमसौख्यसमूह मण्डितयोगखण्डितरतिवरा
कुर्वन्तु मगलमत्र ते श्री वीरनाथ जिनेश्वरा ।।१।।

सद्ध्यानतीक्ष्ण - कृपाणधारा निहतकर्मकदम्बका,
देवेन्द्र वृन्दनरेन्द्रवन्द्या प्राप्तसुखनिकुरम्का
योगीन्द्र योगनिरूपणीया प्राप्तबोधकलापका
कुर्वन्तु मगलमत्र ते सिद्धा सदा सुखदायका ।।२।।

आचारपचकचरणचारणचुचव समताधरा
नानातपोभरहैतिहापितकर्मका मुखिताकरा
गुप्तित्रयीपरिशीलनादिविभूपिता वदतावरा
कुर्वन्तु मगलमत्र ते श्री सूरयो ऽजितशभरा ।।३।।
द्रव्यार्थभेदविभिन्नश्रुत भरपूर्णतत्त्वनिभालिनो
दुर्योगयोगनिरोधदक्षा मकलवरगुणशालिन
कर्तव्यदेशनतत्परा विज्ञानगौरवशालिन
कुर्वन्तु मगलमत्र ते गुरुदेवदीधितिमालिन ।।४।।
सयम समित्यावश्यका — परिहाणिगुप्तिविभूपिता
पचाक्षदान्तिसमुद्यता समतासुधापरिभूषिता
भूपृष्ठविष्टरसायिनो विविधर्द्धिवृन्द विभूषिता
कुर्वन्तु मगलमत्र ते मुनय सदा शमभूपिता ।।५।।

अंगन्यास

मगलाष्टक के बाद शरीर की रक्षा और तत्तद् दिशाओ से आने वाले विघ्नो की निवृत्ति के लिए नीचे लिखे अनुसार अगन्यास करे। दोनो हाथो के अगुष्ठ से लेकर कनिष्ठिका पर्यन्त पाचो अगुलियो मे क्रम से अरहत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी की स्थापना करे। जप मे वैठने वाले महानुभाव सर्वप्रथम दोनों हाथो के अगूठो को वरावरी से मिलाकर सामने करे, और—

ॐ ह्रा णमो अरहताण ह्रा अगुष्टाभ्या नम —इस मन्त्र का उच्चारण कर सिर झुकावे।

फिर दोनो हाथो की तर्जनियो (अगूठे के पास की अगुलियो) को वरावरी से मिलाकर सामने करे, और—

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण ह्रीं तर्जनीभ्यां नम —यह मन्त्र पढकर सिर झुकावे।

फिर वीच की दोनो अगुलियों को मिलाकर सामने करें, और—

ॐ ह्रू णमो आइरीयाणं ह्रू मध्यामाभ्या नम — यह मत्र पढ़कर सिर झुकावे।

फिर दोनो अनामिकाओ को सामने करे, और—

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रौं अनामिकाभ्या नम —यह मन्त्र पढ़कर सिर झुकावे।

फिर दोनो छिगुरियो को मिलाकर सामने करे, और—

ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूण ह्रः कनिष्ठिकाभ्या नम —यह मन्त्र पढ़कर सिर झुकावे।

फिर दोनो हथेलियों का बराबर सामने फैलाकर—ॐ ह्रा ह्रीं ह्रू ह्रौ ह्र करतलाभ्या नम —यह मन्त्र पढ़कर सिर झुकावे।

फिर दोनो करपृष्ठों को बराबर सामने फैलाकर—ॐ ह्रा ह्रीं ह्रू ह्रौ, ह्र करपृष्ठाभ्या नम —यह मन्त्र पढकर सिर झुकावे।

ॐ ह्रा णमो अरहताण ह्रा मम शीर्ष रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर सिर का स्पर्श करे।

ॐ ह्र णमो आइरीयाण मम हृदय रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मत्र पढकर हृदय का स्पर्श करे।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाण ह्रौं मम नाभि रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढकर नाभि का स्पर्श करे।

ॐ ह्र. णमो लोए सव्व साहूण ह्र मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मत्र पढ़कर पैरो का स्पर्श करे।

ॐ ह्रां णमो अरहताण ह्रा पूर्वदिश आगतविघ्नान् निवारय निवारय मा रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर पूर्व दिशा मे पुष्प अथवा पीली सरसो फेंके।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण ह्रीं दक्षिणदिश आगतविघ्नान् निवारय निवारय मा रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढकर दक्षिण दिशा मे पुष्प अथवा पीली सरसो फेंके।

ॐ ह्र णमो लोए सव्वसाहूण ह्र सर्वदिग्भ्य. आगतविघ्नान् निवारय निवारय मा रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर दशो दिशाओ मे पुष्प या पीली सरसो फेंके।

ॐ ह्रा णमो अरहताण ह्रा मा रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर अपने शरीर का स्पर्श करे।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण ह्रीं मम वस्त्र रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर अपने वस्त्रों का स्पर्श करे।

ॐ ह्रीं णमो आइरीयाण ह्रू मम पूजा रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर अपने खडे होने की जगह की ओर देखे।

ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूण ह्रीं सर्व जगत् रक्ष रक्ष स्वाहा—यह मन्त्र पढ़कर चुल्लू मे जल लेकर सब ओर फेंके।

क्षा क्षीं क्षू क्षौ क्ष· सर्वदिशासु, ह्रा ह्रीं ह्र ह्रौ ह्र सर्वदिशासु ओ ह्रीं अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणी अमृत स्रावय स स ब्लीं ब्लीं ब्लू ब्लू द्रा द्रा द्रीं द्रीं

द्रावय द्रावय ठ ठ ह्रीं स्वाहा—इस मन्त्र से चुल्लु के जल को मन्त्र कर अपने सिर पर सींचे।

तदनन्तर प्रतिष्ठाचार्य—ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष रक्ष हू फट् स्वाहा—इस मन्त्र से पुष्प अथवा पीली सरसों को सात बार मन्त्र पढकर परिचारकों के सिर पर डाले।

तत्पश्चात् 'ॐ हू फट् किरिट घातय घातय परिविघ्नान् स्फोटय स्फोटय सहस्रखण्डान् कुरु कुरु परमुद्रा छिन्द छिन्द परमन्त्रान् भिन्द भिन्द वा वा हुं फट् स्वाहा'—इस मन्त्र से पुष्प अथवा पीली सरसों को मंत्रित कर नव दिशाओ मे फेके।

तदनन्तर प्रतिष्ठाचार्य—

'ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष हुं फट् स्वाहा'—यह मन्त्र पढकर जप करने वाले महाशयो के दाहिने मणिवन्ध (कलाइ) मे रक्षासूत्र बाधे।

तदनन्तर निम्नोक्त श्लोक पढकर जप करने वाले अपने ललाट पर केशर का तिलक लगावे—

मगल भगवान् वीरो मगल गोतमो गणी ।
मगल कुन्दकुन्दाद्यो जेनधर्मोऽस्तु मगलम् ।।

तत्पश्चात 'ॐ नम परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकरणायाह रत्नत्रयस्वरूप यज्ञोपवीत दधामि मम गात्र पवित्र भवतु अर्हं नम स्वाहा'—इस मत्र का सबसे उच्चारण कराकर यज्ञोपवीत धारण करावे।

इसके बाद जप करने वाले महाशय अपने अपने आसनो पर बैठ जावे और यन्त्र के सामने बैठने वाला पृष्ठ १४ पर दी गई पञ्च परमेष्ठी पूजन करे।

इन्द्र प्रतिष्ठा

इन्द्रों को निर्देश —

(१) नियमित रूप से विधान मे अन्त तक सम्मिलित रहे।
(२) स्वस्थ हो।
(३) विकलाग न हो।
(४) हीन आचरण न हो।
(५) विधान के अन्त तक सयम से रहे।
(६) गृहस्थोचित शुद्ध भोजन करे।
(७) विधान पर्यन्त व्यापार की चिंता से मुक्त रहे।

यदि इनकी पत्नी इन्द्राणी बनना चाहती है तो उसमे भी उक्त विशेषताए

होनी आवश्यक हैं। साथ ही छह माह से अधिक गर्भवती न हो, अन्यथा विधि-विधान से आकुलता हो सकती है। इन्द्र-इन्द्राणियो को उत्तम पीत वस्त्र धारण करावे, मुकुट बाँधे तथा निम्नलिखित मन्त्र द्वारा रक्षासूत्र बाँधे।

'ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष हूँ फट् स्वाहा।'

फिर निम्नलिखित मन्त्र द्वारा अमृत स्नान करावे।

'ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृत स्रावय स्रावय स स क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ह स क्ष्वीं क्ष्वीं ह स स्वाहा'।

(उक्त मन्त्र को पढ़कर प्रतिष्ठाचार्य इन्द्र-इन्द्राणियो पर जल के छीटे डाले।)

तदनन्तर चन्दन, मुकुट, माला, केयूर, हार, कुण्डल आदि उपलब्ध आभूषणो को एक थाली मे रखकर मण्डल के सामने रखे और प्रतिष्ठाचार्य निम्नलिखित मन्त्र बोलकर उन पर पुष्प तथा पीली सरसो डाले।

ॐ ह्रां णमो अरहंताणं ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ओं ह्रूँ णमो आइरीयाणं ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ॐ ह्रः णमो लोए सव्वसाहूणं इन्द्र-इन्द्राण्योराभूषणानि पवित्राणि कुरु कुरु स्वाहा।

उक्त मन्त्र से शुद्ध किये हुए चन्दन आदि को क्रम से निम्नलिखित मन्त्र बुलवाकर धारण करावे।

पात्रेऽर्पित चन्दनमौषधीश शुभ्र सुगन्धाहृतचञ्चरीकम् ।
स्थाने नवाके तिलकाय चर्च्य न केवल देहविकारहेतो ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्रूं ह्रौं ह्रः मम सर्वांगशुद्धि कुरु कुरु स्वाहा ।

(उक्त श्लोक और मन्त्र बोलकर ललाट, मस्तक, ग्रीवा, हृदय, दोनो भुजाएँ, प्रकोष्ठ, नाभि और पृष्ठ भाग मे नौ तिलक लगावे)

जिनांघिभूमिस्फुरिता स्रज मे स्वयवर यज्ञविधानपत्नी ।
करोतु यत्नादचलत्वहेतोरितीव मालामुररीकरोमि ।।

(यह पढ़कर माला पहिनावे)

धौतान्तरीय विधुकान्तिसूत्रै सद्ग्रन्थित धौतनवीनशुद्धम् ।
नग्नत्वलब्धिर्न भवेच्च यावत् सधार्यते भूषणमूरुभूम्या ।।

(यह पढ़कर अधोवस्त्र का स्पर्श करावे)

सव्यानमञ्चद्दशया विभान्तमखण्डधौताभिनव मृदुत्वम् ।
सधार्यते पीत-सिताशुवर्णमशोपरिष्टाद्धृतभूषणाकम् ।।

(यह पढकर दुपट्टे का स्पर्श करावे।)

शीर्षण्यशुम्भन्मुकुट त्रिलोकीहर्षाप्तराज्यस्य च पट्टबन्धम् ।
दधामि पापोर्मिकुलप्रहन्तृ रत्नाढ्यमालाभिरुदञ्चितागम् ।।

अथ पौर्वाह्णकदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म-क्षयार्थं भावपूजास्तववन्दनासमेतं श्रीपञ्चमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मन्त्र पढे)

या कृत्रिमास्तदितरा प्रतिमा जिनस्य
संस्नापयन्ति पुरुहूतमुखादयस्ता ।
सद्भावलब्धिसमयादिनिमित्तयोगा-
त्तत्रैवमुज्ज्वलधिया कुसुमं क्षिपामि ।।२।।

(यह पढ़कर पुष्पाञ्जलि क्षेपण करके अभिषेक की प्रतिज्ञा करे)

इति अभिषेक प्रतिज्ञायै पुष्पांजलिं क्षिपामि।

श्रीपीठक्लृप्ते विशदाक्षतौघै
श्रीप्रस्तरे पूर्णशशाङ्ककल्पे ।
श्रीवर्तके चन्द्रमसीति वार्तां
सत्यापयन्तीं श्रियमालिखामि ।।३।।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीलेखनं करोमि।

(यह पढ़कर अभिषेक की थाली मे केशर से श्री लिखे)

कनकादिनिभं कम्रं पावनं पुण्यकारणम् ।
स्थापयामि परं पीठं जिनस्नपनाय भक्तितः ।।४।।

ॐ ह्रीं श्रीपीठस्थापनं करोमि ।

(यह पढ़कर सिंहासन स्थापित करे)

भृङ्गारचामरसुदर्पणपीठकुम्भ-
तालध्वजातपनिवारकभूषिताग्रे ।
वर्धस्व नन्द जय पाठपदावलीभिः
सिंहासने जिनभवन्तमहं श्रयामि ।।५।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मतीर्थाधिनाथ ! भगवन्निह पाण्डुकशिलापीठे सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

(यह पढ़कर प्रतिमा विराजमान करे)

श्रीतीर्थकृत्स्नपनवर्यविधौ सुरेन्द्रः
क्षीराब्धिवारिभिरपूरयदर्थकुम्भान् ।
ताँस्तादृशानिव विभाव्य यथार्हणीयान्
संस्थापये कुसुमचन्दनभूषिताग्रे ।।६।।

(यह पढ़कर चारों कोनो मे चार कलश रखे)

आनन्दनिभरसुरप्रमदादिगाने
वादित्रपूरजयशब्दकलशप्रशन्तै ।
उद्गीयमानजगतीपतिकीतिमेना
पीठस्थली वसुविधाचनयोल्लसामि ।।७।।

ॐ ह्रीं स्नपनपीठस्थिताय जिनाणर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(यह पढ़कर अर्घ्य चढावे वादित्र नाद करावें तथा जय-जय शब्द का उच्चारण करें)

कमप्रबन्धनिगडैरपि हीनताप्त
ज्ञात्वापि भक्तिवशत परमादिदेवम् ।
त्वा स्वीयकल्मषगणोन्मथनाय देव
शुद्धोदकैरभिनयामि नयार्थतत्त्वम् ।।८।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं व म ह स त प व व ह ह स स त त प प झ झ क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रा द्रा द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

(यह पढ़कर चार कलशों से अभिषेक करें)

दूरावनम्र सुरनाथ किरीट कोटी
सलग्न रत्न किरणच्छवि धूसरांघ्रि ।
प्रस्वेद तापमल मुक्तमपि प्रकृष्टै-
भक्त्या जलैजिनपति बहुधाभिषिचे ।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्त भगवन्त कृपालसन्त वृषभादिमहावीरपर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकरपरमदेव आद्यानामापे जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखडे नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे मासे पक्षे शुभ दिने मुन्यार्यिकाश्रावकश्राविकाणा सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिचेयाम ।

श्री पच परमेष्ठी पूजा

अरहत सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन ।
जय पच परम परमेष्ठी जय, भवसागर-तारणहार नमन।।
मन-वच-काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन ।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन।।

निज आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन ।
तुम चरणो की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन ।।

ॐ ह्रीं श्री अरहत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपचपरमेष्ठिन. ! अवतर अवतर सवौषट् आवाह्ननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम् । मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ ।।
मैं जन्म-जरा-मृतु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलम् ।

ससार ताप मे जल-जल कर, मैने अगणित दु ख पाये है ।
निज शान्त स्वभाव नही भाया, पर के ही गीत सुहाए हैं ।।
शीतल चदन है भेंट तुम्हे, ससार ताप नाशो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो ससारतापविनाशनाय चन्दनम् ।

दु खमय अथाह भवसागर मे, मेरी यह नौका भटक रही ।
शुभ-अशुभ भाव की भँवरो मे, चैतन्य शक्ति निज अटक रही ।।
तन्दुल है धवल तुम्हे अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्री श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तयेअक्षतम् ।

मैं काम व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किञ्चित् छाया ।
चरणो मे पुष्प चढ़ाता हूँ, तुम को पाकर मन हर्षाया ।।
मैं काम भाव विध्वस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो कामबाणविध्वसनाय पुष्पम् ।

मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ, चारो गति मे भरमाया हूँ ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नही हो पाया हूँ ।।
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं चतु कोणेषु चतु कलशस्थापन करोमि।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् ।

मोहान्ध महा अज्ञानी में, निज को पर का कर्त्ता माना ।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्मस्वरूप न पहिचाना ।।
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपम् ।

कर्मों की ज्वाला धधक रही, ससार बढ़ रहा है प्रतिपल ।
सवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल ।।
मै धूप चढ़ाकर अब आठो, कर्मो का हनन करूँ स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपम् ।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का ।
दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का ।।
उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महा फल हो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलम् ।

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ ।
अब तक के संचित कर्मों का, मैं पुञ्ज जलाने आया हूँ ।।
यह अर्घ समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी ।
हे पच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुख मेटो अन्तर्यामी ।।

ॐ ह्रीं श्री पचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् ।

सस्कृत अर्घ्य

अनादिसन्तानभवान् जिनेन्द्रान् अर्हत्पदेष्टानुपदिष्टधर्मान् ।
द्वेधाश्रियालिगतपादपद्मान् यजामि भक्त्या प्रकृतिप्रसक्त्यै ।। १ ।।

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयसमवसरणलक्ष्मी विभ्रतेऽर्हत्परमेष्ठिनेऽर्घ्यं ।

कर्माष्टनाशाच्युतभावकर्मोद्धतीन् निजात्मस्वविलासभूपान ।
सिद्धानन्तांस्त्रिक्कालमध्ये गीतान् यजामीष्टविधिप्रसक्त्यै ।। २ ।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्मकाष्ठगण भस्मीकुर्वते सिद्धपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं ।

ये पञ्चधाचारपरायणानामग्रे सरादक्षिणशिक्षिकासु ।
प्रमाणनिर्णीतपदार्थसार्थानाचार्यवर्यान् परिपूजयामि ।। ३ ।।

ॐ ह्री पञ्चाचारपरायणाचार्यपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं .।

अर्थश्रुत सत्यविवोधनेन द्रव्यश्रुत ग्रन्थविदर्भणेन ।
येऽध्यापयन्ति प्रवरानुभावास्तेऽध्यापका मेऽर्हणया दुहन्तु।। ४।।

ॐ ह्रीं द्वादशागपठनपाठनोद्यतायोपाध्यायपरमेष्ठिनेऽर्घ्यं. ।

द्विधा तपोभावनया प्रवीणान् स्वकर्मभूवीध्रविखण्डनेषु ।
विविक्तशय्यासनहर्म्यपीठ स्थितान् तपस्विप्रवरान् यजामि।। ५।।

ॐ ह्री त्रयोदशप्रकारचारित्राराधकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं ।

अन्र्हमगलमर्चे सुरनरविद्याधरैकपूज्यपदम् ।
तोयप्रभृतिभिरर्घ्यैर्विनीतमूर्धा शिवाप्तये नित्यम्।। ६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलायार्घ्यम् ।

ध्रौव्योत्पादविनाशनरूपाखिलवस्तुवोधनार्थकरम् ।
सिद्ध मगलमिति वा मत्वाच चाष्टविधवस्तुभि ।। ७।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलायार्घ्यं ।

यद्दर्शनकृतविभवाद् रोगोपद्रवगणा मृग इव मृगेन्द्रात् ।
दूर भजन्ति देश साधुभ्योऽर्घ्यंते विधिना।। ८।।

ॐ ह्रीं साधुमगलायार्घ्यं ।

केवलिमुखावगतया वाण्या निर्दिष्टभेदधर्मगणम् ।
मत्वा भवसिन्धुतरी प्रयजे तन्मगल शुद्धयै।। ९।।

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मायार्घ्यं ।

लोकोत्तममथ जिनराट्पदाब्जसेवनयामितदोषविलयाय ।
शक्त मत्वा घृतजलगन्धैरर्चे समीहित प्रभवै ।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमायार्घ्यं .।

सिद्धाश्च्युतदोषमला लोकाग्र प्राप्य शिवसुख व्रजिता ।
उत्तमपथगा लोके तानच वशविधार्चनया।। ११।।

ॐ ह्रीं सिद्धलोकोत्तमायार्घ्यं ।

इन्द्रनरेन्द्रसुरेन्द्रैरर्थिततपसा व्रतैषिणा सुधियाम् ।
उत्तममध्वानम सावर्चेऽह सलिलगन्धमुखै ।।१२।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमायार्घ्यं ।

रागपिशाचविमर्दनमत्र भव धैर्यधारिणामतुलम् ।
उत्तममपगतकामो वृषमर्चे शुचितर कुसुमै ।।१३।।

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मायार्घ्यं ।

अर्हच्छरणमथार्चेनन्तजनुष्यपि न जातु सम्प्राप्तम् ।
नर्तनगानादिविधि मुद्दिश्याष्टकर्मणा शान्त्यै ।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हच्छरणायार्घ्यं ।

निर्व्याबाधगुणादिकप्रागय शरण ममेतच्चिदनन्तम् ।
सिद्धानाममृताना भूत्यै पूजेयमशुभहान्यर्थम् ।।१५।।

ॐ ह्रीं सिद्धशरणायार्घ्यं ।

चिदचिद्भेद शरण लौकिकमाप्य प्रयोजनातीतम् ।
त्यक्त्वा साधुजनाना शरण भूत्यै यजामि परमार्थम् ।।१६।।

ॐ ह्रीं साधुशरणायार्घ्यं ।

केवलिनाथ मुखोद्गतधर्म प्राणिसुखहितार्थमुद्दिष्ट ।
तत्प्राप्त्यै तद्यजन कुर्वे मर्खविघ्ननाशाय ।।१७।।

ॐ ह्रीं केवलिप्रज्ञप्तधर्मशरणायार्घ्यं ।

ससारदु खहनने निपुण जनाना नाद्यन्तचक्रमिति सप्तदशप्रमाणम् ।
सपूजये विविधभक्तिभरावनम्र शान्तिप्रद भुवनमुख्यपदार्थसार्थै ।।१८।।

ओं ह्रीं अर्हदादिसप्तदशमन्त्रेभ्य समुदायार्घ्यं ।

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार ।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हंत देव को नमस्कार ।।

अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरजन निराकार ।
जय अजर अमर हे मुक्तिकत, भगवत सिद्ध को नमस्कार ।।

छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार ।
हे मुक्तिवधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार ।।

एकादश अग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार ।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार ।।

व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म, वैराग्य भावना हृदय धार ।
हे द्रव्य-भाव सयममय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार ।।

बहु पुण्य सयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन ।
हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन ।।
निज-पर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज मे लीन करूँ ।
अब भेदज्ञान के द्वारा मैं, निज आत्म स्वय स्वाधीन करूँ ।।

निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ ।
पर-परिणति से हो विमुख सदा, निज ज्ञानतत्त्व को ही जानूँ ।।
जब ज्ञान-ज्ञेय-ज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा ।
तब चार घातिया क्षय करके, अर्हंत महापद पाऊँगा ।।
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु! कब इसको पाऊँगा ।
सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निजस्वभाव में आऊँगा ।।
अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु! मैंने की है पूजन ।
तब तक चरणों में ध्यान रहे, जब तक न प्राप्त हो मुक्ति सदन ।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यम् .

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ ।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मन्त्र का ध्यान करूँ ।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

संकल्प

पूजा के बाद प्रतिष्ठाचार्य जप करने वालों के हाथ में हल्दी, सुपारी, सरसों तथा जल देकर निम्नलिखित संकल्प पढ़वावें—

"ॐ जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे देशे .प्रान्ते नगरे , ऋतौ मासे तिथौ संवत्सरे जैनमन्दिरे . कार्यस्य निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं , इति मन्त्रस्य इति प्रमितस्य जापस्य संकल्पं कुर्मः, निर्विघ्न समाप्तिर्भवतु अर्हं नमः स्वाहा"।

इस मन्त्र पढ़कर हाथ में लिया हुआ सामान अथवा जल सामने चढ़ा दें।

जाप के मन्त्र

प्रतिष्ठाचार्य सबके मुख से मन्त्र का उच्चारण सुनकर, यदि अशुद्ध हो तो शुद्ध करा दें। जप करने वाले ९ बार णमोकार मन्त्र पढ़कर, निश्चित मन्त्र का जाप शुरू कर दें।

(१) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा।

अथवा

(२) 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा सर्वशान्ति कुरु कुरु स्वाहा'।

विधान की समापन विधि

मण्डप मे वेदी के सन्मुख चौकोर, गोल और त्रिकोण ऐसे थाली मे चन्दन से स्वस्तिक व ॐ बनावे। समापन विधि मे वैठने वालो की सख्या अधिक हो तो अलग से थाली रख लेना चाहिये। प्रारम्भ मे सव लोग अपने स्थान पर खडे होकर मगलाष्टक पढते हुए पुष्प क्षेपण करे।

तदनन्तर **'ॐ ह्रीं क्ष्वीं भू स्वाहा'**—यह मन्त्र पढकर भूमि मे पुष्पक्षेपण करे।

ॐ ह्रीं मेघकुमार धरा प्रक्षालय प्रक्षालय अ ह स त प स्व झ य क्ष फट् स्वाहा'—यह मन्त्र पढ़कर भूमि पर जल सीचे।

'ॐ ह्रीं अर्हं क्ष व व श्री पीठस्थापन करोमीति स्वाहा'— यह पढकर पश्चिम मे पीठ स्थापन करे।

'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐ अर्हं जगता सर्वशान्ति कुर्वन्तु श्रीपीठयन्त्र स्थापन करोमीति स्वाहा'—यह पढ़कर पीठ पर विनायक यन्त्र विराजमान करे। तदनन्तर नीचे लिखे मन्त्रो से यन्त्र की पूजा करे, व अर्घ चढ़ावे।

निम्न मन्त्र पढकर धर्म चक्र को अर्घ दे।

ॐ ह्रीं अर्हं नम परमेष्ठिभ्य स्वाहा।
ॐ ह्रीं अर्हं नम परमात्मेभ्य स्वाहा।
ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनादिनिधनेभ्य स्वाहा।
ॐ ह्रीं अर्हं नमो नृसुरासुरपूजितेभ्य स्वाहा।
ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तदर्शनेभ्य स्वाहा।
ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तवीर्येभ्य स्वाहा।
ॐ ह्रीं अर्हं नमोऽनन्तसुखेभ्य स्वाहा।

'ॐ ह्रीं धर्मचक्रायाप्रतिहततेजसे स्वाहा'—यह पढ़कर धर्मचक्र के लिये अर्घ चढ़ावे।

निम्न मन्त्र पढ़कर छत्रत्रय को अर्घ देवे।

'ॐ ह्रीं श्वेतछत्रत्रयश्रिये स्वाहा'।

निम्न मन्त्र पढ़कर सरस्वती का आवाह्न करे।

'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं सौ ह्रौं सर्वशास्त्रप्रकाशिनि वद वद वाग्वादिनि अवतर अवतर, तिष्ठ तिष्ठ सन्निहिता भव भव वषट्'।

निम्न मन्त्र पढ़कर सरस्वती-जिनवाणी को अर्घ्य देवे।

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भूतस्याद्वादनयगर्भितद्वादशांगश्रुतज्ञानार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

निम्न मन्त्र पढ़कर निर्ग्रन्थ गुरु का आवाह्न करे।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रादिगुणविराजमानाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निम्न मन्त्र पढ़कर गुरु को अर्घ्यं चढ़ावे।

ॐ ह्रीं स्वस्तिविधानाय पुण्याहवाचनार्थं च कलश स्थापयामीति स्वाहा।

निम्न मन्त्र पढ़कर चावलो पर जल से भरा हुआ एव श्रीफल आदि से सुशोभित कलश स्थापित करे।

ॐ ह्रीं ह्रौं ह्रू ह्रौं ह्र नमोऽर्हते भगवते पद्ममहापद्मतिगिंच्छ-केसरिपुण्डरीकमहापुण्डरीकगगासिन्धुराहिद्रोहि-तास्याहरिद्धरिकान्तासीता-सीतोदानारीनरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्ता रक्तोदापयोधिशुद्धजलसुवर्णघट-प्रक्षालितनवरत्नगन्धाक्षतपुष्पोर्जिता-मादक पवित्र कुरु कुरु झ झ झौं झौं व व म मं ह ह स स त त प प द्रा द्रा द्रीं द्रीं ह स स्वाहा।

उक्त मन्त्र पढ़कर कलश पर थोडा प्रासुक जल डाले।

तदनन्तर निम्न मन्त्र को बोलकर क्रमश जल आदि आठ द्रव्य चढ़ावे –

ॐ ह्रीं नीरजसे नम (जलम)
ॐ ह्रीं शीलगन्धाय नम (चन्दनम्)
ॐ ह्रीं अक्षताय नम (अक्षतम्)
ॐ ह्रीं विमलाय नम (पुष्पम्)
ॐ ह्रीं दर्पमथनाय नम (नैवेद्यम्)
ॐ ह्रीं ज्ञानद्योतनाय नम (दीपम्)
ॐ ह्रीं श्रुतधूपाय नम (धूपम्)
ॐ ह्रीं अभीष्टफलदाय नम (फलम्)
ॐ ह्रीं परमसिद्धाय नम (अर्घ्यम्)

तदनन्तर निम्नलिखित मत्रो को पढ़ते हुये पुष्पो का क्षेपण करे –

ॐ ह्रीं अर्हद्भ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं सिद्धेभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं सूरिभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं पाठकेभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं साधुभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं जिनधर्मेभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं जिनागमेभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं जिनबिम्बेभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं जिन चैत्यालेभ्य स्वाहा। ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय स्वाहा।

(उपरोक्त प्रत्येक मन्त्र के बाद 'स्वाहा' शब्द का उच्चारण स्पष्ट तथा

प्रत्येक मन्त्र पर अर्घ्य या पुष्प मंडित (चबूतरे) पर थाली रखकर उसमें चढावे।)

पीठिकामन्त्रा

ॐ सत्यजाताय नम स्वाहा। ॐ अर्हज्जाताय नम स्वाहा। ॐ अनुपमजाताय नम स्वाहा। ॐ स्वप्रधानाय नम स्वाहा। ॐ अचलाय नम स्वाहा। ॐ अक्षयाय नम स्वाहा। ॐ अव्याबाधाय नम स्वाहा। ॐ अनन्तज्ञानाय नम स्वाहा। ॐ अनन्तदर्शनाय नम स्वाहा। ॐ अनन्तवीर्याय नम स्वाहा। ॐ अनन्तसुखाय नम स्वाहा। ॐ नीरजसे नम स्वाहा। ॐ निर्मलाय नम स्वाहा। ॐ अच्छेद्याय नम स्वाहा। ॐ अभेद्याय नम स्वाहा। ॐ अजराय नम स्वाहा। ॐ अमराय नम स्वाहा। ॐ अप्रमेयाय नम स्वाहा। ॐ अगर्भवासाय नम स्वाहा। ॐ अक्षोभाय नम स्वाहा। ॐ अविलीनाय नम स्वाहा। ॐ परमधनाय नम स्वाहा। ॐ परमकाष्ठयोगरूपाय नम स्वाहा। ॐ लोकाग्रनिवासिने नमो नम स्वाहा। ॐ परमसिद्धेभ्यो नम स्वाहा। ॐ अर्हत्सिद्धेभ्यो नम स्वाहा। ॐ ह्री केवलिसिद्धेभ्यो नमो नम स्वाहा। ॐ अन्त कृतसिद्धेभ्यो नमो नम स्वाहा। ॐ परम्परासिद्धेभ्यो नमो नम स्वाहा। ॐ अनादि परम्परा-सिद्धेभ्यो नम स्वाहा। ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नम स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्यनिर्वाणपूजार्ह अग्नीन्द्राय स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

यह काम्यमन्त्र पढकर प्रतिष्ठाचार्य इन्द्रो-इन्द्राणियो पर पुष्प फेंके अथवा जल के छीटे देवे।

जातिमन्त्रा

ॐ सत्यजन्मन शरण प्रपद्ये स्वाहा। ॐ अर्हज्जण्मन शरण प्रपद्ये स्वाहा। ॐ अर्हन्मातु शरण प्रपद्ये स्वाहा। ॐ अर्हत्सुतस्य शरण स्वाहा। ॐ अनादिगमनस्य शरण प्रपद्ये स्वाहा। ॐ अनुपमजन्मन शरण प्रपद्ये स्वाहा। ॐ रत्नत्रयस्य शरण प्रपद्ये स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते सरस्वति सरस्वति स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

निस्तारकमन्त्रा

ॐ सत्यजाताय स्वाहा। ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा। ॐ षटकर्मण स्वाहा। ॐ ग्रामपतये स्वाहा। ॐ अनादिश्रोत्रियाय स्वाहा। ॐ स्नातकाय स्वाहा। ॐ

श्रावकाय स्वाहा। ॐ देवब्राह्मणाय स्वाहा। ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा। ॐ अनुपमाय स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधिपते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

ऋषिमन्त्रा

ॐ सत्यजाताय नम स्वाहा। ॐ अर्हज्जाताय नम स्वाहा। ॐ निर्ग्रन्थाय नम स्वाहा। ॐ वीतरागाय नम स्वाहा। ॐ महाव्रताय नम स्वाहा। ॐ त्रिगुप्ताय नम स्वाहा। ॐ महायोगाय नम स्वाहा। ॐ विविधयोगाय नम स्वाहा। ॐ विवर्द्धये नम स्वाहा। ॐ अगधराय नम स्वाहा। ॐ पूर्वधराय नम स्वाहा। ॐ गणधराय नम स्वाहा। ॐ परमर्षिभ्यो नमो नम स्वाहा। ॐ अनुपमजाताय नम स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

सुरेन्द्रमन्त्रा

ॐ सत्यजाताय स्वाहा। ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा। ॐ दिव्यजाताय स्वाहा। ॐ दिव्यर्चिजाताय स्वाहा। ॐ नेमिनाथाय स्वाहा। ॐ सौधर्माय स्वाहा। ॐ कल्पाधिपतये स्वाहा। ॐ अनुचराय स्वाहा। ॐ परम्परेन्द्राय स्वाहा। ॐ अहमिन्द्राय स्वाहा। ॐ परमार्हताय स्वाहा। ॐ अनुपमाय स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टि कल्पपते कल्पपते दिव्यमूर्ते दिव्यमूर्ते वज्रनामन स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

परमराजादिमन्त्रा

ॐ सत्यजाताय स्वाहा। ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा। ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा। ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा। ॐ नेमिनाथाय स्वाहा। ॐ परमजाताय स्वाहा। ॐ परमार्हताय स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेज उग्रतेज दिशाञ्जन नेमिविजय नेमिविजय स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

परमेष्ठिमन्त्रा

ॐ सत्यजाताय नम स्वाहा। ॐ अर्हज्जाताय नम स्वाहा। ॐ परमजाताय नम स्वाहा। ॐ परमार्हताय नम स्वाहा। ॐ परमरूपाय नम स्वाहा। ॐ परमतेजसे नम स्वाहा। ॐ परमगुणाय नम स्वाहा। ॐ परमस्थानाय नम स्वाहा। ॐ परमयोगिने नम स्वाहा। ॐ परमभाग्याय नम स्वाहा। ॐ परमर्द्धये नम स्वाहा। ॐ परमप्रसादाय नम स्वाहा। ॐ परमविज्ञानाय नम स्वाहा। ॐ परमदर्शनाय नम स्वाहा। ॐ परमवीर्याय नम स्वाहा। ॐ परमसुखाय नम स्वाहा। ॐ परमसवज्ञाय नम स्वाहा। ॐ अर्हते नम स्वाहा। ॐ परमेष्ठिने नम स्वाहा। ॐ परमनेत्रे नमो नम स्वाहा। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्यविजय त्रैलोक्यविजय धर्ममूर्ते धर्ममूर्ते धर्मनेमे स्वाहा।

सेवाफल षट्परमस्थान भवतु, अपमृत्युविनाशन भवतु, समाधिमरण भवतु स्वाहा।

तदनन्तर जिस मन्त्र का जितना जप किया हो, उसकी दशाश पुष्पो द्वारा आहुतिया देना चाहिये। यह मन्त्र प्रतिष्ठाचार्य मन मे बोलकर स्वाहा शब्द का उच्चारण करे और तदनन्तर इन्द्रादि बनने वाले सब महाशय स्वाहा बोलकर पुष्प क्षेपण करे।

समापन विधि समाप्त होने पर जो घट स्थापित किया था, उसे हाथ मे लेकर इन्द्र बृहच्छान्तिधारा दे।

पुण्याहवाचन

उसके बाद निम्नलिखित पुण्याहवाचन करे—

ॐ पुण्याह पुण्याह लोकोद्यतनकरा अतीतकालसजाता निर्वाण-सागरप्रभृतयश्चतुर्विंशतिपरमदेवा व प्रीयन्ता प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ सम्प्रतिकालसभवा वृषभादिवीरान्ताश्चतुर्विंशतिपरमजिनेन्द्रा व प्रीयन्ता प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवा महापद्मादिचतुर्विंशतिभविष्यत्परमदेवा व प्रीयन्ता प्रीयन्ताम्। (धारा)

विंशति परमदेवा व प्रीयन्ता प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ वृषभसेनादिगणधरदेवा व प्रीयन्ता प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ सप्तर्द्धिविशोभिता कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगम्बरसाधुचरणा व प्रीयन्ता प्रीयन्ताम्। (धारा)

इह वान्यनगरग्रामदेवतामनुजा सर्वे गुरुभक्ता जिनधर्मपरायणा

भवन्तु। दानतपोवीर्यानुष्ठान नित्यमेवास्तु। सर्वजिनधर्मभक्ताना धनधान्यैश्वर्यबलद्युतियश प्रमोदोत्सवा प्रवर्तन्ताम्।

तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, वृद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु, अविघ्नमस्तु, आरोग्यमस्तु, कर्मसिद्धिरस्तु, इष्टसम्पत्तिरस्तु, काममागल्योत्सवा सन्तु, पापानि शाम्यन्तु घोराणि शाम्यन्तु, पुण्य वर्धताम्, धर्मो वर्धताम्, श्रीवर्धताम्, कुल गोत्र चाभिवर्धेताम्, स्वस्ति भद्र चास्तु, आयुष्यमस्तु, पापानि क्ष्वी क्ष्वी ह स स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्रचरणारविन्देष्वानन्दभक्ति सदास्तु।

तदनन्तर शान्तिपाठ और विसर्जनपाठ पढ़े।

जैन धर्म मे हवन एक स्पष्टीकरण

जैनधर्म अहिसाप्रधानधर्म है, अत इसमे पाप से बचने और पुन्योपार्जन के जितने भी साधन पूजा-निधानादि है, उनमे अहिसात्मक पद्धति को प्रधान मानकर ही विधि-विधान है। यदि इसमे भी अन्य मत के समान पूजा-विधान आदि की पद्धति होती, तब तो हमे यह पता ही नही चलता कि जैनधर्म और अन्य धर्म मे भेद भी है।

यह तो सर्वगत है कि जैनधर्म मे पद-पद पर जिस कार्य मे हिंसा कम और पुण्य अधिक हो, वही कार्य सराहनीय कहा गया है। यहाँ प्रत्येक क्रिया विवेकपूर्ण ही होती है। यदि हमने सावधानी न बरती और मात्र परम्परावश क्रिया के करने के पक्षपाती रहे तो निश्चित है कि हमे पुण्य के बदले पाप ही बँधने वाला है।

भगवान वासुपूज्य की स्तुति करते हुए आचार्य समन्तभद्र ने 'वृहत्स्वयभूस्तोत्र' मे लिखा है —'**सावद्यलेशो बहुपुण्यराशौ**'[1] अर्थात्

[1] वृहत्स्वयभूस्तोत्र का वह सम्पूण श्लोक इम प्रकार है —

पूज्य दिन त्वार्चयतो जनस्य सावद्यलेशो बहुपुण्यराशौ ।
दोषायनाल कणिका विषस्य न दूषिका शीतशिवाम्बुराशौ ।।

सराग परिणति अथवा आरम्भजनित थोडा-सा पाप का लेश, बहुत पुण्य की राशि मे दोष के लिए समर्थ नही है। जिस प्रकार विष की अल्पमात्रा शीतल एव आल्हादकारी जल से युक्त समुद्र मे दोष उत्पन्न करने वाली नही हैं।

—**आचार्य समन्तभद्र** वृहत्स्वयभूस्तोत्र, छन्द ३२।

जिसमे आरम्भ थोडा और पुण्य बहुत प्राप्त हो, वह कार्य ही करना योग्य है।

लेकिन आज जैनधर्म का मूल अहिसा को जानने-मानने वाले और अपने

को जैनधर्म का कट्टर श्रद्धानी वताने वाले भी रूढिवश भट्टारक परम्परा मे प्राप्त विकृतियो को ही पीटते चले जा रहे है और विधान, वेदीप्रतिष्ठा पचकल्याणको मे शाति-विसजन मे अन्य धर्मो के समान मेवा, घी, शक्कर आदि पदार्थो से बनी धूप, जिसमे शीघ्र ही त्रसजीवो की उत्पत्ति हो जाती हैं, को अग्नियुक्त कुण्ड मे आहुति देकर हवन (यज्ञ) कराते जा रहे है।

प्रथम तो अग्नि स्वय एकइन्द्रिय जीव है तथा उसमे डाली गई धूप और समिधा मे भी त्रस जीव पाये जाते है—यह साक्षात हिसा प्रतिरूपक उदाहरण है।

अत जो हिसा के कारण यज्ञादि (हवनादि) को धर्म का कारण मान रहे है और विधान आदि कराने वाले यजमान को भी धूप व अग्नि से हवन कराने को बाध्य करते है, उन्हे देखकर बडा खेद होता है।

यज्ञ (हवन) आदि के सम्बन्ध मे आचार्यकल्प पंडित टोडरमलजी ने भी मोक्षमार्गप्रकाशक मे लिखा है —

'अग्नि आदि का महा आरम्भ करते है, वहाँ जीवघात होता है, सो उन्ही के शास्त्रो मे वा लोक मे हिसा का निषेध है, परन्तु ऐसे निर्दय हैं कि कुछ गिनते नही।''[1]

यद्यपि यह बात पंडित टोडरमलजी ने 'विविधमत समीक्षा' नामक पाचवे अधिकार के 'यज्ञ मे पशुहिसा का प्रतिषेध'—इस प्रकरण मे लिखी है, परन्तु विचार करे कि जब हम अग्नि का महा आरम्भ कर जीवघात करते हैं तो क्या हमे मात्र जैन होने से ही उस अग्नि के महा आरम्भ मे हिसा नही होगी और उस अग्नि मे जीवघात नही होगा?

कई बार ऐसा देखने मे आया है कि प्रतिष्ठाचार्य महोदय ने तो धूप लिखा दी और श्रावक बाजार से बनी हुई धूप ले आये, जबकि उस धूप मे लट, तिरुला आदि दो-इन्द्रिय जीव भी पाये जाते है, लेकिन फिर भी उस धूप की अग्नि मे आहुति देते जाते हैं।

साथ ही मेवा, शक्कर आदि खाद्य पदार्थो से बनी सुगन्धित धूप को अग्नि मे खेते जाते है, जिससे मदिर मे चारो ओर धुआँ भर जाता है, यहाँ तक कि हवन मे बैटने वालो की आखो से आँसू बहने लगते हैं। जब मनुष्यो की यह दशा होती है, तब मक्खी, मच्छर आदि छोटे-छोटे जीवो की क्या दशा होती होगी—यह हमारे प्रतिष्ठाचार्यो की बुद्धि मे क्यो नही आता?

---

1 मोक्षमागप्रकाशक पाँचवाँ अधिकार पृष्ठ ११२

अरे, इस सुगन्धित धूप का धुआँ भर जाने से मक्खी, मच्छर ही नही, राजा वज्रजघ और रानी श्रीमती तक का मरण हो गया था। राजा वज्रजघ के मरण के सन्दर्भ मे पुराणो मे जो उल्लेख मिलते हैं वे इस प्रकार हैं –

"एक दिन राजा वज्रजघ अपनी पत्नी रानी श्रीमती के साथ अपने शय्या गृह की कोमल शय्या पर शयन कर रहे थे। सेवक लोग प्रतिदिन की भाँति धूपघडो मे धूप डालकर शय्यागृह से बाहर निकल गये थे, लेकिन आज वे लोग झरोखो के द्वार खोलना भूल गये थे, इसलिए धूपघडो का धुआँ उसी गृह मे रुककर भर गया था। उस धुएँ से वे पति-पत्नी (राजा वज्रजघ और रानी श्रीमती) मूर्छित हो गये उनके श्वास रुक गये, और उसी रात्रि मे वे दोनो ही सदा के लिए इस लोक से विदा हो गये।"

हम जिस धूप को अग्नि मे डालकर धर्म मानते हैं, महापुराण के रचयिता आचार्य जिनसेन ने तो उस धूप को भोग का कारण कहा है –

भोगागेनापि धूपेन तयोरासीत्परासुता ।
धिगिमान् भोगि भोगाभान् भोगान् प्राणापहारिण ।।

देखहु भोग का कारण जो धूप, ताकरि राजा-रानी (राजा वज्रजघ व रानी श्रीमती) दोऊ मृतक अवस्था कू प्राप्त भये, सो धिक्कार होऊ इन भोगनिकूँ।"।

समझ मे नही आता कि मेवा, खोपरा, शक्कर, घी आदि को अग्नि मे डालने से कौनसा धर्म होगा? यदि अग्नि मे भस्म करने के बजाय वह घी, खोपरा, शक्कर, मेवा आदि किसी गरीब को दे तो पुण्य हो सकता है, परन्तु ये गरीबो को तो नही देगे और मानकषाय के वश अग्नि मे डालते है। इस व्यर्थ के अपव्यय के बारे मे जो लोग जैनो की निन्दा करते हैं, वे यह ठीक ही कहते हैं कि 'लोगो को घी खाने को नही मिल रहा और ये जैन लोग उसे अग्नि मे डालते हैं।'

इसी सन्दर्भ मे वयोवृद्ध प्रसिद्ध विद्वान प० कैलाशचद जी शास्त्री, सिद्धाताचार्य बनारस ने लिखा है –

"अग्नि मे आहुति देकर देवताओ को तृप्त करने की वैदिक विधि इसके मूल मे है। वैदिक धर्म मे अग्नि को देवताओ को मुख कहा है, किन्तु जैन धर्म मे अग्नि न स्वय कोई देवता है और न देवताओ का मुख है। वह तो भस्म कर देने वाली जड वस्तु है। अत उसमे आहुति देकर किसी को तप्त करने का कोई प्रश्न ही नही है। पूजन तो अग्नि मे क्षेपण बिना भी सम्भव हैं।"[2]

---

1 आदिपुराण पर्व ९, छन्द ३०
2 जैन निबन्ध रत्नावली भाग १, पृष्ठ २५ (प्राक्कथन)

इसी प्रकार इस धूप से हवन की अनेक त्रुटियां बताते हुए श्री मिलापचदजी कटारिया ने भी साफ-साफ लिखा है –

"हवन, यह जैनधर्म की मूल सस्कृति नही है। जैनधर्म की मूल चीज है–अन्तरग मे रागद्वेषादि कषाओ की विजय और बाह्य मे जीवदया का पालन, ये दोनो ही हवन मे घटित नही होते है। हवन मे अग्निकायिक जीवो की विराधना होती हैं। दूर-दूर तक फैलने वाले अग्नि के गरम-गरम धुएँ मे वायुकाय आदि जीवो का विघात एव मक्खी-मच्छर आदि उडने वाले छोटे-छोटे त्रस जीवो को बाधा आदि तो प्रत्यक्ष ही दिखती है। साथ ही उसके काले धुएँ से मन्दिर की सफेद दीवारो पर सुन्दर चित्रों, छत्र-चमरो और बहुमूल्य चन्दोवो की भी खासी मिट्टी-पलीद हुये विना नही रहती है। इसमे कभी-कभी आग लगने की सम्भावना भी रहती है।

इस प्रकार हवन से सिवाय हानि के कोई लाभ नही दीखता है। अहिसामय जैनधर्म मे यह निरर्थक सावद्य क्रिया कैसे पनप रही है? आज के जमाने मे घृत, मेवा, मिष्ठान्न, फलादि पदार्थ वेसे ही मँहगाई की पराकाष्ठा तक पहुँचकर जनसाधारण के लिए अत्यन्त दुर्लभ हो गये है। उनको अग्नि मे जलाकर धर्म मानना–इससे वढकर अज्ञानता अन्य क्या हो सकती है?

सिद्धचक्र विधानो मे हजारो रुपयो की सामग्री जलाकर खाक की जाती है। अगर ये ही रुपये दीन-अनाथो के काम मे लगाये जाये तो कितना पुण्य हो। यह भी तो सोचना चाहिये कि अग्नि मे घृतादि जलाने के साथ धर्म का सम्बन्ध कैसे है? अविचारपूर्ण क्रियाओ का कोई फल मिलने वाला नही है। धर्म का असली तत्त्व छिपा जा रहा है और थोथे क्रियाकाण्डो का जोर वढ़ता जा रहा है। विवेकी विद्वान् मन मे सब कुछ जानते हुए भी अल्पज्ञ लोगो की रुख के विरुद्ध कदम उठाने का साहस नही कर रहे,–यह बडे ही परिताप का विषय है।"[1]

पद्मपुराण मे कहा –

"प्रथम तो यज्ञ की कल्पना ही निरर्थक है। दूसरे यदि कल्पना करनी ही है तो विद्वानो को हिंसा द्वारा यज्ञ की कल्पना नही करना चाहिए, उन्हे धर्मयज्ञ ही करना चाहिए। वह इस तरह कि आत्मा यजमान है, शरीर वेदी है, सतोष साकल्य है, त्याग होम है, मस्तक के केश कुशा हैं, प्राणियो की रक्षा दक्षिणा है, शुक्लध्यान द्वारा सिद्धपद की प्राप्ति फल है, सत्य बोलना स्तम्भ है, तप अग्नि है, चञ्चल मन पशु है और इन्द्रियाँ समिधाये हैं–यही धर्मयज्ञ कहलाता है।"

---

1 जैन निबन्ध रत्नावली भाग १, पृष्ठ ८८

इसी सम्बन्ध मे जैन निबध रत्नावली, भाग १ मे सकलित "जैन धर्म और हवन" नामक निबध, जिसमे लेखक ने आचार्यों के प्रमाण और तर्कों से यह सिद्ध कर दिया है कि अग्नि से हवन करना जैनधर्म की मूल सस्कृति नही है। अत जो भी भाई अग्नि से हवन कराते हैं अथवा करते हैं, उन सभी से निवेदन है कि एक बार उस निबन्ध को अवश्य पढ़े, जिससे यह हिंसात्मक प्रवृत्ति बन्द हो तथा पुष्पो से शांतिविसर्जन की पद्धति को ही सभी अपनाये—यही भावना है।

उपदेश ग्रहण करने की पद्धति

"शास्त्रो मे कही निश्चयपोषक उपदेश है, कही व्यवहारपोषक उपदेश है। वहाँ अपने को व्यवहार का आधिक्य हो तो निश्चयपोषक उपदेश का ग्रहण करके यथावत् प्रवर्त्ते और अपने को निश्चय का आधिक्य हो तो तो व्यवहारपोषक उपदेश का ग्रहण करके यथावत् प्रवर्त्ते।

तथा पहले तो व्यवहार श्रद्धान के कारण आत्मज्ञान से भ्रष्ट हो रहा था, पश्चात् व्यवहार उपदेश ही की मुख्यता करके आत्मज्ञान का उद्यम न करे, अथवा पहले तो निश्चय श्रद्धान के कारण वैराग्य से भ्रष्ट होकर स्वच्छन्दी हो रहा था, पश्चात् निश्चय उपदेश की ही मुख्यता करके विषय-कषाय का पोषण करता है।

इस प्रकार विपरीत उपदेश ग्रहण करने से बुरा ही ही होता है।"

—मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृष्ठ २९८

श्री सिद्धचक्र माहात्म्य

श्री सिद्धचक्र गुणगान करो मन आन भाव से प्राणी,
कर सिद्धो की अगवानी।।टेक।।

सिद्धो का सुमरन करने से, उनके अनुशीलन चिन्तन से,
प्रगटै शुद्धात्मप्रकाश, महा सुखदानी s s s।
पाओगे शिव रजधानी।। श्री सिद्धचक्र० ।।१।।

श्रीपाल तत्त्वश्रद्धानी थे, वे स्व-पर भेदविज्ञानी थे,
निज देह-नेह को त्याग, भक्ति उर आनी s s s।
हो गई पाप की हानी।। श्री सिद्धचक्र० ।।२।।

मैना भी आतमज्ञानी थी, जिनशासन की श्रद्धानी थी,
अशुभभाव से बचने को, जिनवर की पूजन ठानी s s s।
कर जिनवर की अगवानी ।। श्री सिद्धचक्र० ।।३।।

भव-भोग छोड योगीश भये, श्रीपाल ध्यान धरि मोक्ष गये,
दूजे भव मैना पावे शिव रजधानी s s s।
केवल रह गई कहानी।। श्री सिद्धचक्र० ।।४।।

प्रभु दर्शन-अर्चन-वन्दन से, मिटता है मोह-तिमिर मन से,
निज शुद्ध-स्वरूप समझने का, अवसर मिलता भवि प्राणी sss।
पाते निज निधि विसरानी ।। श्री सिद्धचक्र० ।।५।।

भक्ति से उर हर्षाया है, उत्सव युत पाठ रचाया है,
जब हरष हिये न समाया, तो फिर नृत्य करन की ठानी sss।
जिनवर भक्ति सुखदानी।। श्री सिद्धचक्र०।।६।।

सब सिद्धचक्र का जाप जपो, उनही का मन मे ध्यान धरो,
नहिं रहे पाप की मन मे नाम निशानी s s s।
बन जाओ शिवपथ गामी।। श्री सिद्धचक्र० ।।७।।

जो भक्ति करे मन-वच-तन से, वह छूट जाय भवबधन से,
भविजन! भज लो भगवान, भगति उर आनी s s s।
मिट जैहे दु खद कहानी।। श्री सिद्धचक्र० ।।८।।

पण्डित रतनचद भारिल्ल, ए—४, बापूनगर, जयपुर—३०२०१५

धन्य धन्य वीतराग वाणी

धन्य धन्य वीतराग वाणी,
अमर तेरी जग में कहानी ।
चिदानन्द की राजधानी,
अमर तेरी जग मे कहानी ।।टेक।।

उत्पाद-व्यय अरु ध्रौव्य स्वरूप,
वस्तु बखानी सर्वज्ञ भूप ।
स्याद्वाद तेरी निशानी,
अमर तेरी जग में कहानी ।।१।।

नित्य-अनित्य अरु एक-अनेक,
वस्तु कथंचित् भेद-अभेद ।
अनेकान्तरूपा बखानी,
अमर तेरी जग में कहानी ।।२।।

भाव शुभाशुभ बन्धस्वरूप,
शुद्ध चिदानन्दमय मुक्तिरूप ।
मारग दिखाती है वाणी,
अमर तेरी जग में कहानी ।।३।।

चिदानन्द चैतन्य आनन्द धाम,
ज्ञानस्वभावी निजातम राम ।
स्वाश्रय से मुक्ति बखानी,
अमर तेरी जग में कहानी ।।४।।

—पण्डित अभयकुमार जैन
शास्त्री, जैनदर्शनाचार्य, एम कॉम
A—4, बापूनगर जयपुर–302025

ॐ नम सिद्धेभ्य

कविवर पं० सन्तलालजी कृत

श्री सिद्धचक्र विधान

मंगलाचरण

दोहा

जिनाधीश शिवईस नमि, सहसगुणित विस्तार ।
सिद्धचक्र पूजा रचो, शुद्ध त्रियोग सभार ।।१।।
नीत्याश्रित धनपति सुधी, शीलादिक गुण खान ।
जिनपद अम्बुज भ्रमर मन, सो प्रशस्त यजमान ।।२।।
देश काल विधि निपुणमति, निर्मल भाव उदार ।
मधुर बैन नयना सुघर, सो याजक निरधार ।।३।।
रत्नत्रयमडित महा, विषय-कषाय न लेश ।
सशयहरण सुहितकरन, करत सुगुरु उपदेश ।।४।।

छप्पय

निर्मल मडप भूमि दरव-मगल करि सोहत ।
सुरभि सरस शुभ पुष्प-जाल, मंडित मन मोहत ।।
यथायोग्य सुन्दर मनोज्ञ, चित्राम अनूपा ।
दीरघ मोल सुडोल, बसन झखझोल सरूपा ।।
हो वित्तसार प्रासुक दरब, सरब अग मनको हरै ।
सो महाभाग आनद सहित, जो जिनेन्द्र अर्चा करै ।।५।।

दोहा

सुर-मुनि मन आनन्दकर, ज्ञान सुधारस धार ।
सिद्धचक्र सो थापहू, विधि-दव-जल उनहार ।।६।।

अडिल्ल

'अर्हं' शब्द प्रसिद्ध अर्द्ध-मात्रिक महा,
अकारादि स्वर मंडित अति शोभा लहा ।
अति पवित्र अष्टांग अर्घ करि लायके,
पूरव दिशि पूजों अष्टांग नमायके।। ७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः अनाहत-पराक्रमाय सिद्धाधिपतये नमः पूर्वदिशि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

वर्ण कवर्ग महान, अष्ट पूर्वविधि अर्घ ले ।
भक्ति भाव उर ठान, पूजों हो आग्नेय दिशि।। ८।।

ॐ ह्रीं अर्हं च छ ज झ ञ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घ्यं०।

वर्ण चवर्ग प्रसिद्ध, वसुविधि अर्घ उतारिके ।
मिलि हैं वसुविधि रिद्धि, दक्षिण दिशि पूजा करौं।। ९।।

ॐ ह्रीं अर्हं क ख ग घ ङ अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये दक्षिणदिशि अर्घ्यं।

वर्ण टवर्ग प्रशस्त, जलफलादि शुभ अर्घ ले ।
पाऊँ सब विधि स्वस्ति, नैऋत्य दिशि अर्चा करौं।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं ट ठ ड ढ ण अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये नैऋत्यादिशि अर्घ्यं०।

वर्ण तवर्ग मनोग, यथायोग्य कर अर्घ धरि ।
मिलि है सब शुभ योग, पूजन करि पश्चिम दिशा।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं त थ द ध न अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये पश्चिमदिशि अर्घ्यं०।

वर्ण पवर्ग सुभाग, करू आरती अर्घ ले।
सब विधि आरति त्याग, वायव दिशि पूजा करा।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं प फ ब भ म अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये वायव्यदिशि अर्घ्यं०।

वर्ण यवर्गी सार, दर्व-अर्घ वसु द्रव्य करि ।
भाव-अर्घ उर धार, उत्तर दिशि पूजा करौं।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं य र ल व अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये उत्तरदिशि अर्घ्यं०।

शेष वर्ण चउ अन्त, उत्तम अर्घ वनाइके ।
नशे कर्म वसु भत, पूजो हो इशान दिशि।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श ष स ह अनाहतपराक्रमाय सिद्धाधिपतये ईशानदिशि अर्घ्यं०।

विनय और विवेक

विनय के विना तो विद्या प्राप्त होती ही नही है, पर विवेक और प्रतिभा भी अनिवार्य है, इनके विना भी विद्यार्जन असम्भव है। गुरु के प्रति अडिग आस्था का भी महत्वपूर्ण स्थान है, पर वह आतक की सीमा तक न पहुचना चाहिए, अन्यथा वह विवेक को कुण्ठित कर देगी।

समागत समस्याओ का समुचित समाधान तो स्वविवेक से ही सम्भव है, क्योकि गुरु की उपलव्धि तो सदा और सर्वत्र सम्भव नही। परम्पराएँ भी हर समस्या का समाधान प्रस्तुत नही कर सकती, क्योंकि एक तो समस्याओ के अनुरूप परम्पराओ की उपलव्धि सदा सम्भव नही रहती दूसरे, परिस्थितियाँ भी तो बदलती रहती है।

यद्यपि विवेक का स्थान सर्वोपरि है, किन्तु वह विनय और मर्यादा को भग करने वाला नही होना चाहिए। विवेक के नाम पर कुछ भी कर डालना तो महापाप है, क्योकि निरकुश विवेक पूर्वजो से प्राप्त श्रुतपरम्परा के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

क्षेत्र और काल के प्रभाव से समागत विकृतियो का निराकरण करना जागृत विवेक का ही काम है, पर इसमे सर्वांग सावधानी अनिवार्य है।

—आप कुछ भी कहो, पृष्ठ३१

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नम श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुण-सयुक्ताय चन्दन० ।।२।।

दीरघ शशि किरण समान, अक्षत ल्यावत हूँ ।
शशिमडल सम बहुमान, पूज रचावत हूँ।।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमू सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।३।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नम श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुण-सयुक्ताय अक्षत० ।।३।।

तुम चरणचन्द्र के पास, पुष्प धरे सोहैं ।
मानू नखत्रन की रास, सोहत मन मोहैं।।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमू सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।४।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नम श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुण-सयुक्ताय पुष्प।।४।।

उत्तम नेवज बहु भांति, सरस सुधा साने ।
अहमिन्द्रन मन ललचाय, भक्षण उमगाने।।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमू सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।५।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नम श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुण-सयुक्ताय नैवेद्य० ।।५।।

फैली दीपन की जोति, अति परकाश करै ।
जिम स्याद्वाद उद्योत, सशय तिमिर हरै।।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमू सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।६।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नम श्रीसम्यक्त्वादि अष्टगुण-सयुक्ताय दीप०।६।।

धरि अग्नि धूपके ढेर, गध उडावत हूँ ।
कर्मो की धूप बखेर, ठोक जरावत हूँ।।
अन्तरगत अष्ट स्वरूप, गुणमई राजत हैं ।
नमू सिद्धचक्र शिव-भूप, अचल विराजत हैं।।७।।

सकल त्रिधा षट् द्रव्य अनन्ता, युगपत जानत हैं भगवता ।
निर आवरण विशद स्वाधीना, ज्ञानानद परम रम लीना।।२।।

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।।२।।

चक्षु अचक्षु अवधि विधि नाशी, केवल दश जोंति परकाशी ।
सकल ज्ञेय युगपत अवलोका, उत्तम दर्श नमू सिद्धो का।।३।।

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नम अर्घ्य० ।।३।।

अन्तराय विधि प्रकृति अपारा, जीवशक्ति घाते निरधारा ।
ते सब घात अतुल बल स्वामी, लसत अखेद सिद्ध प्रणमामी।।४।।

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्याय नम अर्घ्य।।४।।

रूपातीत मन इन्द्रिय नाही, मनपर्यय हू जानत नाही ।
अलख अनूप अमित अविकारी, नमू सिद्ध सूक्षम गुणधारी।।५।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्वाय नम अर्घ्य।।५।।

एक क्षेत्र-अवगाह स्वरूपा भिन्न-भिन्न राजै चिद्रूपा ।
निज-पर-घात विभाव विडारा, नमू सुहित अवगाह अपारा।।६।।

ॐ ह्रीं अवगाहनत्वाय नम अर्घ्य।।६।।

परकृत ऊँच नीच पद नाही, रमत निरतर निजपद माही ।
उत्तम अगुरुलघु गुण भोगी, सिद्धचक्र ध्यावै नित योगी।।७।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्वात्मकजिनाय नम अर्घ्यं।।७।।

नित्य निरामय भवभयभजन, अचल निरतर शुद्ध निरजन ।
अव्याबाध सोइ गुण जानो, सिद्धचक्र पूजन मन मानो।।८।।

ॐ ह्रीं अव्याबाधात्वाय नम अर्घ्य।।८।।

जयमाला

दोहा

जग आरत भारत महा, गारत करि जय पाय ।
विजय आरती तिन कहूँ, पुरुषारथ गुणगाय।।१।।

पद्धडी

जय करण कृपाण सु प्रथम बार, मिथ्यात सुभट कीनो प्रहार ।
दृढ़ कोट विपर्यय मति उलंघि, पायो समकित थल थिर अभग।। १।।
निज-पर विवेक अतर पुनीत, आतम रुचि वरती राजनीत ।
जग विभव विभाव असार एह, स्वातम सुखरस विपरीत देह।। २।।

द्वितीय पूजा

छप्पय

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे ।
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ।।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्वुज तत्त्व संधिधर ।
अग्रभाग मे मत्र अनाहत सोहत अतिवर ।।
पुनि अत ह्री वेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मगल करो ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण श्रीसिद्धपरमेष्ठिने नम षोडशगुणसयुक्तसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पाजलिं क्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।
सिद्धचक्र सो थापहू, मिटै उपद्रव जोग।।२।।
इति यत्रस्थापनार्थं पुष्पाजलिं क्षिपेत्।

हरिगीतिका

हिमशैल धवल महान कठिन पाषाण तुम जस रासतै ।
शरमाय अरु सकुचाय द्रव ह्वै बहो गगा तासतैं।।
सम्बन्ध योग चितार चित भेटार्थ झारी मे भरू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण षोडशगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जल निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर चन्दन आदि अन्तर-बाह्य बहुविधि तप हरै ।
यह कार्य-कारण लखि नमित मम भाव हू उद्यम करै।।

मै हू दुखी भवताप से घसि मलय चरनन ढिग धरू ।
षोडष गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।२।।
ॐ ह्री णमो सिद्धाण षोडशगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने चन्दन०।

सोरभि चमक जिस तरह सह न सकि अम्वुज वसैं सरताल मे ।
शशि गगन वनि नित होत कृश अहिनिश भ्रमै इस ख्याल मे।।
सो अक्षतोघ अखण्ड अनुपम पुज धरि सन्मुख धरू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।अक्षत।।३।।

जग प्रकट काम सुभट विकट कर हट करत जिय घट जगा ।
तुम शील कटक सुघट निकट सरचाप पटक सुभग भगा।।
इम पुष्पराशि सुवास तुम ढिग कर सुयश वहु उच्चरू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।पुष्प।।४।।

जीवन सतावत नहिं अघावत क्षुधा डाइन सी वनी ।
सो तुम हनी, तुम ढिग न आवत, जान यह विधि हम ठनी।।
नेवेद्य के सकेत करि निज क्षुधानाशन विधि करू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।नैवेद्य।।५।।

मैं मोह-अन्ध अशक्त अरु यह विषम भववन है महा ।
ऐसे रूले को ज्ञानदुति विन पार निवारण हो कहाँ।।
सो ज्ञानचक्षु उघार स्वामी दीप ले पायनि परू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।दीप।।६।।

प्रासुक सुगंधित द्रव्य सुन्दर दिव्य घ्राण सुहावनो ।
धरि अग्नि दश दिश वास पूरित ललित धूम्र सुहावनो।।
तुम भक्ति भाव उमग करत प्रसग धूप सु विस्तरू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।धूप।।७।।

चित हरन अचित सुरग रसपूरित विविध फल सोहने ।
रसना लुभावन कल्पतरू के सुर असुर मन मोहने।।
भरि थाल कचन भेंट धरि ससार फल तृष्णा हरू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।फल।।८।।

शुभ नीर वर काश्मीर चदन धवल अक्षत युत अनी ।
वर पुष्पमाल विशाल चरु सुरमाल दीपक दुति मनी।।
वर धूप पक्व मधुर सुफल लै अर्घ अठ विधि सचरू ।
षोडश गुणान्वित सिद्धचक्र चितार उर पूजा करू।।अर्घ्य।।९।।

गीता

निर्मल सलिल शुभवास चन्दन धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत कर्मदल सब दलमलें ।।१०।।

ते क्रमावत नशाय युगपत ज्ञान निर्मलरूप हैं ।
दुख जन्म टाल अपार गुण सूक्षम सरूप अनूप हैं ।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य अछेद शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अभेय चहुँ गुण गेह द्यो हम शुभमती ।।११।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये नमः महार्घ्यं०।

सोलह गुण सहित अर्घ्य

त्रोटक

दर्शन आवरणी प्रकृति हनी, स्थिति अवलोक सुभाव थनी ।
इक साथ समान लखो सब ही नमूं सिद्ध अनंत दृगन अबही ।। १।।

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनाय नमः अर्घ्यं०।

विधि ज्ञानावरण विनाश कियो निज ज्ञानस्वभाव विकाश लियो ।
समयातर सब विशेष जनो नम ज्ञान अनन्त सु सिद्ध तनो ।।२।।

ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं०।

सुख अमृत पीवत स्वेद न हो, निज भाव विराजत खेद न हो ।
अनमान महाबल धारत है हम पूजत पाप विडारत है ।। ३।।

ॐ ह्रीं अतुलवीर्याय नमः अर्घ्यं०।

विपरीत सभीत पराश्रितता अतिरिक्त धरै न करै थिरता ।
पर की अभिलाष न सेवत है निज भाविक आनन्द वेवत हैं ।। ४।।

ॐ ह्रीं अनन्तसुखाय नमः अर्घ्यं०।

निज आत्म विकाशक बोध लह्यो भ्रम को परवेश न लेश कह्यो ।
निजरूप सुधारस मग्न भये हम सिद्धन शुद्ध प्रतीति नये ।। ५।।

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्वाय नमः अर्घ्यं०।

निज भाव विडार विभाव न हो, गमनादिक भेद विकार न हो ।
निजस्थान निरूपम नित्य बसे, नमूं सिद्ध अनाचलरूप लसे ।। ६।।

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं०।

चौपाई

गुण पर्यय परणतिके भेद, अति सूक्षम असमान अछेद ।
ज्ञान गहे, न कहे जड बैन, नमो सिद्ध सूक्षम गुण ऐन।। ७।।

ॐ ह्रीं अनन्तसूक्ष्मत्वाय नम अर्घ्यं०।

जन्म-मरण युत धरे न काय, रोगादिक सक्लेश न पाय ।
नित्य निरजन निर-अविकार, अव्याबाध नमो सुखकार।। ८।।

ॐ ह्रीं अव्याबाधाय नम अर्घ्यं०।

एक पुरुष अवगाह प्रजत, राजत सिद्ध-समूह अनत ।
एकमेक बाधा नहिं लहैं, भिन्न-भिन्न निजगुण मे रहैं।। ९।।

ॐ ह्रीं अवगाहनगुणाय नम अर्घ्यं०।

काययोग पर्यापति प्रान, अनविधि छिन छिन होवे हान ।
जरा कष्ट जग प्रानी लहै, नमो सिद्ध यह दोष न सहै।।१०।।

ॐ ह्रीं अजराय नम अर्घ्यं०।

काल-अकाल प्राणको नाश, पावै जीव मरनको त्रास ।
तासौं रहित अमर अविकार, सिद्ध-समूह नमू सुखकार।।११।।

ॐ ह्रीं अमराय नम अर्घ्यं०।

गुण-गुण प्रति है भेद अनन्त, यो अथाह गुणयुत भगवत ।
है परमाण अगोचर तेह, अप्रमेय गुण बदू एह।।१२।।

ॐ ह्रीं अप्रमेयाय नम अर्घ्यं०।

भुजगप्रयात

अनूकर्मतैं फर्स वर्णादि जानो, किसी एक वीशेष को किं प्रमानो ।
पराधीन आवर्ण अज्ञान त्यागी, नमू सिद्ध विगतेन्द्रिय ज्ञान भागी।।१३।।

ॐ ह्रीं अतीन्द्रियज्ञानधारकाय नम अर्घ्यं०।

त्रिधा भेद भावित महाकष्टकारे, रमण भावसो आकुलित जीव सारे ।
निजानद रमणीय शिवनार स्वामी, नमो पुरुष आकृति सवै सिद्ध नामी।।१४।।

ॐ ह्रीं अवेदाय नम अर्घ्यं०।

विशेष सकल चेतना धार माही, भये लै भली विधि रहो भेद नाही ।
तथा हीन अधिकाय को भाव टारी, नमो सिद्ध पूरणकला ज्ञानधारी।१५।।

ॐ ह्रीं अभेदाय नम अर्घ्यं०।

निजानन्दरस स्वाद सु लीन भया, मगन [illegible] निरन्ता ।
महिमा कहे आपका पार नाहीं, धन आपका आपही आपमाहीं ॥१६॥

ॐ ह्रीं निजार्थनिजिनाय नमः अर्घ्यं०।

जयमाल

दोहा

परम ब्रह्म परमात्मा, [illegible] फन्द ।
जग प्रपंच विरहित सदा, नमों सिद्ध सुखकन्द ॥१॥

त्रोटक

सुखकारन दुख विडारन हो, वश डारन राग निवारन हो ।
भवितारन पूरणकारण हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥२॥
समयामृत पूरित देव सही, पर आकृत मूरति लेश नहीं ।
विपरीत विभाव निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥३॥
अखिना अभिना अछिना सपरा, अभिदा अखिदा अविनाशवरा ।
यमजाम जरा दुखजारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥४॥
निर-आश्रित स्वाश्रित वासित हो, पर आश्रित खेद विनाशित हो ।
विधि धारन हारन पारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥५॥
असुधा अछुधा अद्विधा अविध, अक्षुधा सुसुधा सुबुधा सुनिध ।
विधि कानन दहन हुताशन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥६॥
शरन चरन वरन करन, धरन चरन मरन हरन ।
तरन भव-वारिधि तारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥७॥
भववास त्रास विनाशन हो, दुखरास विनाश हुताशन हो ।
निज दासन त्रास निवारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥८॥
तुम ध्यावत शाश्वत व्याधि दहे, तुम पूजत ही पद पूज लहे ।
शरणागत 'संत' उभारन हो, सब सिद्ध नमों सुखकारन हो ॥९॥

दोहा

सिद्धवर्ग गुण अगम है, शेष न पावै पार ।
हम किह विधि वरणन करें, भक्ति भाव उर धार ॥१०॥

ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनज्ञानादिषोडशगुणयुक्त सिद्धेभ्यो महार्घ्यं०।

इत्याशीर्वाद

(यहाँ १०८ वार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करें।)

तृतीय पूजा

छप्पय

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार बिराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अत सु छाजे ।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्व संधिधर,
अग्रभागमे मत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अत ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मगल करो।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण द्वात्रिंशत्गुणसहितविराजमान श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर सवौष्ट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत)

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।
सकल सिद्ध सो थापहू, मिटै उपद्रव योग।।

इति यत्रस्थापनार्थं पुष्पाजलिं क्षिपेत्।

अथाष्टक

प्रभु पूजो रे भाई, सिद्धचक्र बत्तीसगुण, प्रभु पूजो रे भाई ।
भवत्रासित अकुलित रहै, भवि कठिन मिटन दुखताई।।
विमल चरण तुम सलिल धार दे, पायो सहज उपाई।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् जन्मजरा रोगविनाशनाय जल।।१।।

जगवदन परसत पद चन्दन, महाभाग उपजाई ।
हरिहर आदि लोकवर उत्तम, कर धर शीश चढ़ाई।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चन्दन० ।।२।।

शिवनायक पूजन लायक है, यह महिमा अधिकाई ।
अक्षयपद दायक अक्षत यह, साचो नाम धराई ।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद प्राप्तये अक्षत।।३।।

कामदाह अति ही दुखदायक, मम उर में न टराइ ।
ताहि निवारण पुष्प भेट धरि, मागू वर शिवराइ ।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामवाण विनाशनाय पुष्पं० ।।४।।

चरुवर प्रचुर क्षुधा नहिं मेटत पूर परो इन ताइ ।
भेट करत तुम इनहू न भेटू, रहूँ चिरकाल अघाइ।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं० ।।५।।

दिव्य रत्न इस देश-कालमे, कहै कौन है नाई ।
तुम पद भेटे दीप प्रकट यह, चिंतामणि पद पाई।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार-विनाशाय दीपं० ।।६।।

धूप हुताशन वासन मे धरि, दसदिश वास वसाई ।
तुम पद पूजत या विधि, वसु विधि ईधन जर हो जाई ।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्म-दहनाय धूपं० ।।७।।

सर्वोत्तम फल द्रव्य ठान मन, पूजू हू तुम पाई ।
जासौं जजैं मुक्तिपद पइये, सर्वोत्तम फलदाई ।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफल-प्राप्तये फलं० ।।८।।

वसुविधि अर्घ देऊ तुम मम द्यो वसुविधि गुण सुखदाई ।
जासु पास वसु त्रास न पाऊ, 'सन्त' कहे हर्षाई ।।प्रभु पूजो रे०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वात्रिंशत्गुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं०।।९।।

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमे चरु पचुर स्वाद सुविधि घनी ।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कमदल मच दलमले ।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं ।।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय मेय अमेय चहुं गुण गेह, द्यो हम शुभमती ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण द्वात्रिंशत् गुणसयुक्ताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं० ।

सहित बत्तीस गुण अर्घ्य

पद्धडी

चेतन विभाव पुद्गुल विकाल, है शुद्ध बुद्ध तिस निमित टार ।
दृगवोध सुरूप सुभाव एह, नमू शुद्ध चेतना सिद्ध देह ।।१।।

ॐ ह्रीं शुद्ध चेतनाय नम अर्घ्यं० ।

मति आदि भेद विच्छेद कीन, क्षायक विशुद्ध निज भाव लीन ।
निरपेक्ष निरन्तर निर्विकार, नमू शुद्ध ज्ञानमय सिद्ध सार ।।२।।

ॐ ह्रीं शुद्धज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।

सर्वांग चेतना व्याप्तरूप, तुम हो चेतन व्यापक सरूप ।
पर लेश न निज परदेश माहि, नमू सिद्ध शुद्ध चिद्रूप ताहि ।।३।।

ॐ ह्रीं शुद्धचिद्रूपाय नम अर्घ्यं० ।

अन्तरविधि उदय विपाक टार, तुम जातिभेद वाहिज विडार ।
निज परिणिति मे नहिं लेश शेष, नमू शुद्धरूप गुणगण विशेष ।।४।।

ॐ ह्रीं शुद्धस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

रागादिक परिणति को विध्वंश, आकुलित भाव राखो न अंश ।
पायो निज सहज स्वरूप भाव, नमू सिद्धवर्ग घर हिये चाव ।।५।।

ॐ ह्रीं परम शुद्धस्वरूपभावाय नम अर्घ्यं० ।

दोहा

निज ज्ञान म ना [illegible] निजानन्द थान ।
नमू शुद्ध दृढ़ गुण [illegible] जिनराज भगवान ।।६।।
ॐ ह्रीं शुद्धदृढाय नम अर्घ्यं०।
निज आवर्तन म [illegible] निज [illegible] ।
नमू शुद्ध आवर्तकी [illegible] निज [illegible] अज्ञान ।।७।।
ॐ शुद्ध ह्रीं शुद्धआवर्तकाय नम अर्घ्यं०।
परकृत कर उपज्या नहीं ज्ञानादिक निज भाव ।
नमो सिद्ध निज अमलपद पाया [illegible] सभाव ।।८।।
ॐ ह्रीं शुद्धस्वयभवे नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

निज सिद्ध अनन्त चतुष्ट पाय निज शुद्ध-चेतनापज काय ।
निज शुद्ध सब पायो सयोग नम सिद्धराज सु शुद्ध जोग ।।९।।
ॐ ह्रीं शुद्धयोगाय नम अर्घ्यं०।
एकेन्द्रिय आदिक जातिभेद, हीनाधिक नामा प्रकृति छेद ।
सपूरण लब्धि विशुद्ध जात, हम पूज है पद जोर हाथ ।।१०।।
ॐ ह्रीं शुद्धजाताय नम अर्घ्यं०।

दोहा

महातेज आनन्दघन, महातेज परताप ।
नमो सिद्ध निजगुण सहित, दिपे अनूपम आप ।।११।।
ॐ ह्रीं शुद्धतपसे नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

वर्णादिक को अधिकार नाहिं, सस्थान आदि आकार नाहिं ।
अति तेजपिंड चेतन अखड, नमू शुद्ध मूर्तिक कर्मखड ।।१२।।
ॐ ह्रीं शुद्धमूर्तये नम अर्घ्यं०।

वाहिज पदार्थ को इष्टमान, नहिं रमत ममत तासो जुठान ।
निज अनुभवरस मे सदालीन, तुम शुद्ध सुखी हम नमन कीन ।।१३।।
ॐ ह्रीं शुद्धसुखाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

धर्म अर्थ अरु काम बिन, अन्तिम पौरुष साध ।
भये शुद्ध पुरुषारथी, नमूं सिद्ध निरबाध।।१४।।

ॐ ह्रीं शुद्धपौरुषाय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

पुद्गल निरमापित वर्ण युक्त, विधि नाम रचित तासो विमुक्त ।
पुरुषाकित चेतनमय प्रदेश, ते शुद्ध शरीर नमूं हमेश।।१५।।

ॐ ह्रीं शुद्धशरीराय नम. अर्घ्यं०।

दोहा

पूरण केवलज्ञान-गम, तुम स्वरूप निर्बाध ।
और ज्ञान जाने नही, नमो सिद्ध तज आध।।१६।।

ॐ ह्रीं शुद्धप्रमेयाय नम अर्घ्यं०।

दरशन ज्ञान सुभेद है, चेतन लक्षण योग ।
पूरण भई विशुद्धता, नमो शुद्ध उपयोग।।१७।।

ॐ ह्रीं शुद्धोपयोगाय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

परद्रव्य जनित भोगोपभोग, ते खेदरूप प्रत्यक्ष योग ।
निजरस स्वादन है भोगसार, सो भोगो तुम हम नमस्कार।।१८।।

ॐ ह्रीं शुद्धभोगाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

निर्ममत्व युगपत लखो, तुम सब लोकालोक ।
शुद्ध ज्ञान तुमको लखो, नमो शुद्ध अवलोक।।१९।।

ॐ ह्रीं शुद्धावलोकाय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

निरइच्छुक मन वेदी महान, प्रज्वलित अग्नि है शुक्लध्यान ।
निर्भेद अर्घ दे मुनि महान, तुम ही पूजत अरहत जान।।२०।।

ॐ ह्रीं प्रज्वलितशुक्लध्यानाग्निजिनाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

आदि-अन्त वर्जित महा, शुद्ध द्रव्य की जात ।
स्वयंसिद्ध परमात्मा, प्रणमूं शुद्ध निपात।।२१।।

ॐ ह्रीं शुद्धनिपाताय नम अर्घ्यं०।

लोकालोक अनन्तवे, भाग वमो तुम आन ।
ये तुमसो अति भिन्न है, शुद्ध गर्भ यह जान।।२२।।

ॐ ह्रीं शुद्धगर्भाय नम अर्घ्यं०।

लोकशिखर शुभ थान है, तथा निजातम वास ।
शुद्ध वास परमात्मा, नमो सुगुण की रास।।२३।।

ॐ ह्रीं शुद्धवासाय नम अर्घ्यं०।

अति विशुद्ध निज धर्म मे, वसत नशत सब खेद ।
परमवास नमि सिद्धको, वासी वास अभेद।।२४।।

ॐ ह्रीं विशुद्धपरमवासाय नम अर्घ्यं०।

बहिरतर द्वै विधि रहित, परमातम पद पाय ।
निरविकार परमात्मा, नमूं नमूं सुखदाय।।२५।।

ॐ ह्रीं शुद्धपरमात्मने नम अर्घ्यं०।

हीन अधिक इक देश को, विकल विभाव उछेद ।
शुद्ध अनन्त दशा लई, नमूं सिद्ध निरभेद।।२६।।

ॐ ह्रीं शुद्धअनन्ताय नम अर्घ्यं०।

त्रोटक

तुम राग-विरोध विनाश कियो, निजज्ञान सुधारस स्वाद लियो ।
तुम पूरण शांति विशुद्ध धरो, हमको इकदेश विशुद्ध करो।।२७।।

ॐ ह्रीं शुद्धशाताय नम अर्घ्यं०।

विद पंडित नाम कहावत है, विद अन्त जु अन्तहि पावत है ।
निजज्ञान प्रकाश सु अन्त लहो, कुछ अश न जानन माँहि रहो।।२८।।

ॐ ह्रीं शुद्धविदताय नम अर्घ्यं०।

वरणादिक भेद विडारन हो, परिणाम कषाय निवारन हो ।
मन इन्द्रिय ज्ञान न पावत ही, अति शुद्ध निरूपम ज्योति मही।।२९।।

ॐ ह्रीं शुद्धज्योतिजिनाय नम अर्घ्यं०।

जन्मादिक व्याधि न फेरि धरो, मरणादिक आपद नाहिं वरो ।
निर्वाण महान विशुद्ध अहो, जिन-शासन मे परसिद्ध कहो।।३०।।

ॐ ह्रीं शुद्धनिर्वाणाय नम अर्घ्यं०।

कर्म अन्त न गभ लियो फिरके, जनमे शिववास जनम धरके ।
जिनको फिर गर्भ न हो क्वहू शिवराय कहाय नमू अव हू।।३१।।

ॐ ह्रीं शुद्धसदर्भगर्भाय नम अर्घ्यं०।

जग जीवन पाप नशायक हो, तुम आप महा सुखनायक हो ।
तुम मगल मूरति शांति मही, सव पाप नशे तुम पूजत ही।।३२।।

ॐ ह्रीं शुद्धशाताय नम अर्घ्यं०।

जयमाला

दोहा

पच परमपद ईश है, पचमगति जगदीश ।
जगतप्रपच रहित वसे, नमू सिद्ध जग ईश।।
परम व्रह्मा परमातमा, परम ज्योति शिवथान ।
परमातम पद पाइयो, नमो सिद्ध भगवान।।१।।

कामिनी मोहन

जन्ममरण-कष्ट को टारि अमरा भये, जरादि रोगव्याधि परिहार अजरा भये ।
जय द्विविधि कर्ममल जार अमला भये, जय दुविधि टार ससार अचला भये।।
जय जगतवास तज जगतस्वामी भये, जय विना नाम थिर परमनामी भये ।
जय कुवुद्धिरूप तजि सुवुद्धिरूपा भये, जय निषधदोष तज सुगुण भूपा भये।।
कर्मरिपु नाशकर परम जय पाइए, लोकत्रयपूरि तुम सुजस घन छाइये ।
इन्द्र नागेन्द्र धर शीश तुम पद जजैं, महा वैरागरस पाग मुनिगण भजैं।।
विघनवन दहन को अघन घन पौन हो, सघन गुणरासके वासको भौन हो ।
शिवतिय वशकरन मोहिनी मत्र हो, काल क्षयकार वेताल के यन्त्र हो।।
कोटियित क्लेश को मेटि शिवकर रहो, उपल की नकल हो अचल इकथल रहो ।
स्वप्न मे हू न निज अर्थ को पावही, जे महा खल न तुम ध्यानधरि ध्यावही।।
आपके जाप विन पाप सव भेटही, पाप की ताप को पाप कव मेटही ।
'सत' निज दास की आस पूरी करो, जगत से काढ़ निजचरण मे ले धरो।।

घत्ता

जय अमल अनूप, शुद्ध स्वरूप, निखिल निरूप धर्मधरा ।
जय विघन नशायक, मंगलदायक, तिहुं जगनायक परमपरा ।।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये नमः द्वात्रिंशत्गुणसंयुक्तसिद्धेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं० ।

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करना चाहिये।)

आज नहीं तो कल

आत्मानुभवी सत्पुरुषों के सम्पर्क में आकर शुद्धात्मतत्त्व के प्रतिपादक शास्त्रों को पढ़कर आत्मा की चर्चा-वार्ता करना अलग बात है और शुद्धात्मा का अनुभव करना अलग।

अधिकांश जगत तो गतानुगतिक ही होता है। जो जिसप्रकार के वातावरण में रहता है, उसीप्रकार की बातें करने लगता है, व्यवहार करने लगता है, परन्तु वस्तु की गहराई तक बहुत कम लोग पहुँच पाते हैं अधिकांश तो हाँ में हाँ मिलानेवाले और ऊपर से वाह-वाह करनेवाले ही होते हैं।

जो लोग तत्त्व की गहराई तक पहुँच जाते हैं, उन्हें तो परमतत्त्व की प्राप्ति हो ही जाती है, किन्तु जो अपनी स्थूल बुद्धि के कारण परमतत्त्व को प्राप्त नहीं कर पाते हैं, उन्हें भी इतना लाभ तो होता ही है कि वे जगत के वासनामय कषायमय विषाक्त वातावरण से तो बहुत-कुछ बचे रहते हैं, उनका जीवन सहज सात्त्विक बना रहता है, परिणामों में भी निर्मलता बनी रहती है।

तथापि यदि अच्छी होनहार हो तो काल पाकर उनका भी पुरुषार्थ जागृत हो जाता है और आज नहीं तो कल वे भी निज तत्त्व तक पहुँच ही जाते हैं।

—सत्य की खोज, अध्याय ३४, पृष्ठ १८९

चतुर्थ पूजा

छप्पय

ऊरघ अधो सु रेफ संबिदु हकार बिराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग मे मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अत ही बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मगल करो।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण चतु:षष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणम्। (पुष्पाजंलि क्षिपेत)

दोहा

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्मरहित नीरोग ।
सिद्धचक्र सो थापहू, मिटै उपद्रव योग।।
(इति यत्रस्थापनार्थं पुष्पाजलि क्षिपेत्।)

सिद्धगण पूजो हरषाई, चौंसठि गुणनामा विधि माला ।
सुमरो सुखदाई, सिद्धगण पूजोरे भाई।।अचरी।।
त्रिभुवन उपमा वास लखै, तुम पद-अम्बुज माई।।
निर्मल जल की धार देहु, अवशोष करण ताई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोगविनाशनाय जल०।।१।।

तुम पद अम्बुज वास लेन मनु, चन्दन मन भाई ।
निज सो गुणाधिक्य सगति को, लहि मन हरषाई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठिगुणसहित श्री सिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चदन०।।२।।

क्षीरज धान सुवासित नीरज, कर मो छरलाई ।
अगुलसे तदुलमो पूजत, अक्षय पद पाई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षत० ।।३।।

धूलिमार छवि हरण विवर्जित, फूलमाल लाई ।
कामशूल निरमूल करणको, पूजहू तुम पाई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं श्रीचतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामवाण विनाशनाय पुष्प० ।।४।।

भूखागार अक्षीण रमी हू, पूरति है नाइ ।
चरु लाय तुम पद पूजत हो, पूरन शिवराइ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्य० ।।५।।

दीपनि प्रति तुम पद नित पूजत, शिवमारग दरशाई ।
घोर अध ससार हरण की, भली सूझ पाई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहाधकार-विनाशनाय दीप० ।।६।।

कृष्णागरु कर्पूर पूर घट, अगनी से प्रजलाई ।
उडै धूम यह, उडे किधो जर करमन की छाइ।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूप० ।।७।।

मधुर मनोग सु प्रासुक फल सो, पूजो शिवराई ।
यथायोग विधि फल को दे गुण, फल की अधिकाई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल०।।८।।

निरघ उपावन पावन वसुविधि, अर्घ हर्ष ठाई ।
भेट धरत तुम पद मैं पाऊ, निर-आकुलताई।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं चतु षष्ठिगुणसहित-श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुख-प्राप्तये अर्घ्य०।।९।।

गीता छन्द

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमैं चरु, प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।।
वर दीप माल उजाल धूपायन, रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले ।।१।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं ।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती ।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हंतजिनादिसिद्धेभ्यो नम पूर्णार्घ्य।

अथ चौसठ गुण अर्घ्यं

(चाल – आलोचना पाठ)

चउ घाती कर्म नशायो, अरहत परम पद पायो ।
द्वै धर्म कह्यो सुखकारा, नमू सिद्ध भए अविकारा ।। १।।

ॐ ह्रीं अरहत-जिनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

सक्लेश भाव परिहारी, भए अमल अवधि बल धारी ।
सो अतिशय केवलज्ञाना, उपजाय लियो शिवथाना ।। २।।

ॐ ह्रीं अवधिजिनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

निर्मल चारित्र समारा, परमावधि पटल उघारा ।
केवल पायो तिस कारण, नमू सिद्ध भये जग तारण ।। ३।।

ॐ ह्रीं परमावधिजिनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

वर्द्धमान विशद परिणामी, सर्वावधि के हो स्वामी ।
अन्तिम वसुकर्म नसाया, नमू सिद्ध भये सुखदाया ।। ४।।

ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

जिस अन्त अविध को नाही, तुम उपजायो पद ताही ।
निर्मल अवधी गुणधारी, सब सिद्ध नमू सुखकारी ।। ५।।

ह्रीं अनन्तावधिजिनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

तप बल महिमा अधिकाई, बुद्धि कोष्ठ रिद्धि उपजाई ।
श्रुत ज्ञान कोष्ठ भडारी, नमू सिद्ध भये अविकारी ।। ६।।

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धिऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

ज्यो बीज फले वहुरासी, त्यो छिन ही वहु अभ्यासी ।
यह पावत ही योगीशा, भये सिद्ध नमू शिव ईशा।। ७।।

ॐ ह्रीं बीजवृद्धि ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

पदमात्र समस्त चितारे, यह रिद्धि पद अनुसारे ।
यह पाय यतीश्वर ज्ञानी, भये सिद्ध नमू शिवथानी।। ८।।

ॐ ह्रीं पादानुसारिणिऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

जो भिन्न-भिन्न इक लारै, शव्दन सुन अर्थ विचारै ।
यह ऋद्धि पाय सुखदाता, नमू सिद्ध भये जगत्राता।। ९।।

ॐ ह्रीं सभिन्नसश्रोतृऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

मति श्रुत अर अवधि अनूपा, विन गुरु के सहज सरूपा ।
भयो स्वयबुद्ध निज ज्ञानी, नमू सिद्ध भये सुखदानी।।१०।।

ॐ ह्रीं स्वयबुद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

जो पाय न पर उपदेशा, जाने तप ज्ञान विशेषा ।
प्रत्येकबुद्ध गुण धारी, भये सिद्ध नमू हितकारी।।११।।

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्ध-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

गणधर से समकित धारी, तुम दिव्यध्वनि अनुसारी ।
ज्ञानिन सिरताज कहाये, भये सिद्ध सुजस हम गये।।१२।।

ॐ ह्रीं बोधितबुद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

मन योग सरलता धारै, तिस अन्तर भेद उघारै ।
जो होय ऋजुमति ज्ञानी, नमू सिद्ध भये सुखदानी।।१३।।

ॐ ह्रीं ऋजुमति-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

बाके मन की सब बाता, जाने सो विपुल कहाता ।
तुम पाय भये शिवधामी, नमू सिद्धराज अभिरामी।।१४।।

ॐ ह्रीं विपुलमति-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

सुर-विद्या को नही चाहैं, निज चारित विरद निवाहैं ।
दस पूर्व ऋद्धि यह पायो, भये सिद्ध मुनिन गुण गायो।।१५।।

ॐ ह्रीं दशपूर्वकऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

चौदह पूरव श्रुतज्ञानी, जाने परोक्ष परमानी ।
प्रत्यक्ष लखो तिस सारू, भये सिद्ध हरो अघ म्हारू।।१६।।

ॐ ह्रीं चौदहपूर्व-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं।

सुन्दरी

ज्योतिषादिक लक्षण जान कैं, शुभ अशुभ फल कहत बखानिकै ।
निमित ऋद्धि प्रभाव न अन्यथा, होय सिद्ध भये प्रणमू यथा।।१७।।

ॐ ह्रीं अष्टागनिमित्त-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

बहु विधि अणिमादिक ऋद्धि जू, तप प्रभाव भई तिन सिद्धि जू ।
निष्प्रयोजन निजपद लीन हैं, नमू सिद्ध भये स्वाधीन हैं।।१८।।

ॐ ह्रीं विवर्ण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

भूमि जल जतु जिय ना हरैं, नमू ते मुनि शिवकामिनी वरैं ।
नैकु नही बाधा परिहार हो, नमू सिद्ध सभी सुखकार हो।।१९।।

ॐ ह्रीं विज्जाहरण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।।

जघ पर दो हाथ लगावही, अन्तरीक्ष पवनवत् जावही ।
पाय ऋद्धि महामुनि चारणी, यथायोग्य विशुद्ध विहारणी।।२०।।

ॐ ह्रीं चारण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नमा अर्घ्यं०।

खग समान चलैं आकाश मे, लीन नित निज धर्म प्रकाश मे ।
शुद्ध धारण करि निज सिद्धता, पाइयो हम नमन करै यथा।।२१।।

ॐ ह्रीं आकाशगामिनि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

वाद विद्या फुरत प्रमान ही, वज्रसम परमतगिरि हानही ।
सब कुपक्षी दोष प्रगट करैं, स्याद्वाद महादुति को धरैं।।२२।।

ॐ ह्रीं परामर्श-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

विषम जहर मिला भोजन करैं, लेत ग्रासहि तिस शक्ती हरैं ।
ते महामुनि जग सुखदाय जू, हम नमे तिन शिवपद पाय जू।।२३।।

ॐ ह्रीं आशीविष-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

जो महाविष अति परचण्ड हो, दृष्टि करि तिन कीने खण्ड हो ।
सो यतीश्वर कर्म विडारकैं, भये सिद्ध नमू उर धारकैं।।२४।।

ॐ ह्रीं दृष्टिविषविष-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

अनशनादिक नित प्रति साधना, मरणकाल तई न विराधना ।
उग्र तप करि वसुविधि नासतैं, हम नमे शिवलोक प्रकाशतैं।।२५।।

ॐ ह्रीं उग्रतप-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

वढति नित प्रति सहज प्रभावना, उग्र तप करि क्लेश न पावना ।
दीप्ति तप करि कर्म जरायक, भये सिद्ध नमू सिर नायकै।।२६।।

ॐ ह्रीं दीप्ततप-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

अन्तराय भये उत्सव वढे, वाल चन्द्र समान कला चढे ।
वृद्ध तप की ऋद्धि लहै यती, भये सिद्ध नमत सुख हो अती।।२७।।

ॐ ह्रीं तपोवृद्धि-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

सिंहक्रीडित आदि विधानते, नित वढावत तप विधि मानते ।
महामुनीश्वर तप परकाशते, नमू मुक्त भये जगवासते।।२८।।

ॐ ह्रीं महातपो-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

शिखर-गिरि ग्रीषम, हिम सर-तटै, तरु निकट पावस निजपद रटैं ।
घोर परिषह करि नाही हटैं, भये सिद्ध नमत हम दुख कटैं।।२९।।

ॐ ह्रीं घोरतपो-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

महाभयकर निमित मिलै जहा, निर्विकार यती तिष्ठैं तहा ।
महापराक्रम गुण की खान हैं, नमो सिद्ध जगत सुखदान है।।३०।।

ॐ ह्रीं घोरगुण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

सघन गुण की रास महायती रत्नरशि समान दिपै अती ।
शेष जिन वर्णन करि थकि रहै, नमू सिद्ध महापद को लहै।।३१।।

ॐ ह्रीं घोरगुणपरिक्रमाण-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

अतुल वीर्य धनी हन काम को, चलत मन न लखत सुर-वाम को ।
बालब्रह्मचारी योगीश्वरा, नमू सिद्ध भये वसुविधि हरा।।३२।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मचर्य-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

सकल रोग मिटै सस्पर्शते, महा यतीश्वर के आमर्शते ।
औषधि यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३३।।

ॐ ह्रीं आमर्षऋद्धि सिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

मूत्र मे अमृत अतिशय बसे, जा परसतैं सब वयाधी नसे ।
औषधी यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३४।।

ॐ ह्रीं आमोसिय-औषधि-ऋद्धि सिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

तन पसीजत जल-कण लगतही, रोग व्याधि सर्व जन भगतही ।
औषधि यह ऋद्धि प्रभावना, भये सिद्ध नमत सुख पावना।।३५।।

ॐ ह्रीं जलोसियऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

हस्तकमल मे अन्न मधुर रस देत है,
मधुकर सम जिय वचन गध को लेत है ।
मधुश्रावी यह ऋद्धिभई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजू तिन पाय जू।।४२।।

ॐ ह्रीं मधुस्रावी-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

अमृत सम आहार होय कर आयके,
वचनामृत दे सुक्ख श्रवण मे जायके ।
आमियरस यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजू तिन पाय जू।।४३।।

ॐ ह्रीं आमियरसऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

जिस बासन जिस थान आहार करैं यती,
चक्री सेना खाय अखै होवे अती ।
अक्षीणरसी यह ऋद्धि भई सुखदाय जू,
भये सिद्ध सुखदाय जजू तिन पाय जू।।४४।।

ॐ ह्रीं अक्षीणरस-ऋद्धिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

सोरठा

सिद्धरास सुखदाय, वर्धमान नितप्रति लसे ।
नमू ताहि सिर नाय, वृद्ध रूप गुण अगम है।।४५।।

ॐ ह्रीं बड्ढमाण सिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

रागादिक परिणाम, अन्तर के अरि नाशके।
लहि अरहत सु नाम, नमो सिद्धपद पाइया।।४६।।

ॐ ह्रीं अरहन्तसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

दो अन्तिम गुणथान, भाव-सिद्ध इस लोक मे ।
तथा द्रव्य-शिवथान, सर्व सिद्ध प्रणमू सदा।।४७।।

ॐ ह्रीं णमो लोए सर्वसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

शत्रु व्याधि भय नाहिं, महावीर धीरज धनी ।
नमू सिद्ध जिननाह, सतनिके भवभय हरैं।।४८।।

ॐ ह्रीं भगवते महावीरवड्ढमाणाय नम अर्घ्यं०।

स्वय सिद्ध भगवान, ज्ञानभूत परकाशमय ।
लसत नमू मन आन, मम उर चिंता दुख हरो।।५९।।
ॐ ह्रीं णमो स्वयभूसिद्धाय नम अर्घ्यं०।

मन इन्द्रिय सो भिन्न, मन इन्द्री परकाश कर ।
सोई ब्रह्म अखिन्न, साधित सिद्ध भये नमू।।६०।।
ॐ ह्रीं णमो ब्रह्मसिद्धायनम अर्घ्यं०।

द्रव्य अनन्त गुणात्म, परणामी परसिद्ध के ।
सोई पद निज-आत्म, साधत सिद्ध अनत गुण।।६१।।
ॐ ह्रीं णमो अनन्तगुणसिद्धाय नम अर्घ्यं०।

सर्व तत्वमय पर्म, गुण अनन परमातमा ।
सो पायो निजधर्म, परम सिद्ध तिनको नमू।।६२।।
ॐ ह्रीं णमो परमानन्तसिद्धाय नम अर्घ्यं०।

लोक शिखर के वास, पायो अविचल थान निज ।
सर्व लोक परकाश, ज्ञानज्योति तिनको नमो।।६३।।
ॐ ह्रीं लोकाग्रवासिसिद्धाय नम अर्घ्यं०।

काल विभाग अनादि, शास्वत रूप विराजते ।
याते नहिं सो आदि, नमि अनादि सिद्धान को।।६४।।
ॐ ह्री णमो अनादिसिद्धाय नम अर्घ्यं०।

जयमाला

दोहा

तीर्थंकर त्रिभुवन धनी, जापद करत प्रणाम ।
हम किह मुख वर्णन करै, तिन महिमा अभिराम।।१।।

चौपाई

जय भवि-कुमुदन मोदन चदा, जय दिनन्द त्रिभुवन अरविंदा ।
भव-तप-हरण शरण रस-कूपा, मद ज्वर जरन हरण घनरूपा।। २।।
अकथित महिमा अमित अथाई, निर-उपमेय सरसता नाई ।
भावलिंग विन कर्म खिपाई, द्रव्यलिंग बिन शिव पद पाई।। ३।।
नय विभाग बिन वस्तु प्रमाणा, दया भाव बिन निज कल्याणा ।
पगु सुमेरु चूलिका परसै, गुग गान आरम्भे स्वर सै।। ४।।

सो अजोग कारज नहीं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई ।
सर्व जैन-शासन जिनमाहीं, भाग अनन्त धरै तुम नाहीं ।। ५।।
गोचर मे नहिं सिद्ध समावे, वासर लोक अन्त नही पावै ।
तातें केवल भक्ति भाव तुम, पावन करो अपावन उर हम ।। ६।।
जे तुम यश निज मुख उच्चारें, ते तिहुं लोक सुजस विस्तारें ।
तुम गुणगान मान कर पानी पावै सगुण महा सुखदानी ।। ७।।
जिन चित ध्यान सलिल तुम धारा, ते मुनि तीरथ हैं निरधारा ।
तुम गुण हंस तुम्हीं सरवानी, वचन जाल में रत न फासी ।। ८।।
जगत बंधु गुणसिंधु दयानिधि, बीजभूत कल्याण सर्वनिधि ।
अक्षय शिव-स्वरूप श्रिय स्वामी, पूरण निजानन्द विश्रामी ।। ९।।
शरणागत वत्सल अहितहर, जन्म-मरण दुख आधि-व्याधि हर ।
जन भक्ति तुम हो अनुरागी, निश्चै अजर अमर पद भागी ।।१०।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्ठ्यनोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नम महार्घ्यं०।

घतानन्द

जय जय सुखसागर, त्रिजग उजागर, गुणगण आगर, तारण हो ।
जय भव उधारण विपति विदारण, सुख विस्तारण, कारण हो ।।
तुम गुणगान परम फलदान, सो सब प्रमान विधान करूं ।
जहंगी कर्मनि वैरी की कहरी, अमहरी भव की व्याधि हरूं ।।

इत्याशीर्वाद

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्ह असिआउसा नम' मन्त्र का जाप करना चाहिये।)

आत्मधर्म

धर्म का आरम्भ भी आत्मानुभूति से ही होता है और पूर्णता भी उसी की पूर्णता मे। इससे परे धर्म की कल्पना भी नही की जा सकती। आत्मानुभूति ही आत्मधर्म है। साधक के लिए एकमात्र यही इष्ट है। इसे प्राप्त करना ही साधक का मूल प्रयोजन है।

—मैं कौन हूं, पृष्ठ १८

पंचम पूजा

छप्पय

ऊरध अधो सुरेफ सबिंदु हकार विराजे ।
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै ।।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर ।
अग्रभागमे मत्र अनाहत सोहत अतिवर ।।
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नागको ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मगल करो ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण अष्टविंशत्यधिकशत–(१२८) गुणसहित विराजमान श्री सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वाननम्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित हैं, कर्म रहित नीरोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग ।।

(इति यत्र स्थापनार्थं पुष्पाजलिं क्षिपेत्।

(चाल –बारहमासा छन्द)

चन्द्रवर्ण लखि चन्द्रकातमणि, मनते श्रवै हुलसधारा हो ।
कज सुवासित प्रासुक जलसो, पूजू अतर अनुसारा हो ।।
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचरण उरधारा हो ।
चौसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरण, सुमिरत ही भवपारा हो ।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण अष्टविंशत्यधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोगविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

सुरगण मणिधर जास वास लहि, मद तजि गध लुभावत हैं ।
सो चदन नदनवन भूषण, तुम पदकमल चढ़ावत हैं ।।लोकाधीश०।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण अष्टविंशत्यधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चन्दन ।।२।।

चपक ही के श्रम भ्रमरावलि, भ्रमत चकित चकराज भए ।
शशि मण्डल जानो सो अक्षत, पुजधार पद कज नये।।
लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो ।
चौंसठि दगुण सगुण मणि सुवरन, सुमरत ही भवपारा हो।।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण अष्टविंशत्यधिकशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षत० ।।३।।

मदन वदन दलिहरन वरन रति, लोचन अलिगण छाय रहे ।
पुष्पमाल वानिन विशाल सो, भेट धरत उर काम दहे।।लोकाधीश०।।
ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामवाण विनाशनाय पुष्पं० ।।४।।

चतवत मन वरणत रसना, रस स्वाद लेत ही तृप्त थये ।
जन्मान्तर हु की छुधा निवार, सो नेवज तुम भेट धरे।।लोकाधीश०।।
ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य० ।।५।।

रत्नमणिप्रभा अनूपम सुर, निज शीश धरण की रास करे ।
या विन तुच्छ विभव निज जाने, सो दीपक तुम भेट धरे।।लोकाधीश०।।
ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहाधकार-विनाशनाय दीप० ।।६।।

नीलजना सुरी नभ मे ज्यो, ऋषभ-भक्ति कर नृत्य कियो ।
सो तुम सन्मुख धूप उडावत, तिस छवि को नही भाव लियो ।।लोकाधीश०।।
ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्म दहनाय धूप० ।।७।।

सेव रगीले अनार रसीले, केला की ले डाल फली ।
डाली हू नृपमालि हूँ,नातर प्रासुकता की रीति भली।।लोकाधीश०।।
ॐ ह्रीं अष्टविंशत्याधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफल प्राप्तये फल०।।८।।

एक से एक अधिक सोहत वसु-जाति अर्घ करि चरण नमू ।
आनद आरति आरत तजिकै, परमारथ हित कुमति वमू।।

लोकाधीश शीश चूडामणि, सिद्धचक्र उरधारा हो ।
चौंसठि दुगुण सुगुण मणि सुवरन सुमिरत ही भवपारा हो।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं०।।९।।

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी,
शुभ पुष्प मधुकर नित रमे, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले,
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नसाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं,
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम स्वरूप अनूप हैं ।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती,
मुनि ध्येय मेय अमेय, चहुँ गुण गेह, द्यो हम शुभमती।।

ॐ ह्रीं अष्टविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नम पूर्णार्घ्यं० ।।१०।।

एक सौ अट्ठाईस गुण सहित अर्घ्यं

त्रोटक

निरबाध सु तत्व सरूप लखो, इक लेश विशेष न शेष रखो ।
अति शुद्ध सुभाविक क्षायक है, नमू दर्श महासुखदायक है।। १।।

ॐ ह्रीं सम्यग्दर्शनाय नम अर्घ्यं०।

निरमोह अकोह अबाधित हो, परभाव थकी न विराधित हो ।
निरअस चराचर जानत हैं, हम सिद्ध सुज्ञान प्रमानत हैं।। २।।

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

सब राग-विरोध निवारन है, निज भाव थकी निज धारन है ।
पर मे न कबहू निज भाव वहै, अति सम्यक्चारित्र नाम यहै।। ३।।

ॐ ह्रीं सम्यक्चारित्राय नम अर्घ्यं०।

उत्पाद विनाश न बाध धरैं, परनाम सुभाव नही निसरै ।
तुम धारत हो यह धर्म महा, हम पूजत हैं पद शीश यहाँ।। ४।।

ॐ ह्रीं अस्तित्वधर्माय नम अर्घ्यं०।

पर के मन क्रोधी सरम्भा, करत मूढ़ नाना आरम्भा ।
सिद्धराज प्रणमू तिस त्यागी, निर्विकल्प निजगुण के भागी।।२४।।

ॐ ह्रीं अकारितमन क्रोधसरम्भनिर्विकल्पधर्माय नम अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

मनोयोग रभा प्रशसीक क्रोधा, निजानद को मान ठाने अबोधा ।
महानिंदनी भाव को त्याग दीना, निजानद को स्वाद ही आप लीना।।२५।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमन क्रोधसरम्भसानन्दधर्माय नम अर्घ्यं०।

मनोयोग क्रोधी समारभ धारी, सदा जीव भोगे महाखेद भारी ।
महानद आख्यात को भाव पायो, नमो सिद्ध सो दोष नाही उपायो।।२६।।

ॐ ह्रीं अकृतमन क्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

समारम्भ क्रोधित सु मन, परकारित दुख नाहिं ।
परमातम पद पाइयो, नमू सिद्ध गुण ताहिं।।

ॐ ह्रीं अकारितमन क्रोधसमारम्भपरमानन्दाय नम अर्घ्यं०।

भुजगप्रयात

समारम्भ क्रोधी मनोयोग माही, धरे मोदना भाव को जीव ताही ।
भये आप सतुष्ट ये त्याग भावा, नमू, सिद्ध सो दोष नाही उपावा।।२८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमन क्रोधितसमारम्भ परमानन्दसतुष्टाय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

निज क्रोधित मन आरम्भ ठान, जग जिय दुख मे सुख रहे मान ।
सो आप त्याग सक्लेश भाव, भये सिद्ध नमू धर हिये चाव।।२९।।

ॐ ह्रीं अकृतमन क्रोधारम्भ स्वसस्थानाय नम अर्घ्यं०।

क्रोधित मनसो आरम्भ हेत, पर प्रेरित निज अपराध लेत ।
जग जीवन की विपरीत रीति, तुम त्याग भये शिव वर पुनीत।।३०।।

ॐ ह्रीं अकारितमन क्रोधारम्भबन्धसस्थानाय नम अर्घ्यं०।

क्रोधित मनसो आरम्भ देख, जिय मानत है आनन्द विशेष ।
तुम सत्य सुखी इह भव क्षार, भये सिद्ध नमू उर हर्ष धार।।३१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमन क्रोधारम्भसस्थापनाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मान योग मन रंभ मे, वरतत है जग जीव ।
भये सिद्ध सक्लेश तजि, तिन पद नमू सदीव ।।३२।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानारम्भसाधर्माय नम अर्घ्यं०।

मान उदय मन योगते, परको रंभ करान ।
त्याग भये परमातमा, नमू मगन पर हान ।।३३।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसरम्भअनन्यशरणाय नम अर्घ्यं०।

मान सहित मन रंभमे, जग जिय राख चाव ।
नमो सिद्ध परमातमा, जिन त्यागो इह भाव ।।३४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसरम्भसुगतभावाय नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल

समारभ परिवत्तमान युत मन धरे ।
विकलपमई उपकरण विधि इकठे करे ।।
महाकष्ट को हेत भाव यह ना गहो ।
प्रणमू सिद्ध अनत सुखातम गुण लहौ ।।३५।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोमानसमारम्भसुखात्मगुणाय नम अर्घ्यं०।

मान सहित मनयोग द्वार चितवन करे ।
समारभ पर कृत्य करावन विधि वरै ।।
तहा कष्ट को हेत भाव यह ना गहो ।
प्रणमू सिद्ध अनन्त गुणातम पद लहौ ।।३६।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानसमारम्भ-अनन्यगताय नम अर्घ्यं०

जोडे चित न समाज विविध जिस काज मे ।
समारभ तिस नाम सोम जिनराज मे ।।
माने मानी मन आनद सु निमित्त से ।
नमू सिद्ध हैं अतुल वीर्य त्यागत तिसे ।।३७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानसमारम्भ-अनन्तवीर्याय नम अर्घ्यं०।

अशुभकाज परिवर्त नाम आरभको ।
मान सहित मन द्वार तास उद्यम गहो ।।
जगवासी जिस नितप्रति पाप उपाय है ।
णमो सिद्ध या रहित अतुल सुखराय हैं ।।३८।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोयोगमानारम्भ-अनन्तसुखाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मनो मान आरम्भके, भये अकारित आप ।
अतुल ज्ञानधारी भये, नमत नसैं सब पाप।।३९।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोमानारम्भ-अनन्तज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

मनो मान आरम्भ मे, नानुमोदि भगवत ।
गुण अनत युत सिद्ध पद, पूजत है नित सत।।४०।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमानारम्भ-अनतगुणाय नम अर्घ्यं०।

गीता

जो अशुभ काज विकल्प हो, सरम्भ मनयुत कुटिलता ।
कर कर अनादित रक जिय, बहु भांति पाप उपावता।।
सो त्याग सकल विभाव यह तुम, सिद्ध ब्रह्मस्वरूप हो ।
हम पूजि हैं नित भक्तियुत, तुम भक्त वत्सलरूप हो।।४१।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासरम्भब्रह्मस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मायावी मनते नही, कबहुँ आरम्भ कराय ।
सिद्ध चेतना गुण सहित, नमू सदा मन लाय।।४२।।

ॐ अकारितमनोमायासरम्भचेतनाय नम अर्घ्यं०।

मायावी मनते कभी, रभानन्द न होय ।
सिद्ध अनन्य सुभाव युत, नमू सदा मद खोय।।४३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासरम्भ अनन्यस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

मायावी मनते समारम्भ, नहिं करत सदा हो अचल खभ ।
तुम स्वानुभूति रमणीय सग, नित रमन करो धरि मन उमग।।४४।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायासमारम्भस्वानुभूतिरताय नम अर्घ्यं०।

मन वक्र द्वार उपकर्ण ठान, विधि समारभ को नहिं करान ।
निज साम्यधर्म मे रहो लिप्त, तुम सिद्ध नमो पद धार चित्त।।४५।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोमाया-समारभसाम्यधर्माय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मायावी मनमे नही, समारभ आनन्द ।
नमो सिद्धपद परमगुरु, पाऊ पद सुखवृन्द।।४६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायासमारभगुरवे नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

बहु विधिकर जोडे अशुभ काज, आरम्भ नाम हिसा समाज ।
मायावी मन द्वारै करेय, तुम सिद्ध नमू यह विधि हरेय।।४७।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोमायाऽऽरम्भपरमशाताय नम अर्घ्यं०।

पूर्वोक्त अकारित विधि सरूप, पायो निर आकुल सुख अनूप ।
सर्वोत्तम पद पायो महान, हम पूजत हैं उर भक्ति ठान।।४८।।

ॐ ह्रीं अकारित मनोमायाऽऽरभनिराकुलाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मायावी आरम्भ करि, मन मे आनन्द मान ।
सो तुम त्यागो भाव यह, भये परम सुख खान।।४९।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोमायाऽऽरभ-अनन्तसुखाय नम अर्घ्यं०।

लोभी मन द्वारे नही, करैं सदा समरभ ।
हम अनन्त-दृग सिद्धपद, पूजत हैं मनथभ।।५०।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसरम्भ-अनन्तदृगाय नम अर्घ्यं०।

लोभी मन समरभ को, पर-सो नाहि कराय ।
दृगानन्द भावातमा, नमू सिद्ध मन लाय।।५१।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसरम्भदृगानन्दभावाय नम अर्घ्यं०।

लोभी मन समरभ मे, मानै नहि आनन्द ।
नमू नमू परमातमा, भये सिद्ध जगवद।।५२।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभसरम्भसिद्धभावाय नम अर्घ्यं०।

समारम्भ नहि करत हैं, लोभी मन के द्वार ।
चिदानद चिद्देव तुम, नमू लहूं पद सार।।५३।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभसमारम्भचिद्देवाय नम अर्घ्यं०।

पर सो भी पूर्वोक्त विधि, कबहूं नही कराय ।
निराकार परमात्मा, नमू सिद्ध हषाय।।५४।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभसमारभ-अनाकाराय नम अर्घ्यं०।

ऐसे ही पूर्वोक्त विधि, हर्षित, होवे नाहिं ।
चित्सरूप साकारपद, धारत हूँ उरमाहिं।।५५।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनो लोभसमारम्भसाकाराय नम अर्घ्यं०।

रचना हिसा काज की, लोभी मन के द्वार ।
नही करै है ते नमू, चिदानद पद सार।।५६।।

ॐ ह्रीं अकृतमनोलोभारभचिदानन्दाय नम अर्घ्यं०। नम

लोभी मन प्रेरित नही, पर को आरभ हेत ।
चिन्मय रूपी पद धरैं, नमू लहूँ निज खेत।।५७।।

ॐ ह्रीं अकारितमनोलोभारम्भचिन्मयस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

मन लोभी आरभ मे, आनद लहे न लेश ।
निजपद मे नित रमत हैं, ध्याऊ भक्ति विशेष।।५८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितमनोलोभारभस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल

क्रोधित जिय वचयोग द्वार उपयोगको ।
रचना विधि सकल्प नाम समरभ सो।।
तागे धरैं प्रवृत्ति पाप उपजावते ।
नमू सिद्ध या बिन वचगुप्ति उपावते।।५९।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसरम्भवाग्गुप्तये नम अर्घ्यं०।

क्रोध अग्नि करि निज उपयोग जरावही,
वचनयोग करि विधि सरम्भ करावही ।
सो तुम त्याग विभाव सुभाव सरूप हो,
नमू उरानन्द धार चिदानन्द रूप हो।।६०।।

ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसरम्भस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

सोरठा

क्रोधित निज वच द्वार, मोदित हो सरभ मे ।
सो तुम भाव विडार, नमू स्वानुभव लब्धियुत।।६१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसरम्भस्वानुभवलब्धये नम अर्घ्यं०।

दोहा

क्रोध सहित वाणी न ही, समारभ परव्रत ।
स्वानुभूति रमणी रमण, नमू सिद्ध कृतकृत्य।।६२।।
ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधसमारम्भस्वानुभूतिरमणाय नम अर्घ्यं०।

समारभ क्रोधित जिये, प्रेरित पर वच द्वार ।
नमू सिद्ध इस कर्म विन, धर्मधरा साधार।।६३।।
ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधसमारभसाधारणधर्माय नम अर्घ्यं०।

समारभ मय वचन करि, हर्षित हो युत क्रोध ।
नमू सिद्ध या विन लहो, परम शाति सुख बोध।।६४।।
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधसमारभपरमशाताय नम अर्घ्यं०।

मोतियादाम

वैर वचयोग धरै जियरोप, करै विधि भेद, आरम्भ सदोष ।
तजो यह सिद्ध भये सुखकार, नमू परमामृत तुष्ट अवार।।६५।।
ॐ ह्रीं अकृतवचनक्रोधारम्भपरमामृततुष्टाय नम अर्घ्यं०।

अकारित बैन सदा युत क्रोध, महा दुखकार अरम्भ अबोध ।
भये समरूप महारस धार, नमे हम सिद्ध लहै भवपार।।६६।।
ॐ ह्रीं अकारितवचनक्रोधारम्भसमरसाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

नानुमोद आरम्भ मे, क्रोध सहित वच द्वार ।
परम प्रीति निज आत्मरति, नमू सिद्ध सुखकार।।६७।।
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनक्रोधारम्भपरमप्रीतये नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल

वचन द्वार सरम्भ मानयुत के करैं,
जोड करण उपकरण मानसो ऊचरै ।
नानाविधि दुखभोग निजातमको हरै,
नमू सिद्ध या विन अविनश्वर पद धरै।।६८।।
ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसरम्भ-अविनश्वरधर्माय नम अर्घ्यं०।

मान प्रकृति करि उदै करावै ना कदा,
वचनन करि सरभ भेद वरणू यदा ।
मन इन्द्रिय अव्यक्तस्वरूप अनूप हो,
नमू सिद्ध गुणसागर स्वातमरूप हो।।६९।।
ॐ ह्रीं अकारित वचनमानसरम्भ अव्यक्तस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

सोरठा

नानुमोद वच योग, मान सहित सरम्भ मय ।
दलभ इन्द्री भोग, परम सिद्ध प्रणमू सदा।।७०।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानसरम्भदुर्लभाय नम अर्घ्यं०।

चौपाई

समारम्भ निज वैनन द्वार, करत नही हे मान सभार ।
ज्ञान सहित चिन्मूरति सार, परम गम्य हे निर-आकार।।७१।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानसमारम्भपरमगम्यनिराकाराय नम अर्घ्यं०।

वचन प्रवृत्ति मानयुत ठान, समारम्भ विधि नाहि करान ।
शुद्ध स्वभाव परम सुखकार, नमू सिद्ध उर आनन्द धार।।७२।।

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानसमारम्भपरमस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

वचन प्रवृत्ति मानयुत होय, समारम्भमय हर्षित सोय ।
त्यागत एक रूप ठहराय, नम एकत्व गती सुखदाय।।७३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनसमारम्भ-एकत्वगताय नम अर्घ्यं०।

मानी जिय निज वचन उचार, वरतत हे आरम्भ मझार ।
परमातम हो तजि यह भाव, नमू धर्मपति धर्मस्वभाव।।७४।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनमानारम्भ परमात्मधर्मराजधर्मस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

सोरठा

मानी बोले वैन, पर-प्रेरण आरम्भ मे ।
सो त्यागो तुम ऐन, शाश्वत सुख आतम नमू।।७५।।

ॐ ह्रीं अकारितवचनमानारम्भशाश्वतानन्दाय नम अर्घ्यं०।

हर्षित वचन उचार, मान सहित आरम्भमया ।
सो तुम भाव विडार, निजानन्द रस घन नमू।।७६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमानारम्भ-अमृतपूरणाय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

धरि कुटिल भाव जो कहत वैन, सरम्भ रूप पापिष्ट एन ।
तुम धन्य धन्य यही रीति त्याग, हो वेहद धर्मस्वरूप भाग।।७७।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासरम्भ-अनन्तधर्मैकरूपाय नम अर्घ्यं०।

मायायुत वचननको प्रयोग, सरम्भ करावत अशुभ भोग ।
तुम यह कलक नहि धरो लेश हो अमृत शशि पूजू हमेश।।७८।।
ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासरम्भ अमृतचन्द्राय नम अर्घ्यं०।

वच मायायुत सरम्भ कीन, सो पापरूप आपी मलीन ।
तिस त्याग अनेक गुणात्मरूप, राजत अनेक मूरत अनूप।।७९।।
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासरम्भ-अनेकमूर्तये नम अर्घ्यं०।

तम समारम्भकी विधि विधान, नहि करत कुटिलता भेद ठान ।
हो नित्य निरजन भाव-युक्त, म नमू सदा सशय विमुक्त।।८०।।
ॐ ह्रीं अकृतवचनमायासमारभनित्यनिरजनस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मायायुत निज वैनतैं, समारभके हेत ।
नहि प्रेरित परको नमू, निजगुण धम समेत।।८१।।
ॐ ह्रीं अकारितवचनमायासमारभआत्मैकधर्माय नम अर्घ्यं०।

मायाकरि वोलत नही, समारभ हर्षाय ।
सूक्ष्म अतीन्द्रिय वृष नमू, नमू सिद्ध मन लाय।।८२।।
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायासमारभ-आत्मैकधर्माय नम अर्घ्यं०।

मायायुत आरभ की वचन प्रवृत्ति नशाय ।
नमू अनन्त अवकाश गुण ज्ञान द्वार सुखदाय।।८३।।
ॐ ह्रीं अकृतवचनमायारभ-अनन्तावकाशाय नम अर्घ्यं०।

मायायुत आरभ मय, भेट वचन उपदेश ।
भये अमलगुण ते नमू, रागद्वेष नही लेश।।८४।।
ॐ ह्रीं अकारितवचनमायारभ-अमलगुणाय नमा अर्घ्यं०।

मायायुत आरम्भ मय, मेट वचन आनन्द ।
भये अनन्त सुखी नमू, सिद्ध सदा सुखवृन्द।।८५।।
ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनमायारभनिरवधिसुखाय नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल छन्द

जो परिग्रह को चाह लोभ सो मानिये,
विधि-विधान ठानत सरभ बखानिये ।
वचन द्वार नही करे नमू परमातमा,
सव प्रत्यक्ष लखे व्यापक धर्मातमा।।८६।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसरम्भव्यापकधर्माय नम अर्घ्यं०।

वर्तावन सरम्भ हेत परके तई,
लोभ उदै करि वचन कहै हिंसामई ।
नमू सिद्ध पद यह विपरीति सु जिन हरो,
सकल चराचर ज्ञानी व्यापक गुण वरो।।८७।।

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसरम्भव्यापकगुणाय नम अर्घ्यं०।

लोभी वच सरम्भ हर्ष परकाशन,
नाना विधि सचरे पाप दुख नाशन ।
सो तुम नाशत शाश्वत ध्रुवपदपाइयो,
नमू अचलगुणसहित सिद्ध मन भाइयो।।८८।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसरम्भ-अचलाय नम अर्घ्यं०।।८८।।

सोरठ

समारम्भ के बैन, लोभ सहित पर आसरैं ।
तज निरलम्बी ऐन, नमू सिद्ध उर धारिकै।।८९।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभसमारम्भनिरालवाय नम अर्घ्यं०।

समारभ उपदेश, लोभ उदै, थिति मेटिके ।
पायो अचल स्वदेश, नमू निराश्रय सिद्ध गुण।।९०।।

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभसमारम्भनिराश्रयाय नम अर्घ्यं०।

नानुमोद वच लोभ, समारभ परवृत्त मे ।
नमू तिन्हैं तजि क्षोभ, नित्य अखण्ड विराजते।।९१।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभसमारम्भ-अखण्डाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

लोभ सहित आरम्भ को, करत नही व्याख्यान ।
नूतन पचम गति लहो, नमू सिद्ध भगवान।।९२।।

ॐ ह्रीं अकृतवचनलोभारभपरीतावस्थाय नम अर्घ्यं०।

लोभ वचन आरम्भ को, कहत न पर के हेत ।
समयसार परमातमा, नमत सदा सुख देत।।९३।।

ॐ ह्रीं अकारितवचनलोभारम्भसमयसाराय नम अर्घ्यं०।

सोरठा

नानुमोद वच द्वार, लोभ सहित आरम्भमय ।
अजर अमर सुखदाय, नमू निरन्तर सिद्धपद।।९४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितवचनलोभारम्भनिरतराय नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल

क्रोधित रूप भयकर हस्तादिक तनी,
करत समस्या सो सरम्भ प्रकाशनी ।
सो तुम नाशो काय गुप्ति करि यह तदा,
दृष्टि अगोचर काय गुप्ति प्रणमू सदा।।९५।।

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसरम्भकायगुप्तये नम अर्घ्यं०।

सोरठा

पर प्रेरण निज काय, क्रोध सहित सरम्भ तज ।
चेतन मूरति पाय, शुद्ध काय प्रणमू सदा।।९६।।

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसरम्भ शुद्धकायाय नम अर्घ्यं०।

हर्षित शीश हिलाय, क्रोध उदय सरम्भ मे ।
त्यागत भये अकाय, नमू सिद्ध पद भावयुत।।९७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधसरम्भ-अकायाय नम अर्घ्यं०।

समारम्भ विधि मेटि, कायिक चेष्टा क्रोध की ।
स्वै गुणपर्य समेत, भक्ति सहित प्रणमू सदा।।९८।।

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधसमारम्भस्वान्वयगुणाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

समारम्भ विधि क्रोध युत, तनसो नही कराय ।
नित-प्रति रति निजभाव मे, बदू तिनके पाय।।९९।।

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधसमारम्भभावतरये नम अर्घ्यं०।

समारम्भ सो कायसो, क्रोध सहित परसस ।
स्वै अभिन्न पद पाइयो, नमू त्याग सरवस।।१००।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकाय क्रोधसमारम्भस्वान्वयधर्माय नम अर्घ्यं०।

कोधित कायारम्भ तजि, परसो रहित स्वभाव ।
शुद्ध द्रव्य मे रत नमू, निज सुख सहज उपाव ।।१०१।।

ॐ ह्रीं अकृतकायक्रोधारम्भशुद्धद्रव्यरताय नम अर्घ्यं०।

क्रोधित कायारम्भ नहि, रच प्रपच कराय ।
पचरूप ससार हानि, नमू पचमगति राय ।।१०२।।

ॐ ह्रीं अकारितकायक्रोधारम्भससार-छेदकाय नम अर्घ्यं०।

क्रोधित कायारम्भ मे, हर्ष विषाद विडार ।
अनेकात वस्तुत्व गुण, धरै नमो पद सार ।।१०३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायक्रोधारम्भजैनधर्माय नम अर्घ्यं०।

मान सहित सरभकी, तनसो रचना त्याग ।
पर प्रवेश विन रूप जिन, लियो नमू बडभाग ।।१०४।।

ॐ ह्रीं अकृतकायमानसरम्भस्वरूपगुप्तये नम अर्घ्यं०।

मान उदय सरम्भ विधि, तनसो नही कराय ।
निज कृत पर पकार बिन, लियो नमू तिन पाय ।।१०५।।

ॐ ह्रीं अकारितकायमानसरम्भनिजकृतये नम अर्घ्यं०।

मान सहित सरभ मे, तनसो हर्ष न लेश ।
ध्यान योग निज ध्येय पद, भावित नमू अशेष ।।१०६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसरम्भ-ध्येयभावाय नम अर्घ्यं०।

मदयुत तनसो रच भी, समारभ विधि नाहि ।
परमाराधन योगपद, पायो प्रणमू ताहि ।।१०७।।

ॐ ह्रीं अकृतकायमानसमारम्भ-परमाराधनाय नम अर्घ्यं०।

समारम्भ निज कायसो, मदयुत नही कराय ।
ज्ञानानन्द सुभाव युत, प्रणमू शीश नवाय ।।१०८।।

ॐ ह्रीं अकारितकायमानसमारम्भनदगुणाय नम अर्घ्यं०।

समारम्भ मय विधि सहित, तनसो हर्ष न होय ।
निजानद नन्दित तिन्है, नमू सदा मद खोय ।।१०९।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसमारम्भस्वानदानन्दिताय नम अर्घ्यं०।

अर्द्ध चौपाई

अकृत मानारभ शरीर, पर अनिंद्य बन्दू धर धीर ।।११०।।

ॐ ह्रीं अकृतकायमानारम्भसतोषाय नम अर्घ्यं०।

कायारभ अकारिन मान, स्वस्वरूप-रत वन्दू तान।।१११।।

ॐ ह्रीं अकारितकायमानारम्भस्वरूपरताय नम अर्घ्यं०।

मानारभ अनन्दित काय, प्रणमू विमल शुद्ध पर्याय।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानारम्भशुद्धपर्यायाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

मायायुत सरम्भ विधि, तनसो नही कराय ।
गुप्त निजामृत रस लहैं, नमू तिन्हैं तज पाप।।११२।।

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासरम्भ-अमृतगर्भाय नम अर्घ्यं०।

मायायुत सरम्भ विधि, तनसो नही कराय ।
मुख्य धर्म चैतन्यता, विलसे प्रणमू पाय।।११३।।

ॐ ह्रीं अकारितकायमायासरम्भचैतन्याय नम अर्घ्यं०।

मायायुत सरम्भ मय, नानुमोदयुत काय ।
वीतराग आनन्द पद, समरस भावन भाँय।।११४।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासरम्भ-समरसीभावाय नम अर्घ्यं०।

समारम्भ माया सहित, अकृत तन विच्छेद ।
बन्ध दशा निज पर द्विविध, नमत नसै भव खेद।।११५।।

ॐ ह्रीं अकृतकायमायासमारम्भबधच्छेदकाय नम अर्घ्यं०।

समारम्भ तन कुटिलसो, भये अकारित स्वामि ।
निज परिणति परिणमन विन, गुण स्वातत्र नमामि।।११६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमानसरम्भ-ध्येयभावाय नम अर्घ्यं०।

नानुमोदित तन कुटिलता, समारम्भ विधि देव ।
गुण अनन्त युत परिणमू, धर्म समूही एव।।११७।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायासमारम्भधर्मसमूहाय नम अर्घ्यं०।

मायायुत निज देहसो, नही आरम्भ करेह ।
परमातम सुख अक्ष-बिन, पायो बन्दू तेह।।११८।।

ॐ ह्रीं अकृतकायमायारम्भपरमात्मसुखाय नम अर्घ्यं०।

मायारम्भ शरीर करि, परसो नही करान ।
निष्ठातम स्वस्थित नमू, सिद्धराज गुणखान।।११९।।

ॐ ह्रीं अकारितकायमायारम्भनिष्ठात्मने नम अर्घ्यं०।

मायारम्भ शरीरसो, नानुमोद भगवन्त ।
दर्शज्ञानमय चेतना, सहित नमे नित 'सन्त'।।१२०।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायमायारम्भचेतनाय नम अर्घ्यं०।

अर्द्ध पद्धडी

सरम्भ चाह नहिं काययोग, चित परिणति नमि शुद्धोपयोग।।१२१।।

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसरम्भप मचित्परिणताय नम अर्घ्यं०।

सरम्भ अकारित लोभ देह, निज आतम रत स्वसमय तेह।।१२२।।

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसरम्भ-स्वसमयरताय नम अर्घ्यं०।

सरम्भ लोभ तन हर्ष नाश, नमि व्यक्त धर्म केवल प्रकाश।।१२३।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसरम्भ-व्यक्तधर्माय नम अर्घ्यं०।

सोरठा

लोभी योग शरीर, समारम्भ विधि नाशके ।
ध्रुव आनन्द अतीव, पायो पूजू सिद्धपद।।१२४।।

ॐ ह्रीं अकृतकायलोभसमारम्भ-नित्यसुखाय नम अर्घ्यं०।

लोभ अकारित काय, समारम्भ निज कर्म हनि ।
पायो पद अकषाय, सिद्ध वर्ग पूजू सदा।।१२५।।

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभसमारम्भ-अकषायाय नम अर्घ्यं०।

पूर्ववर्तनानन्द, परिग्रह इच्छा मेटिके ।
पायो शौच स्वछन्द, नमू सिद्ध पद भक्ति युत।।१२६।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभसमारम्भशौचगुणाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

काय द्वार आरम्भ की, लोभ उदय विधि नाश ।
नमो चिदातम पद लियो, शुद्ध ज्ञान परकाश।।१२७।।

ॐ ह्रीं अकृतकाय लोभारम्भचिदात्मने नम अर्घ्यं०।

काय द्वार आरम्भ विधि, लोभ उदय न कराय ।
निज अवलम्बित पद लियो, नमू सदा तिन पाय।।१२८।।

ॐ ह्रीं अकारितकायलोभारम्भ-निराबबाय नम अर्घ्यं०।

लोभी तन आरम्भ मे, आनन्द रीती भेट ।
नमू सिद्ध पद पाइयो, निज आतम गुण श्रेष्ठ।।१२९।।

ॐ ह्रीं नानुमोदितकायलोभारम्भात्मने नम अर्घ्यं०।

सवैया

जेते कछु पुदगल परमाणु शब्दरूप,
　　भये हैं, अतीत काल आगे होनहार हैं।
तिनको अनत गुण करत अनतवार,
　　ऐसे महाराशि रूप धरैं विसतार हैं॥
सब ही एकत्र होय सिद्ध परमातमके,
　　मानो गुण गण उचरन अर्थधार हैं।
तौं भी इक समयके अनत भाग अनदको,
　　कहत न कहैं हम कौन परकार हैं॥१३०॥

ॐ ह्रीं अष्टाविंशत्यधिकशतगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

जयमाला

दोहा

शिवगुण सरधा धार उर, भक्ति भाव है सार।
केवल निज आनन्द करि, करू सुजस उच्चार॥

पद्धडी

जय मदन कदन मन करण नाश, जय शांतिरूप निज सुख विलास।
जय कपट सुभट पट करन सूर, जय लोभ क्षोभ मद दम्भ चूर॥ १॥
पर-परणतिसों अत्यन्त भिन्न, निज परिणतिसों अति ही अभिन्न।
अत्यन्त विमल सब ही विशेष, मल लेश शोध राखो न शेष॥ २॥
मणि दीप सार निर्विघन ज्योत, स्वाभाविक नित्य उद्योत होत।
त्रैलोक्य शिखर राजत अखण्ड, सम्पूरण द्युति प्रगटी प्रचण्ड॥ ३॥
मुनि-मन-मन्दिर को अन्धकार, तिस ही प्रकाशसौं नशत सार।
सो सुलभ रूप पावै न अर्थ जिस कारण भव-भव भ्रमे व्यर्थ॥ ४॥
जो कल्प-काल मे होत सिद्ध, तुम छिन ध्यावत लहिये प्रसिद्ध।
भवि पतितन को उद्धार हेत, हस्तावलम्ब तुम नाम देत॥ ५॥
तुम गुण सुमिरण सागर अथाह, गणधर सरीख नही पार पाह।
जो भवदधि पार अभव्य जान, पावे न वृथा उद्यम प्रमान॥ ६॥
जिन-मुख द्रहसो निकसी अभंग, अति वेग रूप सिद्धान्त गंग।
नय-सप्त भंग कल्लोल मान, तिहुँ लोक बही धारा प्रमान॥ ७॥

सो द्वादशांग वाणी विशाल, ता सुनत पढ़त आनन्द रसाल ।
याते जग में तीरथ सुधाम, कहलावो हैं सत्यार्थ नाम ।। ८ ।।
सो तुम ही सो है शोभनीक तातैं जल मग जु कहै सु ठीक ।
निज पर आतमहित आत्म-भूत, जबसे है जब उत्पत्ति सूत ।। ९ ।।
ज्यों महाशीत ही हिम प्रवाह, है मेटन समरथ अगिन दाह ।
त्यों आप महा मंगलस्वरूप, पर विघन विनाशन सहज रूप ।। १० ।।
है 'सन्त' दीन तुम भक्ति लीन, सो निश्चय पावें पद प्रवीन ।
तातैं मन-वच-तन भाव धार, तुम सिद्धनको मम नमस्कार ।। ११ ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टाविंशत्यधिकशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

दोहा

जो तुम ध्यावें भावसों, ते पावें निज भाव ।
अगनि पाक संयोग करि, शुद्ध सुवण उपाव ।। १२ ।।

(यहाँ १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नमः' मंत्र का जाप करें।)

इत्याशीर्वादः

षष्ठ पूजा

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ सबिन्दु हकार विराजै,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजै ।
वर्गीनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभाग मे मत्र अनाहत सोहत अतिवर।।
पुनि अन्त ह्री बेढ्यो परम, सुर ध्यावत अरि नाग को ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मगल करो।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये नम, षड्पचाशदधिकद्विशतगुण-सयुक्ताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने अत्रावतरावतर सवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पाजलिं क्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादिक गुण सहित हैं, कर्म रहित निररोग ।
सकल सिद्ध सो थापहूँ, मिटे उपद्रव योग।।

इति यत्रस्थापनार्थं, पुष्पाजलिं क्षिपेत्।

गीता

अति नम्रता तिहुँ योग मे निज भक्ति निर्मल भावही ।
यह गुप्त जल प्रत्यक्ष निर्मल सलिल तीरथ लावही।।
यह उभय द्रव्य सयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावही ।
द्वै अर्द्धशत षट अधिक नाम उचार विरद सु गावही।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोगविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

अति वास विषय न वासनायुत मलय शील सुभावही ।
अरु चदनादि सुगन्ध द्रव्य मनोज्ञ प्राशक लावही।।यह उभय०।।

ॐ ह्री श्री सिद्धपरमेष्ठिने षडपचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय ससारताप विनाशनाय चन्दन०।।२।।

परिणाम धवल सुवर्ण अक्षत मलिन मन न लगावही ।
तिन सार अक्षय अदाग स्वच्छ सुवास पुंज बनावही ।।
यह उभय द्रव्य संयोग त्रिभुवन पूज्य पूज रचावही ।
है अष्टशत पट अधिक नाम उचार विरद सु गावही ।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद प्राप्तये अक्षत०।।३।।

मन राग भक्त्यनुराग आनंद तान माल पुरावही ।
तिन भाग कुसुम सुहाग अरु सुर नागवान सु लावही ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाण विनाशनाय पुष्पं०।।४।।

जिनभक्तिरस में तृप्तता मन आन स्वाद न चावही ।
अतर चरू बाहिज मनोहर रसिक नेवज लावही ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य० ।।५।।

सरधान दीप प्रदीप्त अतर मोह तिमिर नशावही ।
मणिदीप जगमग ज्योति तेज सुभास भेट धरावही ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसयुक्ताय श्री सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार विनाशनाय दीप० ।।६।।

आनन्द धर्म प्रभावना मन घटा धूम्र छावही ।
गंधित द्रव्य शुभ घ्राण प्रिय अति अग्नि संग जरावही ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्म दहनाय धूपं नि० ।।७।।

शुभ चिंतवन फल विविध रस युत भक्ति तरु उपजावही ।
रसना लुभावन कल्पतरू के सुर असुर मन भावही ।। यह उभय०।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफल प्राप्तये फल० ।।८।।

समकित विमल वसु अंग युत करि अर्घ अन्तर भावही ।
वसु दरब अर्घ बनाय उत्तम देहु हर्ष उपावही ।।यह उभय०।।

ॐ ह्रीं षड्पचाशदधिकद्विशतगुणसयुक्ताय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं०।।९।।

गीता

निमल मलिल शुभ वाम चदन, धवन अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमे, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी ।।
वर दीपमाल उजाल, धूपायन रसायन फल भले ।
करि अघ सिद्ध-समूह पूजत, कमदल सब दलमले ।।
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप हैं ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्ष्म सरूप अनूप हैं ।।
कर्माष्ट विन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहु गुण गेह, द्यो हम शुभमती ।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाण षड्पचाशदधिक-द्विशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धचक्राधिपतये पूर्णार्घ्यं०।

दो सौ छप्पन गुण सहित अर्घ्य

चौपाई

मिथ्यातम कारण दुखकारा, नित्य निरजन विधि ससारा ।
तिस हनि समरथ अतिशयरूपा, केवल पाय नमू शिव भूपा।। १।।

ॐ ह्रीं चिरन्तरससारकारण-ज्ञाननिर्द्धूतोद्भूतकेवलज्ञानातिशय-सपन्नाय सिद्धाधिपतये नम अर्घ्यं०।

मन-इन्द्रिय निमित मतिज्ञाना, योग देश तिष्ठन पद जाना ।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। २।।

ॐ ह्रीं अभिनिबोधवारकविनाशकाय नम अर्घ्यं०।

द्वादश अगरूप अज्ञाना, श्रुत आवरणी भेद वखाना ।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ३।।

ॐ ह्रीं द्वादशागश्रुतावरणीकर्मविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

है असख्य लोकावधि जेते, अवधिज्ञान के भेद सु तेते ।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ४।।

ॐ ह्रीं असख्यभेदलोक-अवधिज्ञानावरणविमुक्ताय नम अर्घ्यं० ।

है असख्य परमान, प्रमाना, मनपर्यय के भेद वखाना ।
क्षय उपशम आवर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ५।।

ॐ ह्रीं असख्यप्रकारमन पर्ययज्ञानावरणकर्मविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

निखिल रूप गुणपर्यय ज्ञान, सत स्वरूप प्रत्यक्ष प्रमान ।
केवल आवर्णी विधि नाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ६।।

ॐ ह्रीं निखिलरूप-गुणपर्याय-बोधककेवलज्ञानावरणविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

द्वारपती भूपति के ताईं, रोक रहै देखन दे नाही ।
सोई दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ७।।

ॐ ह्रीं सकलदर्शनावरणकर्मविनाशकाय नम अर्घ्यं०।

मूर्तीक पद को प्रतिभासन, नेत्र द्वार होवै परकाशन ।
चक्षु-दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ८।।

ॐ ह्रीं चक्षुदर्शनावरणकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

दृग विन अन्य इन्द्री मन द्वारे, वस्तुरूप सामान्य उघारे ।
अदृग-दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।। ९।।

ॐ ह्रीं अचक्षुदर्शनावरणरहिताय नम अर्घ्यं०।

देश-काल-द्रव-भाव प्रमान, अवधि दर्श होवे सब ठान ।
अवधि-दर्श-आवरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।१०।।

ॐ ह्रीं अवधिदर्शनावरणरहिताय नम. अर्घ्यं०।

बिन मर्याद सकल तिहु काल, होय प्रकट घटपट तिह हाल ।
केवल दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।११।।

ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरणरहिताय नम अर्घ्यं०।

बैठे खडे पडै घुम्मरिया, देखे नही निद्रा की विरिया ।
निद्रा दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।१२।।

ॐ ह्रीं निद्राकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

सावधानि कितनी की जावे, रच नेत्र उघडन नही पावे ।
निद्रा निद्रा कर्म विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।१३।।

ॐ ह्रीं निद्रानिद्राकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

मदरूप निद्रा का आना, अवलोकै जाग्रतहि समाना ।
प्रचला दर्शनावरण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।१४।।

ॐ ह्रीं प्रचलाकर्मरहिताय नम. अर्घ्यं०।

मुखसो लार वहै अति भारी, हस्त पाद कपत दुखकारी ।
प्रचला-प्रचला वर्ण विनाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।१५।।

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचलाकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

सोता हुआ करै सव काजा, प्रगटावै प्राकर्म समाजा ।
यह स्त्यानगृद्धि विधि नाशो, नमो सिद्ध स्वज्ञान प्रकाशो।।१६।।

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धिकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

जे पदार्थ है इन्द्रिय योग, ते सव वेदे जिस निज जोग ।
सोई नाम वेदनी होई, नमू सिद्ध तुम नासो मोई।।१७।।

ॐ ह्रीं वेदनीयकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

रति के उदय भोग सुखकार, भोगै जिय शुभ विविध प्रकार ।
साता भेद वेदनी होय, नमू सिद्ध तुम नाशो मोय।।१८।।

ॐ ह्रीं सातावेदनीयकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

अरति उदय जिय इन्द्री द्वार, विषयभोग वेदे दुखकार ।
एही भेद असाता होय, नमू सिद्ध तुम नाशो सोय।।१९।।

ॐ ह्रीं असातावेदनीयकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

ज्यो असावधानी मदपान, करत मोह विधितैं सो जान ।
ता विधि करि निज लाभ न होय, नमू सिद्ध तुम नाशो सोय।।२०।।

ॐ ह्रीं मोहकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

जाके उदय तत्त्व परतीत, सत्य रूप नही हो विपरीत ।
पच भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमू सुखकार।।२१।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्वकर्मविनाशनाय नम अर्घ्यं०।

प्रथमोपशमू समकित जब गले, मिथ्या समकित दोनो मिले ।
मिश्र भेद मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमू सुखकार।।२२।।

ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्वकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

दशन मे कुछ मल उपजाय, करै समल नहिं मूल नसाय ।
सम्यक्-प्रकृति मिथ्यात निवार, भये सिद्ध प्रणमू सुखकार।।२३।।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्वरहिताय नम अर्घ्यं०।

धर्म-मार्ग मे उपजे रोष, उदय भये मिथ्यात सदोष ।
यह अनन्त-अनुबध निवार, भये सिद्ध प्रणमू सुखकार।।२४।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीक्रोधकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

देव-धम-गुरुनो अभिमान, उदय भये मिथ्या सरधान ।
यह अनन्त अनुवध निवार, भये सिद्ध प्रणमू सुखकार।।२५।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमानकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

छलनो धर्म रीति दलमले, उदय होय मिथ्या जव चले ।
यह अनन्त अनुवध निवार, प्रणमू सिद्ध महासुखकार।।२६।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीमायाकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

लोभ उदय निर्मालय दर्व, भक्षे महानिंद मति सर्व ।
यह अनन्त अनुवध निवार, भये सिद्ध प्रणमू सुखकार।।२७।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धीलोभकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

सुन्दरी

क्रोध वशि अणुव्रत नहि लीजिये, चारितमोह प्रकृति सु भनीजिए ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमू तिन नासियो।।२८।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोधकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

मान वशि अणुव्रत न हो कदा, रहे अव्रत युत दर्शि सदा ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमू तिन नासियो।।२९।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमानकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

देशव्रती श्रावक नही होत है, वक्रताको जहँ उद्योत है ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमू तिन नासियो।।३०।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमायाविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

मोह लोभ चरित जे जिय वसे, देशव्रत श्रावक नही ते लसे ।
है अप्रत्याख्यानी कर्म सो, भये सिद्ध नमू नासियो।।३१।।

ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल

प्रत्याख्यानी क्रोध सहित जे आचरे,
देशव्रती सो सकल व्रत नाही धरे ।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमू सिद्ध शिवधाम है।।३२।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोधविमुक्ताय नम. अर्घ्यं०।

प्रत्याख्यानभिमान महान न शक्ति है,
जास उदय पूरणसयम अव्यक्त है ।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमू सिद्ध शिवधाम है।।३३।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमानरहिताय नम अर्घ्यं०।

प्रत्याख्यानी माया मुनि-पदको हतै,
श्रावकव्रत पूरण नही खडे जासतें ।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमू सिद्ध शिवधाम है।।३४।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमायारहिताय नम अर्घ्यं०।

श्रावक पद मे जास लोभ को वास है,
प्रत्याख्यानी श्रुत मे सज्ञा त्रास है ।
चारितमोह सु प्रकृति रूप तिह नाम है,
नाश कियो मैं नमू सिद्ध शिवधाम है।।३५।।

ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभरहिताय नम अर्घ्यं०।

भुजंगप्रयात

यथाख्यात चारित्र को नाश कारा,
महाव्रत को जास मे हो उजारा ।
यही सज्वलन क्रोध सिद्धान्त गाया,
नमू सिद्ध के चरण ताको नसाया।।३६।।

ॐ ह्रीं सज्वलनक्रोधरहिताय नम अर्घ्यं०।

रहै सज्वलन रूप उद्योत जेते,
न हो सर्वथा शुद्धता भाव तेते ।
यही सज्वलन मान सिद्धात गाया,
नमू सिद्ध के चरण ताको नसाया।।३७।।

ॐ ह्रीं सज्वलनमानरहिताय नम अर्घ्यं०।

वहै सज्वलन की जहा मद धारा,
लहै है तहा शुक्लध्यानी उभारा ।
यही सज्वलन माया सिद्धात गाया,
नमू सिद्धके चरण ताको नसाया।।३८।।

ॐ ह्रीं सज्वलनमायारहिताय नम अर्घ्यं०।

जो संज्वलन लोभ है रंच नाहीं
निजानंद को थान राखे नहीं ही ।
सो संज्वलन लोभ विनाश सारा
नमूं जिन के चरण नाशा नशाया ।।३९।।
ॐ ह्रीं संज्वलनलोभकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

मोदक

जो वश हास्य आय जग लोकहिं हास्य किये परकी यश पानहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं शीश नम तुमको धरि हाथहिं ।।४०।।
ॐ ह्रीं हास्यकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।
प्रीति करै पर सों रति मानहिं, सो रति भेद विधी निज जानहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं शीश नम तुमको धरि हाथहिं ।।४१।।
ॐ ह्रीं रतिकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।
जो परसों परसन्न न हो मन अरति रूप रहै निज आनन ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नम तुमको धरि हाथहिं ।।४२।।
ॐ ह्रीं अरतिकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।
जो वश पावत इष्ट वियोगहिं संकट परिणाम न शोकहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नम तुमको धरि हाथहिं ।।४३।।
ॐ ह्रीं शोककर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।
हो उद्वेग उच्चाटन रूपहि, मन तन कंपित होत अरूपहिं ।
सो तुम नाश कियो जगनाथहिं, शीश नम तुमको धरि हाथहिं ।।४४।।
ॐ ह्रीं भयकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

सवैया

जो परको अपराध उघारत, जो अपनो कछु दोष न जाने ।
जो परके गुण औगुण जानत, जो अपने गुण को प्रगटाने ।।
सो जिनराज बखान जगुप्सित, है जियको विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन! नम तुमको, तुम जीति लियो छिन मे अरि तैसे ।।४५।।
ॐ ह्रीं जुगुप्साकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।
जो नर नारि रमावन की, निजमो अभिलाष धरै मनमाही ।
सो अति ही परकाश हिये नित, काम की दाह मिटे छिन माही ।।

सो जिनराज बखान नपुंसक, वेद हनो विधिके वश ऐसो ।
हे भगवंत! नमूं तुमको, तुम जीति लियो छिन में अरि तैसो ।।४६।।

ॐ ह्रीं नपुंसकवेदरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।४६।।

जो तिय संग रमे विधि यो मन, अग्नि में कछु आनन्द माने ।
किंचित काम जगे उर में नित, शांति सुभावन की शुधि ठाने ।।
सो जिनराज, बखानत है, नर-वेद हनो विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन्त! नमूं तुमको, तुम जीन लियो छिन में अरि तैसो ।।४७।।

ॐ ह्रीं पुरुषवेदरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।४७।।

जो नर संग में रमे सुख मानत, अन्तर गूढ़ न जानत कोइ ।
हाव विलास हि लाज धरै मन, आतुरता करि तृप्त न होई ।।
सो जिनराज बखानत है, तिय-वेद हनो विधि के वश ऐसो ।
हे भगवन्त! नमूं तुमको, तुम जीन लियो छिन में अरि तैसो ।।४८।।

ॐ ह्रीं स्त्रीवेदरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।४८।।

वसन्ततिलका

आयु प्रमाण दृढ़ बंधन और नाहीं,
गत्यानुसार थिति पूरण करण नाहीं ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूं तुम्हे तरणकारण जोर हाथा ।।४९।।

ॐ ह्रीं आयुकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।४९।।

जो है कलेश अवधि सब होत जासो,
तेतीस सागर रहे थिति नर्क तासो ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूं तुम्हे तरणकारण जोर हाथा ।।५०।।

ॐ ह्रीं नरकायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।५०।।

याही प्रकार जितने दिन देव देही,
नासै अकाल नहिं जे सुर आयु से ही ।
सोई विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदूं तुम्हे तरणकारण जोर हाथा ।।५१।।

ॐ ह्रीं देवायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।५१।।

जासों रहै तिर्यग की थिति आउ पूरी,
सोई यहां त्रिजग आयु महालघुरी ।
ताको विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदू नमूं चरणकारण जोर हाथा ॥५२॥

ॐ ह्रीं तिर्यंचायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५२॥

जो मनुज विधि दे नर आप जाको
तैसें पर्याय नर रूप भगाय ताको ।
ताको विनाश कीनो तुम देव नाथा,
वंदू तुम्हें चरणकारण जोर हाथा ॥५३॥

ॐ ह्रीं मनुष्यायुरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५३॥

पद्धडी

जो धरै जीवके चार प्रकार ज्यों चित्रकार चित्राम सार ।
सो नामकर्म तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५४॥

ॐ ह्रीं नामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जासों उपजै तिर्यंच जीव रहै ज्ञानहीन निबल सदीव ।
सो तिर्यग्गति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५५॥

ॐ ह्रीं तिर्यग्गतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जा उदय नारकी देह पाय, नाना दुख भोगे नर्क जाय ।
सो नरकगती तुम नाश कीन मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५६॥

ॐ ह्रीं नरकगतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

चउ विधि सुरपद जासों लहाय, विषयातुर नित भोगे उपाय ।
सो देवगती तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५७॥

ॐ ह्रीं देवगतिकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

जा उदय भव मानुष्य होत, लहै नीच ऊंच ताको उद्योत ।
सो मानुष गति तुम नाश कीन, मैं नमूं सदा उर भक्तिलीन ॥५८॥

ॐ ह्रीं मनुष्यगतिरहिताय नमः अर्घ्यं० ।

कामिनीमोहन

एक ही भाव सामान्यका पावना, जीव की जातिका भेद सो गावना ।
होत जो थावरा एक इन्द्री कहो, पूजहू सिद्धके चरण ताको दहो ॥५९॥

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय-जातिरहिताय नमः अर्घ्यं० ॥५९॥

फर्स के साथ मे जीभ जो आ मिले, पायसो आपने आप भूपर चले ।
गामिनी कर्म सो दोय इन्द्री कहो, पूजहू सिद्धके चरण ताको दहो।।६०।।

ॐ ह्रीं द्वीन्द्रिय-जातिरहिताय नम अर्घ्यं०।।६०।।

नाक हो और दो आदिके जोड मे, हो उदय चालना योगसो दोल मे ।
गामिनी कर्म सो तीन इन्द्री कहो, पूजहू सिद्धके चरण ताको दहो।।६१।।

ॐ ह्रीं त्रीन्द्रिय-जातिरहिताय नम अर्घ्यं०।।६१।।

आख हो नाक हो जीभ हो फर्श हो, कान के शब्द का ज्ञान जामे न हो ।
गामिनी कर्मसो चार इन्द्री कहो, पूजहू सिद्धके चरण ताको दहो।।६२।।

ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियजातिरहिताय नम अर्घ्यं०।।६२।।

कान भी आ मिले जीव जा जाति मे, हो असज्ञी सुसज्ञी दो भांति मे ।
गामिनी कर्मकी पच इन्द्री कहो, पूजहू सिद्धके चरण ताको दहो।।६३।।

ॐ ह्रीं पचेंद्रियजातिरहिताय नम अर्घ्यं० ।।६३।।

लावनी

हो उदार जो प्रगट उदारिक, नाम कर्म की पकृति भनी ।
लहै औदारिक देह जीव तिस, कर्म प्रकृति के उदय तनी।।
भये अकाय अमूरति आनद, पुज चिदातम ज्योति घनी ।
नमू तुम्हे कर जोर युगल तुम सकल रोगथल काय हनी।।६४।।

ॐ ह्रीं औदारिकशरीरविमुक्ताय नम अर्घ्यं० ।।६४।।

निज शरीर को अणिमादिक करि, बहु प्रकार प्रणमाय वरे ।
वैक्रिय तन कहलावे है यह, देव नारकी मूल धरे।।भये अकाय०।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिकशरीरविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।।६५।

धवल वर्ण शुभ योगी सशय-हरण अहारक का पुतला ।
जो प्रमत्त गुणथानक मुनि के, देह अैदारिक सो निकला।।भये अकाय०।।

ॐ ह्रीं आहारकशरीररहिताय नम अर्घ्यं०।।६६।।

पुद्गलीक तन कर्म वगणा, कारमाण परदीप्त करण ।
तैजस नाम शरीर शास्त्र मे, गावत हैं नहिं तेज वरण।। भये अकाय०।।

ॐ ह्रीं तैजसशरीररहिताय नम अर्घ्यं० ।।६७।।

पुद्गलीक वरगणा जीवसो, एक क्षेत्र अवगाही है ।
नूतन कारण करण मूल तन, कारमाण तिस नाम कहैं।।भये अकाय०।।

ॐ ह्रीं कार्माणशरीररहिताय नम अर्घ्यं०।।६८।।

इन्द्रवज्रा

ऐसे प्रदेश तन बीच आवैं, तातैं मिलैं जोड़ न छिद्र पावैं ।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ।।६९।।

ॐ ह्रीं औदारिकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

ऐसे प्रदेश तनमें अहारा, सधी मिलाया कर चेतनारा ।
संघात नामा जिय देह जानो पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ।।७०।।

ॐ ह्रीं आहारकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

वैक्रियक के जोग जो होत नाहीं संघातनामा जिन बैन माहीं ।
संघात नामा जिय देह जानो, पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ।।७१।।

ॐ ह्रीं वैक्रियकसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

तेजस्क के अंग उपंग सारे सधी मिलाया निज माहिं धारे ।
संघात नामा जिय देह जानो पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ।।७२।।

ॐ ह्रीं तैजससंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

ज्ञानादि आवर्ण वा कर्म-काया, ताको मिलाया श्रुत माँहि गाया ।
संघात नामा जिय देह जानो पूजूं तुम्हें सिद्ध यह कर्म हानो ।।७३।।

ॐ ह्रीं श्री कार्माणसंघातरहिताय नमः अर्घ्यं०।

चौबोला

पुद्गलीय वर्गणा जोग तैं, जब जिय करत अहारा ।
प्रणवावे निनको एकत्र करि, बंध उदय अनुभागा ।।
यही औदारिक बन्धन तुमने, छेद किये निरधारा ।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ।।७४।।

ॐ ह्रीं औदारिकबन्धनरहिताय नमः अर्घ्यं०।

वैक्रियक तन परमाणु मिल, परम्परा अनिवारा ।
हो स्कन्ध रूप पर्याई, यह बन्धन परकारा ।।
वैक्रियिक तनु बन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भये अबंध अकाय अनूपम, जजूं भक्ति उर धारा ।।७५।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिकबन्धनच्छेदकाय नमः अर्घ्यं०।

मुनि शरीरसो बाहिज निसरे, संशय नाशनहारा ।
ताको मिले प्रदेश परस्पर, हो सम्बन्ध अवारा ।।

यही अहारक वन्धन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भये अवध अकाय अनूपम, जजू भक्ति उरधारा।।७६।।

ॐ ह्रीं आहारकवन्धनच्छेदकाय नम अर्घ्यं०।

दीप्त जोति जो कारमाणकी, रहै निरन्तर लारा ।
जहा तहा नहिं विखरैं किन ज्यो, वहै एक ही धारा।।
तैजस नामा वधन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भये अवध अकाय अनूपम, जजू भक्ति उरधारा।।७७।।

ॐ ह्रीं तैजसवन्धनरहिताय नम अर्घ्यं०।

द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादिक, मुद्गल जाति पसारा ।
एक क्षेत्र अवगाही जियको, दुविधि भाव करतारा।।
कारमाण यह वधन तुमने, छेद कियो निरधारा ।
भये अवध अकाय अनूपम, जजू भक्ति उरधारा।।७८।।

ॐ ह्रीं कार्माणवन्धनरहिताय नम अर्घ्यं०।

रोला

तन आकृति सस्थान आदि, समचतुरस्र वखानो,
ऊपर तले समान् यथाविधि सुन्दर जानो ।
यह विपरीत स्वरूप त्याग, पायो निजात्म पद,
बीजभूत कल्याण नमू, भव्यनि प्रति सुखप्रद।।७९।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्रसस्थानविमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

ऊपर से हो थूल तले हो न्यून देह जिस, ।
परिमण्डलनिग्रोध नाम वरणो सिद्धात तिस।।यह विपरीत०।।८०।।

ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमण्डलसस्थाननरहिताय नम अर्घ्यं०।

नीचेसे हो थूल न्यून होवे उपराही,
वमई सम वामीक देह जिन आज्ञा माही।।यह विपरीत०।।८१।।

ॐ ह्रीं वामीकसस्थानरहिताय नम. अर्घ्यं०।

जो कूवड आकार रूप पावे तन प्राणी,
कुव्ज नाम सस्थान ताहि वरणैं जिनवानी।।यह विपरीत०।।८२।।

ॐ ह्रीं कुब्जकनामसस्थानरहिताय नम अर्घ्यं०।

लघु सो ठिगना रूप गात तन होवे जाको,
वामन है परमित लोक मैं कहिये ताको ।।यह विपरीत०।।८३।।

ॐ ह्रीं वामनसंस्थानरहिताय नम अर्घ्यं०।

जिन तिन का आकार कहीं नहिं हो सरधान,
हुंडक अति असुहावन पाप फल प्रगट उचारू ।।यह विपरीत०।।८४।।

ॐ ह्रीं हुंडकसंस्थानरहिताय नम अर्घ्यं०।

लक्ष्मीधरा

जीव आत्मभावनो जु कर्मणी क्रिया करेत,
अंग वा उपांग सो शरीर के उदय समेत ।
सो औदारिकी शरीर अंग वा उपांग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ।।८५।।

ॐ ह्रीं औदारिकांगोपांगरहिताय नम अर्घ्यं०।

देव नारकी शरीर मांस रक्त से न होत,
तास को अनेक भांति आप देनके उद्योत ।
वैक्रियिक सो शरीर अंग वा उपांग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ।।८६।।

ॐ ह्रीं वैक्रियिकांगोपांगरहिताय नम अर्घ्यं०।

साधु के शरीर मूल-ते कढ़े प्रशस्तयोग,
संशय को विध्वंसकार केवली सु लेत भोग ।
आहारक सो शरीर अंग वा उपांग नाश,
सिद्धरूप हो नमो सु पाइयो अबाध वास ।।८७।।

ॐ ह्रीं आहारकांगोपांगरहिताय नम अर्घ्यं०।

गीता

संहनन बन्धन हाड होय अभेद वज्र सो नाम है,
नाराच कीली वृषभ डोरी बांधने की ठाम है ।
है आदि को जो संहनन जिम वज्र सब परकार हो,
यह त्याग बंध-अबंध निवसौ परम आनन्द धार हो ।।८८।।

ॐ ह्रीं वज्रर्षभनाराचसंहननरहिताय नम अर्घ्यं०।

ज्यों वज्रकी कीली ठुकी हो हाड संधी मे जहा,
सामान्य वृषभ जु जेवरी ताकरि बंधाई हो तहा ।

है दूसरा सहनन यह नाराच वज्र प्रकार हो,
यह त्याग बध-अबध निवसौ परम आनदधार हो ।।८९।।

ॐ ह्रीं वज्रनाराचसहननरहिताय नम अर्घ्यं०।

नहिं वज्र की हो वृषभ अरु,नाराच भी नही वज्र हो,
सामान्य कीली करि ठुकी,सब हाड वज्र समान हो ।
है तीसरा सहनन जो, नाराच ही परकार हो,
यह त्याग बध-अबध निवसौ, परम आनदधार हो ।।९०।।

ॐ ह्रीं नाराचसहननरहिताय नम अर्घ्यं०।

हो जडित छोटी कीलिका, सो सँधि हाडो की जबै,
कछु ना विशेषण वज्र के,सामान्य ही होवे सबै ।
है चौथवा सहनन जो, नाराच अर्द्ध प्रकार हो,
यह त्याग बध-अबध निवसौ, परम आनदधार हो ।।९१।।

ॐ ह्रीं अर्द्धनाराचसहननरहिताय नम अर्घ्यं०।

जो परस्पर जडित होवे, सँधि हाडनकी जहा,
नहिं कीलिका सो ठुकी होवे, साल सधी के तहा ।
है पाचवा सहनन जो, कीलक नाम कहाय हो,
यह त्याग बध-अबध निवसौ, परम आनदधार हो ।।९२।।

ॐ ह्रीं कीलिकसहननरहिताय नम अर्घ्यं०।

कछु छिद्र कछुक मिलाप होवे, सँधि हाडोमय सही,
केवल नसासो होय बेढी, माससो लतपत रही ।
अंतिम स्फाटिक सहनन यह, हीन शक्ति असार हो,
यह त्याग बध-अबध निवसौ, परम आनदधार हो ।।९३।।

ॐ ह्रीं स्फाटिकसहननरहिताय नम अर्घ्यं०।

दोहा

वर्ण विशेष न स्वेत है, नामकर्म तन धार ।
स्वच्छ स्वरूपी हो नमू ताहि कर्मरज टार ।।९४।।

ॐ ह्रीं स्वेतनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

वर्ण विशेष न पीत है, नामकर्म तन धार ।।स्वच्छ०।।

ॐ ह्रीं पीतनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं० ।।९५।।

वर्ण विशेष न रक्त है नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं रक्तनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।९६।।
वर्ण विशेष न हरित है नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं हरितनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।।९७।।
वर्ण विशेष न कृष्ण है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं कृष्णनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।।९८।।
गंध विशेष न शुभ कहो नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं सुगन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।९९।।
गंध विशेष न अशुभ है नाम कर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं दुर्गन्धनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।।१००।।
स्वाद विशेष न तिक्त है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं तिक्तरसरहिताय नमः अर्घ्यं०।।१०१।।
स्वाद विशेष न कटुक है नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं कटुकरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०२।।
स्वाद विशेष न आम्ल है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं आम्लरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०३।।
स्वाद विशेष न मधुर है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं मधुररसरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०४।।
स्वाद विशेष न कषाय है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं कषायरसरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०५।।
फर्स विशेष न नर्म है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं मृदुत्वस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०६।।
फर्स विशेष न कठिन है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं कठिनस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०७।।
फर्स विशेष न भार है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं गुरुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०८।।
फर्स विशेष न अगुरु है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं लघुस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१०९।।

फर्स विशेष न शीत है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं शीतस्पर्शरहिताय नम अर्घ्यं० ।।११०।।
फर्स विशेष न उष्ण है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।१११।।
फर्स विशेष न चिकण है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शरहिताय नम· अर्घ्यं० ।।११२।।
फर्स विशेष न रूक्ष है, नामकर्म तन धार।।स्वच्छ०।।
ॐ रूक्षस्पर्शरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।११३।।

मरहठ

हो जो प्रजाप्त वर, पणइन्द्रीधर, जाय नर्क निरधार,
विग्रहसु चाल मे, अतराल मे, धरै पूर्व आकार ।
सो नर्क नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार ।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार।।११४।।
ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वीछेदकाय नम· अर्घ्यं०।
निजकाय छाडकरि, अत समय मरि, होय पशू अवतार,
विग्रहसु चाल मे, अन्तराल मे, धरैं पूर्व आकार ।
सो तिर्यंच नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार ।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहूँ भवपार।।११५।।
ॐ ह्रीं तिर्यचगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नम· अर्घ्यं०।
समकितसो मर वा कलेश करि, धरहि देवगति चार ।
विहग्रसु चाल मे, अन्तराल मे, धरै पूर्व आकार।।
सो देव नामकरि, गावत गणधर, आनुपूर्वी सार ।
तुम ताहि नशायो, शिवगति पायो, नमित लहू भवपार।।११६।।
ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नम· अर्घ्यं०।
हो मिश्र प्रणामी वा शिवगामी वरै मनुजगति सार,
विग्रहसु चाल मे अन्तराल मे धरै पूर्व आकार ।
सो मनुष्य नामकरि गावत गणधर, आनूपूर्वी सार ।
तुम ताहि नशायो शिवगति पायो नमित लहू भवपार।।११७।।
ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वीविमुक्ताय नम· अर्घ्यं०।

त्रोटक

तनभार भए निज घात ठने, तिनकी कछु विधि ऐसी जु बने ।
अपघात सुकर्म सिद्धान भनो, जग पूज्य भए तसु मूल हनो ।।११८।।

ह्रीं अपघातकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

विष आदि अनेक उपाधि धरे पर प्राणनिको निर्मूल करे ।
परघात नु कर्म सिद्धान भनो जग पूज्य भए तिन मूल हनो ।।११९।।

ॐ ह्रीं परघातनामककर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

अति तेजमई, परदीप्त महा, रवि-बिम्ब विषै जिय भूमि लहा ।
यह आतप कर्म सिद्धान भनो जग पूज्य भये तिन मूल हनो ।।१२०।।

ॐ ह्रीं अतितेजमयी आतप-नामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

परकाशमई जिम बिंब शशी, पृथिवी जिय पावत देह इसी ।
उद्योत नाम सुकर्म सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तिन मूल हनो ।।१२१।।

ॐ ह्रीं उद्योतनामकर्मरहिताय नम. अर्घ्यं०।

तन की थिति कारन स्वास गहै, स्वर अन्तर बाहर भेद वहै ।
यह स्वास सुकर्म सिद्धान भनो, जग पूज्य भये तिन मल हनो ।।१२२।।

ॐ ह्रीं स्वासकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

शुभ चाल चलै अपनी जिनमे, शशि ज्यो नभ सोहत है तिसमे ।
नभमें गति कर्म सिद्धान भनो, जग पूज्य भये तिम मूल हना ।।१२३।।

ॐ ह्रीं विहायोगतिनाम-कर्मवियमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

द्वय इन्द्रिय आन विशेष मई, चतुर्गति सुभावक प्राप्त भई ।
त्रस नाम सुकर्म सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तिम मूल हनो ।।१२४।।

ॐ ह्रीं त्रसनामकर्मवियमुक्ताय नम अर्घ्यं०।

इक इन्द्रिय जानहि पावत है, अरु शेष न ताहि धरावत है ।
यह थावर कर्म सिद्धान भनो, जग पूज्य भये तिम मूल हनो ।।१२५।।

ॐ ह्रीं स्थावरनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

पर मे परवेश न आप करै, पर को निज मे नहि आप धरै ।
यह बादर कर्म सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तिम मूल हनो ।।१२६।।

ॐ ह्रीं बादरनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

जलसो दवसो नही आप मरै, सब ठौर रहै पर को नम हरै ।
यह सूक्षम कर्म सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो।।१२७।।

ॐ ह्रीं सूक्ष्मनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

जिसते परिपूरणता करि है, जिन शक्ति समान उदय धरि है ।
पर्याप्त सुकर्म सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तिस मूल हनो।।१२८।।

ॐ ह्रीं पर्याप्तकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

परिपूरणता नहि धार सके, यह होत सभी साधारण के ।
अपरयापति कर्म सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो।।१२९।।

ॐ ह्रीं अपर्याप्तकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

जिम लोहन भार धरे तन मे, जिम आकन फूल उडे वन मे ।
है अगुरुलघु यह भेद भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो।।१३०।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

इक देह विषे इक जीव रहे, इकलो तिसको सब भोग लहे ।
परतेक सुकम सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो।।१३१।।

ॐ ह्रीं प्रत्येककर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

इक देह विषे बहु जीव रहै, इक साथ सभी तिस भोग लहै ।
यह भेद निगोद सिद्धात भनो, जग पूज्य भये तसु मूल हनो।।१३२।।

ॐ ह्रीं साधारणनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

उपेन्द्रवज्रा

चलै न जो धातु तजै न वासा, यथाविधि आप धरै निवासा ।
यही प्रकारा थिर नाम भासो, नमामि देव तिस देह नासो।।१३६।।

ॐ ह्रीं स्थिरनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

अनेक थान मुख गौण धात, चलंति धार निजवासघात ।
यही प्रकाराऽथिर नाम भासो, नमामि देव तिस देह नासो।।१३४।।

ॐ ह्रीं अस्थिरनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

यथाविधी देह विशाल सोहै, मुखारविंदादिक सर्व मोहै ।
यही प्रकारा शुभ नाम भासो, नमामि देव तिस देह नासो।।१३५।।

ॐ ह्रीं शुभनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

अशुन्दराकार शरीर माही, लखो जहाँसो विडरूप ताही ।
यहै प्रकाराऽशुभ नाम भासो, नमामि देव तिस देह नासो।।१३६।।

ॐ ह्रीं अशुभनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं० ।

अनेक लोकोत्तम भावधारी, करैं सभी तापर प्रीति भारी ।
नुभगता को यह भेद भासो, नमामि देव तिस देह नासो।।१३७।।

ॐ ह्रीं सुभगनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

धरै अनेका गुण तो न जासो, करैं कभी प्रीति न कोई तासो ।
दुर्भाग ताको यह भेद भासो, नमामि देव तिस देह नासो।।१३८।।

ॐ ह्रीं दुर्भगनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

ध्वनि वीन भाँति ज्यों मधुर वैन, निसरै पिक आदिक सुरस दैन ।
यह सुस्वर नाम प्रकृति कहाय, तुम हनी नमूं निज शीस लाय।।१३९।।

ॐ ह्रीं सुस्वरनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

गर्भभस्वर जैसो कहो भाम, तैसो रव अशुभ कहो सु भास ।
यह दुस्वर नाम प्रकृति कहाय,तुम हनी नमूं निज शीस लाय।।१४०।।

ॐ ह्रीं दुस्वरनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

अडिल्ल

होत प्रभामई कांति महा रमणीक जू ।
जग जन मन भावन माने यह ठीक जू।।
यह आदेय सुप्रकृति नाश निजपद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हैं हम अघ दहो।।१४१।।

ॐ ह्रीं आदेयनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

रूखो मुखको वरण लेश नहिं कांतिको ।
रूखे केश नखाकृति तन वढ़ भांतिको।।
अनादेय यह प्रकृति नाश निजपद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्है हम अघ दहो।।१४२।।

ॐ ह्रीं अनादेयनामकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

होत गुप्त गुण तौ भी जगमे विस्तरैं ।
जगजन सुजस उचारत ताकी थुति करैं।।

यह जस प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ।।१४३।।

ॐ ह्रीं यश प्रकृतिछेदकाय नम अर्घ्यं०।

जासु गुणनको औगुण कर सव ही ग्रहै ।
करत काज परशंसित पण निंदित कहैं ।।
अपयश प्रकृति विनाश सुभावी यश लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हे हम अघ दहो ।।१४४।।

ॐ ह्रीं अपयश नामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

योग थान नेत्रादिक ज्यो के त्यो वनो ।
रचित चतुर कारीगर करते है तनो ।।
यह निर्माण विनाश सुभावी पद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ।।१४५।।

ॐ ह्रीं निर्माणनामकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

पचकल्याणक चौंतिस अतिशय राजही ।
प्रातिहार्य अठ समोसरण द्युति छाजही ।।
तीर्थंकर विधि विभव नाश निजपद लहो ।
ध्यावत हैं जगनाथ तुम्हें हम अघ दहो ।।१४६।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरप्रकृतिरहिताय नम अर्घ्यं०।

चाल

जो कुम्भकार की नाई, छिन घट छिन करत सुराई ।
सो गोत कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१४७।।

ॐ ह्रीं गोत्रकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

लोकनिमें पूज्य प्रधाना, सव करत विनय सनमाना ।
यह ऊच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१४८।।

ॐ ह्रीं उच्चगोत्रकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

जिसको सव कहत कमीना, आचरण धरे अति हीना ।
यह नीच गोत्र परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१४९।।

ॐ ह्रीं नीचगोत्रकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

ज्यो दे न सके भण्डारी, परधन को हो रखवारी ।
यह अन्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५०।।
ॐ ह्रीं अन्तरायकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

हो दान देन को भावा, दे सके न कोटि उपावा ।
दानातराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५१।।
ॐ ह्रीं दानातरायकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

मन दान लेन को भावे, दातार प्रसग न पावै ।
लाभातराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।१५२।।
ॐ ह्रीं लाभातरायकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

पुष्पादिक चाहै भोगा, पर पाय न अवसर योगा ।
भोगातराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५३।।
ॐ ह्रीं भोगातरायकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

तिय आदिक बारम्बारा, नहि भोग सके हितकारा ।
उपभोगातराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५४।।
ॐ ह्रीं उपभोगातरायकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

चेतन निज बल प्रकटावे, यह योग कबहु नहि पावे ।
वीर्यान्तराय परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५५।।
ॐ ह्रीं वीर्यान्तरायकर्मरहिताय नम' अर्घ्यं०।

ज्ञानावरणादिक नामी, निज काज उदय परिणामी ।
अठ भेद कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५६।।
ॐ ह्रीं अष्टकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

इकसौ अडताल प्रकारी, उत्तर विधि सत्ता धारी ।
सब प्रकृति कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५७।।
ॐ ह्रीं एकशताष्टचत्वारिंशत् कर्मप्रकृतिरहिताय नम अर्घ्यं०।

परणाम भेद सख्याता, जो वचन योग मे आता ।
सख्यात कर्म परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५८।।
ॐ ह्रीं सख्यातकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

है वचनसो अधिकाई, परिणाम भेद दुखदाई ।
विधि असख्यात परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१५९।।
ॐ ह्रीं असख्यातकर्मरहिताय नम अर्घ्यं०।

अविभाग प्रछेद अनन्ता, जो केवलज्ञान लहन्ना ।
यह कर्म अनन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।१६०।।
ॐ ह्रीं अनन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।
सब भाग अनन्तानन्ता, यह सूक्ष्मभाव धरन्ता ।
विधि नन्तानन्त परजारा, हम पूज रचो सुखकारा।।१६१।।
ॐ ह्रीं अनन्तानन्तकर्मरहिताय नमः अर्घ्यं०।

मोतियादाम

न हो परिणाम विषै कछु खेद, सदा इकसा प्रणवै त्रिन भेद ।
निजाश्रित भाव रमै सुखधाम, करूं तिस आनन्दको परिणाम।।
ॐ ह्रीं आनन्दस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।।१६२।।
धरे जितने परिणामन भेद, विशेषनि तैं सब ही विन खेद ।
पराश्रिता विन आनन्द धम, नमूं तिन पाय लहूं पद शर्म।।
ॐ ह्रीं आनन्दधर्माय नमः अर्घ्यं० ।।१६३।।
न हो परयोग निमित्त विभाव, सदा निवसै निज आनन्द भाव ।
यही वरणो परमानन्द धम, नमूं तिन पाय लहूं पद पर्म।।
ॐ ह्रीं परमानन्दधर्माय नमः अर्घ्यं० ।।१६४।।
कबहु परसो कछु द्वेष न होत, कबहु पुनि हर्ष विशेष न होत ।
रहै नित ही निज भावन लीन, नमूं पद साम्य सुभाव सु लीन।।
ॐ ह्रीं साम्यस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।।१६५।।
निजाकृति मे नहि लेश कषाय, अमूरति शांतिमई सुखदाय ।
आकुलता बिन साम्य स्वरूप, नमूं तिनको नित आनन्द रूप।।
ॐ ह्रीं साम्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।१६६।।
अनन्त गुणातम द्रव पर्याय, यही विधि आप धरै बहु भाय ।
सभी कुमति करि हो अलखाय, नमूं जिनवैन भली विधि गाय।।
ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।१६७।।
अनन्त गुणातम रूप कहाय, गुणी-गुण भेद सहा प्रणमाय ।
महागुण स्वच्छमयी तुम रूप, नमूं तिनको पद पाइ अनूप।।
ॐ ह्रीं अनन्तगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।१६८।।

अभेद सुभेद अनेक सु एक, धरो इन आदिक धर्म अनेक ।
विरोधित भावनसो अविरुद्ध, नमू जिन आगम की विधि शुद्ध ।।

ॐ ह्रीं अनन्तधर्माय नम अर्घ्यं० ।।१६९।।

रहै धर्मी नित धर्म सरूप, न हो परदेशनसो अन्यरूप ।
चिदातम धर्म सभी निजरूप, धरो प्रणमू मन भक्ति स्वरूप ।।

ॐ ह्रीं अनन्तधर्मस्वरूपाय नम. अर्घ्यं० ।।१७०।।

चौपाई

हीनाधिक नही भाव विशेष, आतमीक आनन्द हमेश ।
सम स्वभाव सोई सुखराज, प्रणमू सिद्ध मिटै भवभास ।।

ॐ ह्रीं समस्वभावाय नम अर्घ्यं० ।।१७१।।

इष्टानिष्ट मिटो भ्रम जाल, पायो निज आनन्द विशाल ।
साम्य सुधारसको नित भोग, नमू सिद्ध सन्तुष्ट मनोग ।।

ॐ ह्रीं सतुष्टाय नम अर्घ्यं० ।।१७२।।

पर पदार्थ को इच्छुक नाहि, सदा सुखी स्वातम पद माहि ।
मेटो सकल राग अरु दोष, प्रणमू राजत सम सन्तोष ।।

ॐ ह्रीं समसतोषाय नम अर्घ्यं० ।।१७३।।

मोह उदय सब भाव नसाय, मेटो पुद्गलीक पर्याय ।
शुद्ध निरजन समगुण लहो, नमू सिद्ध परकृत दुख दहो ।।

ॐ ह्रीं साम्यगुणाय नम अर्घ्यं० ।।१७४।।

निजपदसो थिरता नहि तजैं, स्वानुभूत अनुभव नित भजैं ।
निरबाध तिष्ठै अविकार, साम्यस्थाई गुण भण्डार ।।

ॐ ह्रीं साम्यस्थाय नम अर्घ्यं० ।।१७५।।

भव सम्बन्धी काज निवार, अचल रूप तिष्ठै समधार ।
कृत्याकृत्य साम्य गुण पाइयो, भक्ति सहित हम शीश नाइयो ।।

ॐ ह्रीं साम्यकृत्याकृत्यगुणाय नम अर्घ्यं० ।।१७६।।

झूलना

भूल नही भय करैं, छोभ नाही धरैं, गैरकी आसको त्रास नाही धरैं
शरण काकी चहै, सबनको शरण है, अन्य की शरण विन नमू ताही वरैं ।

ॐ ह्रीं अनन्यशरणाय नम अर्घ्यं० ।।१७७।।

द्रव्य षट्मे नही, आप गुण आप ही, आप मे राजते सहज नीको सही ।
स्वगुण अस्तित्वता, वस्तुकी वस्तुता, धरत हो मैं नमू आपही को स्वता।।

ॐ ह्रीं अनन्यगुणाय नम अर्घ्यं० ।।१७८।।

गैर से गैर हो आपमे रमाइयो, स्व चतुर खेत मे वास तिन पाइयो ।
धर्म समुदाय हो परमपद पाइयो, मै तुम्हे भक्तियुत शीश निज नाइयो।।

ॐ ह्रीं अनन्यधर्माय नम अर्घ्यं० ।।१७९।।

साधना जबतई, होत है तबतई, दोउ परिमाण को काज जामे नही ।
आप निजपद लियो, तिन जलाजलि दियो, अन्य नही चहत निज शुद्धता मे लियो ।।

ॐ ह्रीं परिमाणविमुक्ताय नम अर्घ्यं० ।।१८०।।

तोमर

दृग ज्ञान पूरणचन्द्र, अकलक ज्योति अमन्द ।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप।।१८१।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

सब ज्ञानमयी परिणाम, वर्णादिको नहिं काम ।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप।।१८२।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मरूपाय नम अर्घ्यं०।

निज चेतनागुण धार, बिन रूपहो अविकार ।
निरद्वन्द ब्रह्मस्वरूप, नित पूजहूँ चिद्रूप।।१८३।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मचेतनाय नम अर्घ्यं०।

सुन्दरी

अन्य रूप सु अन्य रहै सदा, पर निमित्त विभाव न हो कदा ।
कहत हैं मुनि शुद्ध सुभावजी, नमू सिद्ध सदा तिन पायजी।।१८४।।

ॐ ह्रीं शुद्धस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

पर परिणामनसो नहिं मिलत हैं, निज परिणामनसो नहिं चलत हैं ।
परिणामी शुद्ध स्वरूप एह, नमू सिद्ध सदा नित पाय तेह।।१८५।।

ॐ ह्रीं शुद्धपारिणामिकाय नम अर्घ्यं०।

वस्तुता व्यवहार नही ग्रहै, उपस्वरूप असत्यारथ कहै ।
शुद्ध स्वरूप न ताकरि साध्य है, निर्विकल्प समाधि अराध्य है।।१८६।।

ॐ ह्रीं अशुद्धरहिताय नम अर्घ्यं०।

द्रव्य पर्यायार्थिक नय दोऊ, स्वानुभव मे विकलप नहिं कोऊ ।
सिद्ध शुद्धाशुद्ध अतीत हो, नमत तुम निज पद परतीत हो।।१८७।।

ॐ ह्रीं शुद्धाशुद्धरहिताय नम अर्घ्यं०।

चौपाई

क्षय उपशम अवलोकन टारो, निज गुण क्षाइक रूप उघारो ।
युगपत सकल चराचर देखा, ध्यावत हू मन हर्ष विशेषा।।१८८।।

ॐ ह्रीं अनन्तदृगस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

जव पूरण अवलोकन पायो, तब पूरण आनन्द उपायो ।
अविनाभाव स्वय पद देखा, ध्यावत हू मन हर्ष विशेषा।।१८९।।

ॐ ह्रीं अनन्तदृगानन्दस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

नाश सु पूर्वक हो उतपादा, सत लक्षण परिणति मरजादा ।
क्षय उपशम तन क्षायक पेखा, ध्यावत हू मन हर्ष विशेषा।।१९०।।

ॐ ह्रीं अनन्तदृगुत्पादकाय नम अर्घ्यं०।

नित्य रूप निज चित पद माही, अन्य रूप पलटन हो नाही ।
द्रव्य-दृष्टि मे यह गुण देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९१।।

ॐ ह्रीं अनन्तध्रुवाय नम अर्घ्यं०।

कर्म नाश जो स्व-पाद पावै, रञ्च मात्र फिर अन्त न आवै ।
यह अव्यय गुण तुममें देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९२।।

ॐ ह्रीं अव्ययभावाय नम अर्घ्यं०।

पर नहिं व्यापै तुम पद माही, पर में रमण तुम नाही ।
निज करि निज मे निज लय देखा, ध्यावत हूँ मन हर्ष विशेषा।।१९३।।

ॐ ह्रीं अनन्तनिलयाय नम अर्घ्यं०।

शंखनारी

अनताभिधानो गुणकार जानो। धरो आप सोई, नमू मान खोई।।१९४।।

ॐ ह्रीं अनन्ताकाराय नम अर्घ्यं०।

अनता स्वभावा, विशेषन उपावा। धरो आप सोई, नमू मान खोई।।१९५।।

ॐ ह्रीं अनन्तस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

विनाकाररूपा यह चिन्मयस्वरूपा । धरो आप सोइ, नमूं मान खोइ ।।१९६।।

ॐ ह्रीं चिन्मयस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

सदा चेतनामें, न हो अन्यता में । धरो आप सोइ, नमूं मान खोइ ।।१९७।।
ॐ ह्रीं चिद्रूपाय नम अर्घ्यं०।

दोहा

जो कुछ भाव विशेष है, सब चिद्रूपी धर्म ।
असाधारण पूरण भये, नमत नशे सब कर्म ।।१९८।।
ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नम अर्घ्यं०।

परकृति व्याधि विनाशके, निज अनुभव की प्राप्त ।
भई, नमूं तिनको, लहूँ, यह जगवास समाप्त ।।१९९।।
ॐ ह्रीं स्वानुभवोपलब्धिरमाय नम अर्घ्यं०।

निरावरण निज ज्ञान करि, निज अनुभव की डोर ।
गहो लहो थिरता रहो, रमण ठौर नहीं और ।।२००।।
ॐ ह्रीं स्वानुभूतिरताय नम अर्घ्यं०।

सरवोत्तम लौकीक रस-सुधा कुरस सब त्याग ।
निज पद परमामृत रसिक, नमूं चरण बडभाग ।।२०१।।
ॐ ह्रीं परमामृतरताय नम अर्घ्यं०।

विषयामृत विषसम अरुचि, अरस अशुभ असुहान ।
जान निजानन्द परमरस, तुष्ट सिद्ध भगवान ।।२०२।।
ॐ ह्रीं परमामृततुष्टाय नम अर्घ्यं०।

शकातीत अतीतसो, धरै प्रीति निज मांहि ।
अमल हिये सतनि प्रिये, परम प्रीति नमूं ताहि ।।२०३।।
ॐ परमप्रीताय नम अर्घ्यं०।

अक्षय आनन्द भाव युत, नित हितकार मनोग ।
सज्जन चित वल्लभ परम, दुर्जन दुर्लभ योग ।।२०४।।
ॐ ह्रीं परमवल्लभयोगाय नम अर्घ्यं०।

शब्द गन्ध रस फरस नहिं नही वरण आकार ।
बुद्धि गहै नहिं पार तुम, गुप्त भाव निरधार।।२०५।।

ॐ ह्रीं अव्यक्तभावाय नम अर्घ्यं०।

सर्व दर्वसो भिन्न हैं, नहिं अभिन्न तिहुँ काल ।
नमू सदा परकाश धर, एकहि रूप विशाल।।२०६।।

ॐ ह्रीं एकत्वस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

सर्व दर्वसो भिन्नता, निज गुण निज मे वास ।
नमू अखड परमातमा, सदा सुगुण की राश।।२०७।।

ॐ ह्रीं एकत्वगुणाय नम अर्घ्यं०

सर्व दर्व परिणामसो, मिलै न निज परिणाम ।
नमू निजानद ज्योति घन, नित्य उदय अभिराम।।२०८।।

ॐ ह्रीं एकत्वभावाय नम अर्घ्यं०।

चौपाई

पर सयोग तथा समवाय, यह सवाद न हो द्वै भाय ।
नित्य अभेद एकता धरो, प्रणमू द्वैत भाव तुम हरो।।२०९।।

ॐ ह्रीं द्वैतभावविनाशकाय नम अर्घ्यं०।

पूरव पर्याय नासियो सोई, जाको फिरत उतपात न होई ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमू सुखधाम।।२१०।।

ॐ ह्रीं शाश्वताय नम अर्घ्यं०।

निर्विकार निर्मल निजभाव, नित्य प्रकाश अमन्द प्रभाव ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमू सुखधाम।।२११।।

ॐ ह्रीं शाश्वतप्रकाशाय नम अर्घ्यं०।

निरावरण रवि बिम्ब समान, नित्य उद्योत धरो निज ज्ञान ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत रूप नमू सुखधाम।।२१२।।

ॐ ह्रीं शाश्वतोद्योताय नम अर्घ्यं०।

ज्ञानानद सुधाकर चन्द्र, सोहत पूरण ज्योति अमन्द ।
अव्यय अविनाशी अभिराम, शाश्वत, रूप नमू सुखधाम।।२१३।।

ॐ ह्रीं शाश्वतामृतचन्द्राय नम अर्घ्यं०।

ज्ञानानन्द सुधारस धार, निर्विच्छेद अभेद अपार ।
अव्यय अविनाशी अभिगम, शाश्वत रूप नमू सुखधाम।।२१४।।
ॐ ह्रीं शाश्वतामूर्तये नम अर्घ्यं०।

पद्धडी

मन-इन्द्रिय ज्ञान न पाय जेह, हे सूक्षम नाम सरूप तेह ।
मनपर्यय जाकू नाहि पाय, सो सूक्षम परम सुगुण नमाय।।२१५।।
ॐ ह्रीं परमसूक्ष्माय नम अर्घ्यं०।

वहु राशि नभोदर मे समाय, प्रत्यक्ष स्थूल ताको न पाय ।
इकसो इकको वाधा न होहि, सूक्षम अविकाशी नमो सोहि।।२१६।।
ॐ ह्रीं सूक्ष्मावकाशाय नम अर्घ्यं०।

नभ गुण ध्वनि हो यह जोग नाहि,
हो जिसो गुणी गुण तिसो ताहि ।
सो राजत हो सूक्षम स्वरूप,
नमहूँ तुम सूक्षम गुण अनूप।।२१७।।
ॐ ह्रीं सूक्ष्मगुणाय नम अर्घ्यं०।

तुम त्याग द्वैतताको प्रसग, पायौ एकाकी छवि अभग ।
जाको कवहूँ अनुभव न होय, नमू परमरूप है गुप्त सोय।।२१८।।
ॐ ह्रीं परमरूपगुप्ताय नम अर्घ्यं०।

त्रोटक

सर्वार्थविमानिक देव तथा, मन इन्द्रिय भोगन शक्ति यथा ।
इनके सुखको एक सीम सही, तुम आनदको पर अन्त नही।।२१९।।
ॐ ह्रीं निरवधिसुखाय नम अर्घ्यं०।

जगजीवनिको नहिं भाग्य यहै,
निज शक्ति उदय करि व्यक्ति लहै ।
तुम पूरण क्षायक भाव लहो,
इम अन्त बिना गुणरास गहो।।२२०।।
ॐ ह्रीं निरवधिगुणाय नम अर्घ्यं०।

भवि-जीव सदा यह रीति धरे, नित नूतन पर्य विभाव धरे ।।
तिस कारण को सब व्याधि दहो, तुम पाइ सुरूप जु अन्त न हो।।२२१।।
ॐ ह्रीं निरवधिस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

अवधि मनपर्य सु ज्ञान महा, द्रव्यादि विषैं मरजाद लहा ।
तुम ताहि उलघ सुभावमई, निजबोध लहो जिस अन्त नही।।२२२।।

ॐ ह्रीं अतुलज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

तिहुं काल तिहूँ जग के सुख को, कर वार अनत गुणा इनको ।
तुम एक समय सुख की समता, नही पाय नमू मन आनदता।।२२३।।

ॐ ह्रीं अतुलसुखाय नम अर्घ्यं०।

नाराच

सर्व जीव राशके, सुभाव आप जान हो ।
आपके सुभाव अश, औरकौ न ज्ञान हो।।
सो विशुद्ध भाव पाय, जासकौ न अन्त हो ।
राजहो सदीव देव, चरणदास 'सत' हो।।२२४।।

ॐ ह्रीं अतुलभावाय नम अर्घ्यं०।

आपकी गुणौघ वेलि फैलि है अलोकलो ।
शेष से भ्रमाय पत्रकी न पाय नोकलो।।
सो विशुद्ध भाव पाय जासकौ न अन्त हो ।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो।।२२५।।

ॐ ह्रीं अतुलगुणाय नम अर्घ्यं०।

सूर्यको प्रकाश एक-देश वस्तु भास ही ।
आपको सुज्ञान भान सर्वथा प्रकाश ही।।
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो ।
राजहो सदीव देव चरणदास 'सन्त' हो।।२२६।।

ॐ ह्रीं अतुलप्रकाशाय नम अर्घ्यं०।

तास रूप को गही न फेरि जास नाश हो ।
स्वात्मवास में विलास आस त्रास नाश हो।।
सो विशुद्ध भाव पाय जासको न अन्त हो ।
राजहो सदीव देव चरण दास 'सन्त' हो।।२२७।।

ॐ ह्रीं अचलाय नम अर्घ्यं०।

सोरठा

मोहादिक रिपु जीति, निजगुण निधि सहजे लहो ।
विलसो सदा पुनीति, अचल रूप बन्दो सदा।।२२८।।

ॐ ह्रीं अचलगुणाय नम अर्घ्यं०।

उत्तम क्षाइक भाव, क्षय उपशम सब गये विनशि ।
पायो सहज सुभाव, अचल रूप वन्दो सदा।।२२९।।

ॐ ह्रीं अचलस्वभावाय नम अर्घ्यं०।

अथिर रूप ससार, त्याग सुथिर निजरूप गहि ।
रहो सदा अविकार, अचल रूप वन्दो सदा।।२३०।।

ॐ ह्रीं अचलस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

मोतियादाम

निराश्रित स्वाश्रित आनदधाम, परै परसो न परै कछु काम ।
अविन्दु अबधु अबध अमद, करू पद-वद रहू सुखवृन्द।।२३१।।

ॐ ह्रीं निरालम्बाय नम अर्घ्यं०।

अराग अदोष अशोक अभोग, अनिष्ट सयोग न इष्ट वियोग ।
अविन्दु अबधु अबध अमद, करू पद-वद रहू सुखवृन्द।।२३२।।

ॐ ह्रीं आलम्बरहिताय नम अर्घ्यं०।

अजीव न जीव न धर्म-अधर्म, न काल अकाश लहै तिस धर्म ।
अबिन्दु अबधु अबध अमद, करू पद-वद रहू सुखवृन्द।।२३३।।

ॐ ह्रीं निर्लेपाय नम अर्घ्यं०।

अवर्ण अकर्ण अरूप अकाय, अयोग असयमता अकषाय ।
अबिन्दु अबधु अबध अमद करू पद-वद रहू सुखवृन्द।।२३४।।

ॐ ह्रीं निष्कषाय नम अर्घ्यं०।

न हो परसो रुष-राग विभाव, निजातम मे अवलीन स्वभाव ।
अबिन्दु अबधु अबध अमन्द, करू पद-वन्द रहू सुखवृन्द।।२३५।।

ॐ ह्रीं आत्मरतये नम अर्घ्यं०।

दोहा

निज स्वरूप मे लीनता, ज्यो जल पुतली खार ।
गुप्त-स्वरूप नमू सदा, लहू भवार्णव पार।।२३६।।

ॐ ह्रीं स्वरूपगुप्ताय नम अर्घ्यं०।

जो है सो है और नहिं, कछु निश्चय-व्यवहार ।
शुद्ध द्रव्य परमातमा, नमू शुद्धता धार।।२३७।।

ॐ ह्रीं शुद्धद्रव्याय नम अर्घ्यं०।

पूर्वोत्तर सन्तति तनी, भव भव छेद कराय ।
असंसार पदको नमू यह भव वास नशाय।।२३८।।
ॐ ह्रीं असंसाराय नमः अर्घ्यं० ।

नागरूपिणी तथा अर्धनाराच

हरो सहाय कर्णको, सुभोगता विवर्ण को ।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही।।२३९।।
ॐ ह्रीं स्वानन्दाय नमः अर्घ्यं० ।

न हो विभावता कदा, स्वभाव में सुखी सदा ।
निजातमीक एक ही लहो अनन्द तास ही।।२४०।।
ॐ ह्रीं स्वानन्दभावाय नमः अर्घ्यं० ।

अछेद रूप सर्वथा, उपाधि की नहीं व्यथा ।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही।।२४१।।
ॐ ह्रीं स्वानन्दस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।

दुभेदता न वेद हो, सचेतना अभेद ही ।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही।।२४२।।
ॐ ह्रीं स्वानन्दगुणाय नमः अर्घ्यं० ।

न अन्यकी परवाह है, अचाह है, न चाह है ।
निजातमीक एक ही, लहो अनन्द तास ही।।२४३।।
ॐ ह्रीं स्वानन्दसंतोषाय नमः अर्घ्यं० ।

सोरठा

रागादिक परिणाम, हैं कारण संसार के ।
नाश, लियो सुखधाम, नमत सदा भव-भय हरूँ।।२४४।।
ॐ ह्रीं शुद्धभावपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।

उदइक भाव विनाश, प्रगट कियो निज धर्मको ।
स्वातम गुण परकाशं, नमत सदा भव-भय हरू।।२४५।।
ॐ ह्रीं स्वतन्त्रधर्माय नमः अर्घ्यं० ।

निजगुण पर्ययरूप, स्वयं-सिद्ध परमात्मा ।
राजत हैं शिवभूप, नमत सदा भव-भय हरू।।२४६।।
ॐ ह्रीं आत्मस्वभावाय नमः अर्घ्यं० ।

विमल विशद निज ज्ञान, है स्वभाव परिणतिमई ।
राजे हैं, सुखखानि, नमत सदा भव-भय हरू।।२४७।।

ॐ ह्रीं परमचित्परिणामाय नम अर्घ्यं० ।

दर्श-ज्ञानमय धर्म, चेतन धर्म प्रगट कहो ।
भेदाभेद सुपर्म, नमत सदा भय-भय हरू।।२४८।।

ॐ ह्रीं चिद्रूपधर्माय नम अर्घ्यं० ।

दर्श-ज्ञान-गुणसार, जीवभूत परमातमा ।
राजत सब परकार, नमत सदा भव-भय हरू।।२४९।।

ॐ ह्रीं चिद्रूपगुणाय नम अर्घ्यं० ।

अष्ट कर्ममल जार, दीप्तरूप निज पद लहो ।
स्वच्छ हेम उनहार, नमत सदा भव-भय हरू।।२५०।।

ॐ ह्रीं परमस्नातकाय नम अर्घ्यं० ।

रागादिक मल सोध, दोऊ विविध विधान विन ।
लहो शुद्ध प्रतिबोध, नमत सदा भव-भय हरू।।२५१।।

ॐ ह्रीं स्नातकधर्याय नम अर्घ्यं० ।

विधि आवरण विनाश, दर्श-ज्ञान परिपूर्ण हो ।
लोकालोक प्रकाश, नमत सदा भव-भय हरू।।२५२।।

ॐ ह्रीं सर्वावलोकाय नम अर्घ्यं० ।

निजकर निज मे वास, सर्व लोकसो भिन्नता ।
पायो शिव सुख-रास, नमत, सदा भव-भय हरू।।२५३।।

ॐ ह्रीं लोकाग्रस्थिताय नम अर्घ्यं० ।

ज्ञान-भानकी जोति, व्यापक लोकालोक मे ।
दर्शन बिन उद्योग, नमत सदा भव-भय हरू।।२५४।।

ॐ ह्रीं लोकालोकव्यापकाय नम अर्घ्यं०।

जो कुछ धरत विशेष, सब ही सब आनन्दमय ।
लेश न भाव कलेश, नमू सदा भव-भय हरू।।२५५।।

ॐ ह्रीं आनन्दविधानाय नम अर्घ्यं०।

जिस आनन्दको पार, पावत नहिं यह जगतजन ।
सो पायो हितकार, नमत सदा भव-भय हरू।।२५६।।

दोहा

इत्याधिक आनन्द गुण, धारत सिद्ध अनन्त ।
तिन पद आठें दरवसों, पूजत हैं नित 'सन्त' ।।

ॐ ह्रीं आनन्दपूर्णाय नम अर्घ्यं०।

जयमाला

दोहा

थावर शब्द विषय धरे, त्रस थावर पर्याय ।
यों न होय तो तुम नुगुण, हम किहविधि वर्णाय ।।१।।
तिनपर जो कछु कहत हैं, केवल भक्ति प्रमान ।
चातक जल शशि-चिबको, चहत ग्रहण निज पान ।।२।।

पद्धडी

जय पर-निमित्त व्यवहार त्याग, पायो निज शुद्ध-स्वरूप भाग ।
जय पालन विन जगत देव, जय दयाभाव विन शांतिभेव ।। ३।।
पर सुख-दुखकरण कुरीति टार, पर सुख-दुख-कारण शक्ति धार ।
पुनि पुनि नव नव नित जन्मरीत, विन सर्वलोक व्यापी पुनीत ।। ४।।
जय लीला रास विलास नाश, स्वाभाविक निजपद रमण वास ।
शयनासन आदि क्रिया-कलाप, तज सुखी सदा शिवरूप आप ।। ५।।
विन कामदाह नहि नार भोग, निरद्वन्द निजानद मगन योग ।
वरमाल आदि श्रृगार रूप, विन शुद्ध निरजन पद अनूप ।। ६।।
जय धर्म भर्म वन हन कुठार, परकाश पुज चिद्रूपसार ।
उपकरण हरण दव सलिलधार, निज शक्ति प्रभाव उदय अपार ।। ७।।
नभ सीम नही अरु होत होउ, नही काल अन्त, लहो अन्त सोउ ।
पर तुम गुण रास अनत भाग, अक्षय विधि राजत अवधि त्याग ।। ८।।
आनन्द जलधि धारा-प्रवाह, विज्ञानसुरी मुखद्रह अथाह ।
निज शांति सुधारस परम खान, समभाव वीज उत्पत्ति थान ।। ९।।
निज आतमलीन विकलप विनाश, शुद्धोपयोग परिणति प्रकाश ।
दृग ज्ञान असाधारण स्वभाव, स्पर्श आदि परगुण अभाव ।।१०।।
निज गुणपर्यय समुदाय स्वामि, पायो अखण्ड पद परम धाम ।
अव्यय अवाध पद स्वय सिद्ध, उपलब्धि रूप धर्मी प्रसिद्ध ।।११।।

एकाग्ररूप चिन्ता निरोध, जे ध्यावै पावैं स्वय बोध ।
गुणमात्र 'सत' अनुराग रूप, यह भाव देह तुम पद अनूप ।।१२।।

दोहा

सिद्ध सुगुण सुमरण महा, मत्रराज है सार ।
सर्व सिद्धि दातार है, सव विघन हनार ।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं षड्पचाशदधिकद्विशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

तीन लोक चूडामणी, सदा रहो जयवन्त ।
विघन हरण मगल करण, तुम्है नमैं निन सन्त ।।१४।।

इत्याशीर्वाद ।

(यहाँ १०८ वार 'ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा नम ' मत्र का जाप करें।)

—तस्य देशना नास्ति—

अबुधस्य बोधनार्थं मुनीश्वरा देशयन्त्यभूतार्थम् ।
व्यवहारमेव केवलमवैति यस्तस्य देशना नास्ति ।।६।।
माणवक एव सिंहो यथा भवत्यनवगीतसिंहस्य ।
व्यवहार एव हि तथा निश्चयता यात्यनिश्चयज्ञस्य ।।७।।
व्यवहारनिश्चयौ य प्रबुध्यतत्त्वेन भवति मध्यस्थ ।
प्राप्नोति देशनाया स एव फलमविकल शिष्य ।।८।।

आचार्यदेव अज्ञानीजीवो को ज्ञान उत्पन्न करने के लिए अभूतार्थ व्यवहारनय का उपदेश देते हे, परन्तु जो केवल व्यवहारनय ही का श्रद्धान करता हे, उसके लिए उपदेश नही है।

जिसप्रकार जिसने यथार्थ सिह को नही जाना है, उसके लिए विलाव (बिल्ली) ही सिहरूप होता ह, उसी प्रकार जिसने निश्चय का स्वरूप नही जाना है, उसका व्यवहार ही निश्चयता को प्राप्त हो जाता हे।

जो जीव व्यवहारनय ओर निश्चयनय के स्वरूप को यथार्थरूप से जानकर पक्षापातरहित होता है, वही शिष्य उपदेश का सम्पूर्णफल प्राप्त करता है।

—पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, श्लोक ६-७-८

सप्तम पूजा

पाँच सौ बारह गुण सहित

छप्पय

ऊरध अधो सु रेफ सबिंद हकार विराजे,
अकारादि स्वर लिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ।
वर्गनिपूरित वसदल अम्बुज तत्त्व संधिधर,
अग्रभागमें मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ।
पुनि अंत ह्रीं बेढ़्यो परम सुर ध्यावत अरि नाग को ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित, सिद्धचक्र मंगल करो।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं द्वादशाधिकपंचशतगुणसंयुक्तविराजमान श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। पुष्पांजलिंक्षिपेत्।

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित है, कर्म रहित नीरोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूँ, मिटै उपद्रव योग।।

(इति यंत्र स्थापनार्थं पुष्पांजलि क्षिपेत्।)

(चाल बारहमासा)

सुर मणि-कुम्भ क्षीर भर धारत मुनि मन-शुद्धप्रवाह बहावहि ।
हम कोऊ विधि लाइक नाहीं, कृपा करहु लहि भवतट भावहि।।
शक्ति सारु सामान्य नीरसों पूजूं हूँ शिव-तियके स्वामी ।
द्वादश अधिक पंचशत सख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।१।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपंचशत-(५१२) गुणसहिताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरारोग-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

नतु कोऊ चन्दन नतु कोऊ कोऊ केसरि, भेंट किये भवपार भयो है ।
केवल आप कृपा-दृग ही सों, यह अथाह दधि पार लयो है।।

रीति सनातन भक्तन की लख, चन्दनकी यह भेट धरामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी।।२।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ससारताप विनाशनाय चन्दन०।

इन्द्रादिक पद हूं अनवस्थित, दीखत अन्तर रुचि न करं हैं ।
केवल एकहि स्वच्छ अखण्डित, अक्षयपद की चाह धरैं हैं।।
ताते अक्षतसो अनुरागी, हू मो तुम पद पूज करामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी।।३।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशत गुण सयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षय-पदप्राप्तये अक्षत०।

पुष्प-वाण सो ही मन्मथ-जग, विजई जगमे नाम धरावें ।
देखहु अद्भुत रीति भक्तकी, तिस ही भेट धर काम हनावे।।
शरणागत की चूक न देखी, तातैं पूज्य भये शिरनामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी।।४।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामवाण-विनाशनाय पुष्प०।

हनन असाता पीर नही यह, भीर परै चरु भेटन लायो ।
भक्त अभिमान भेट हो स्वामी, यह भवकारण भाव सतायो।।
मम उद्यम करि कहा आप ही, सो एकाकी अर्थ लहामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी।।५।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि०।

पूरण ज्ञानानन्द ज्योति घन, विमल गुणातम शुद्ध स्वरूपी ।
हो तुम पूज्य भये हम पूजक, पाय विवेक प्रकाश अनूपी।।
मोह अन्ध विनसो तिह कारण, दीपन सो अर्चूं अभिरामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूं सुखधामी।।६।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकार विनाशनाय दीप०।

धूप भरैं उधरे प्रजरे मणि, हेम धरे तुम पद पर वारू ।
बार बार आवर्त जोरि करि, धार धार निज शीश न हारू।।

धूम्र धार समतन रोमांचित, हर्ष सहित अष्टांग नमामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।७।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूप०।

तुम हो वीतराग निज पूजन, बन्दन थुति परवाह नही है ।
अरु अपने समभाव वहै कछु, पूजा फलकी चाह नही है।।
तौभी यह फल पूजि फलद, अनिवार निजानन्द कर इच्छामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।८।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल०।

तुमसे स्वामी के पद सेवत, यह विधि दुष्ट रक कहा कर है ।
ज्यो मयूरध्वनि सुनि अहि निज विल, विलय जाय छिन बिलम न धर है।।
तातैं तुम पद अर्घ उतारण, विरद उचारण करहुँ मुदामी ।
द्वादश अधिक पचशत सख्यक, नाम उचारत हूँ सुखधामी।।९।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये अर्घ्यं०।

गीता

निर्मल सलिल शुभ वास चन्दन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभ पुष्प मधुकर नित रमे, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन, रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध-समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है ।
दुख जन्म टाल अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप है।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिव कमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय, चहुँगुण गेह, द्यो हम शुभ मती।।१०।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने पूर्णपदप्राप्तये महार्घ्यं०।

अथ पाँच सौ बारह गुण अर्घ्य

अर्द्ध जोगीरासा

लोकत्रय करि पूज्य प्रधाना, केवल ज्योति प्रकाशी ।
भव्यन मन तम मोह विनाशक, बन्दू शिव-थल वासी ।। १।।

ॐ ह्रीं अरहताय नम अर्घ्यं०।

सुरनर मुनिमन कुमुदन मोदन, पूरण चन्द्र समाना ।
हो अर्हंत जात जन्मोत्सव, बन्दू श्री भगवाना ।। २।।

ॐ ह्रीं अर्हज्जाताय नम अर्घ्यं०।

केवल-दर्श-ज्ञान किरणावलि, मडित तिहुँ जग चन्दा ।
मिथ्यातप हर जल आदिक करि, बन्दू पद अरविन्दा ।। ३।।

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपाय नम अर्घ्यं०।

घातिकर्म रिपु जारि छारकर, स्वचतुष्टय पद पायो ।
निजस्वरूप चिद्रूप गुणातम, हम तिन पद शिर नायो ।। ४।।

ॐ ह्रीं अर्हच्चिद्रूपगुणाय नम अर्घ्यं०।

ज्ञानावरणी पटल उघारत, केवल-भान उगायो ।
भव्यन को प्रतिबोध उधारे, बहुरि मुक्ति पद पायो ।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

धर्म-अधर्म तास फल दोनो, देखो जिम कर-रेखा ।
बतलायो परतीत विषय करि, यह गुण जिनमे देखा ।। ६।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनाय नम अर्घ्यं०।

मोह महा दृढ बध उघारो, कर विषतन्तु समाना ।
अतुल बली अरहत कहायो, पाय नमू शिवथाना ।। ७।।

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्याय नम अर्घ्यं०।

युगपति लोकालोक विलोकन, है अनन्त दृगधारी ।
गुप्त रूप शिवमग दरसायो, तिनपद धोक हमारी ।। ८।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनगुणाय नम अर्घ्यं०।

घटपटादि सब परकाशत जद, हो रवि-किरण पसारा ।
तैसो ज्ञान-भान अरहत को, ज्ञेय अनन्त उघारा ।। ९।।

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानगुणाय नम अर्घ्यं०।

तास विरोधी कर्म जीति करि, केवल-दरशन पायो ।
इस गुण सहित नमत तुम पद प्रति, भावसहित शिरनायो ।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलदर्शनाय नम अर्घ्यं०।

निर-आवरण करण बिन जाको, शरण हरण नही कोई ।
केवल-ज्ञान पाय शिव पायो, पूजत हैं हम सोई।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

अगम अतीर भवोदधि उतरे, सहज ही गोखुर मानो ।
केवल बल अरहन्त नमे हम, शिव थल बास करानो।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलवीर्याय नम अर्घ्यं०।

सब विधि अपने विघ्न निवारण, औरन विघ्न विडारी ।
मगलमय अर्हंत सर्वदा, नमू मुक्ति पदधारी।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलाय नम अर्घ्यं०।

चक्षु आदि सब विघन विदूरित, छाइक मगलकारी ।
यह अर्हंत दर्श पायो मैं, नमू भये शिवकारी।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलदर्शनाय नम अर्घ्यं०।

निजपर सशय आदि पाय बिन, निरावरण विकसानो ।
मगलमय अरहत ज्ञान है, बन्दू शिव सुख थानो।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

परकृत जरा आदि सकट बिन, अतुल बली अर्हंता ।
नमू सदा शिवनारी के सग, सुखसो केलि करता।।२६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलवीर्याय नम अर्घ्यं०।

पापरूप एकान्त पक्ष बिन, सर्व तत्व परकाशी ।
द्वादशाग अरहन्त कहो मैं, नमू भये शिववासी।।२७।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलद्वादशागाय नम अर्घ्यं०।

बिन प्रतक्ष अनुमान सुबाधित, सुमतिरूप परिणामा ।
मगलमय अर्हंतमती मैं, नमू देउ शिवधामा।।२८।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगल-अभिनिबोधकाय नम अर्घ्यं०।

नय-विकलप श्रुत-अग पक्ष के, त्यागी हैं भगवन्ता ।
ज्ञाता दृष्टा वीतराग, विख्यात नमू अरहता।।२९।।

ॐ ह्री अर्हन्मगलश्रुतात्मकजिनाय नम अर्घ्यं०।

मगलमय सर्वावधि जाकरि, पावैं पद अरहता ।
वन्दू ज्ञान प्रकाश, नाश भव, शिव थल वास करता।।३०।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलावधिज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।

वर्धमान मनपर्यय ज्ञान करि, केवल-भानु उगायो ।
भव्यनि प्रति शुभ मार्ग वतायो, नमू सिद्ध पद पायो।।३१।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलमन पर्ययज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

ता विन और अज्ञान सकल, जगकारण बध प्रधाना ।
नमू पाय अरहत मुक्ति पद, मगल केवलज्ञाना।।३२।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

निरावरण निरखेद निरन्तर, निराबाधमई राजैं ।
केवलरूप नमू सव अघहर, श्री अरहन्त विराजैं।।३३।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

चक्षु आदि सव भेद विघन हर, क्षायक दर्शन पाया ।
श्री अरहन्त नमू शिववासी, इह जग पाप नशाया।।३४।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मंगलकेवलदर्शनाय नम अर्घ्यं०।

जग मगल सव विघन रूप है, इक केवल अरहन्ता ।
मगलमय सव मगलदायक, नमू कियो जग अन्ता।।३५।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलज्ञानाय नम अर्घ्यं०।

केवलरूप महामगलमय, परम शत्रु छयकारा ।
सो अरहन्त सिद्ध पद पायो, नमृ पाय भवपारा।।३६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलरूपाय नम अर्घ्यं० ।

शुद्धातम निजधर्म प्रकाशी, परमानन्द विराजैं ।
मो अरहन्त परम मगलमय, नमू शिवालय राजैं।।३७।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलधर्माय नम अर्घ्यं० ।

सव विभावमय विघन नाशकर, मगल धर्मस्वरूपा ।
मो अरहन्त भये परमातम, नमू त्रियोग निरूपा।।३८।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलधर्मस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

सर्व जगत सम्वन्ध विघन नही, उत्तम मगल सोई ।
सो अरहन्त भये शिववासी, पूजत शिवसुख होई।।३९।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलोत्तमाय नम' अर्घ्यं० ।

लोकातीत विलोक पूज्य जिन, लोकोत्तम गुणधारी ।
लोकशिखर सुखरूप विराजै, तिनपद धोक हमारी।।४०।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।

लोकाश्रित गुण सब विभाव है, श्रीजिनपदसो न्यारे ।
तिनको त्याग भये शिव बन्दू, काटो बन्ध हमारे।।४१।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमगुणाय नम अर्घ्यं० ।

मिथ्या मतिकर सहित ज्ञान, अज्ञान जगत मे सारो ।
ता विनाशि अरहन्त कहो, लोकोत्तम पूज हमारो।।४२।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।

क्षायक दरशन है अरहन्ता, और लोक मे नाही ।
सो अरहन्त भये शिववासी, लोकोत्तम सुखदाई।।४३।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमदर्शनाय नम अर्घ्यं० ।

कर्मबली ने सब जग बाध्यो, ताहि हनो अरहन्ता ।
यह अरहन्त वीर्य लाकोत्तम, पायो सिद्ध अनन्ता।।४४।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्याय नम अर्घ्यं० ।

अक्षातीत ज्ञान लोकोत्तम, परमातम पद मूला ।
यह अरहन्त नमू शिवनायक, पाऊ भवर्दधि कूला।।४५।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नम अर्घ्यं० ।

परमावधि ज्ञान सुखखानी, केवलज्ञान प्रकाशी ।
यहै अवधि अरहन्त नमू मै, सशय तम को नाशी।।४६।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।

जो अरहन्त धरै मनपर्यय, सो केवल के माही ।
साक्षात् शिवरूप नमो मै, अन्य लोक मे नाही।।४७।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममन पर्ययज्ञानाय नम अर्घ्य० ।

तीन लोक मे सार सु श्री-अरहन्त स्वयभू ज्ञानी ।
नमू सदा शिवरूप आप हो, भविजन प्रति सुखदानी।।४८।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

सर्वोत्तम तिहु लोक प्रकाशित, केवल ज्ञान स्वरूपी ।
सो अरहन्त नमू शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।४९।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।

ज्ञान तरग अभग वहै, लोकोत्तम धार अरूपी ।
सो अरहन्त नमू शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।५०।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलपर्यायाय नम अर्घ्यं० ।

सहित असाधारण गुण-पर्यय, केवलज्ञान सरूपी ।
सो अरहन्त नमू शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।५१।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।

जगजिय सर्व अशुद्ध कहो, इक केवल शुद्ध सरूपी ।
सो अरहन्त नमू शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।५२।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलाय नम अर्घ्यं० ।

विविध कुरूप सर्व जगवासी, केवल स्वय सरूपी ।
सो अरहत नमू शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।५३।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

हीनाधिक धिक् धिक् जग प्राणी, धन्य ध्रुवरूपी ।
सो अरहत नमू शिवनायक, सुखप्रद सार अनूपी।।५४।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमध्रुवभावाय नम अर्घ्यं० ।

दोहा

ससारिनके भाव सब, बन्ध हेत वरणाय ।
मुक्तिरूप अरहत के, भाव नमू सुखदाय।।५५।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमभावाय नम अर्घ्यं० ।

कबहुं न होय विभावमय, सो थिर भाव जिनेश ।
मुक्तिरूप प्रणमू सदा, नाशो विघन विशेष।।५६।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमस्थिरभावाय नम अर्घ्यं० ।

जा सेवत वेवत स्वसुख, सो सर्वोत्तम देव ।
शिववासी नाशी त्रिजग-फासी नमहूँ एव।।५७।।
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणाय नम अर्घ्यं० ।

जिन ध्यायो तिन पाइयो, निश्चै सो सुखरास ।
शरण स्वरूपी जिन नमू, करै सदा शिववास।।५८।।
ॐ ह्रीं अर्हच्छरणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

पद्धडी

स्वाभाविक गुण अरहत गाय, जासो पूरण शिवसुख लहाय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनद पाय ।।५९।।

ॐ ह्रीं अर्हद्‌गुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

बिन केवलज्ञान न मुक्ति होय, पायो है श्री अरहन्त जोय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनद पाय ।।६०।।

ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानशरणाय नम अर्घ्यं० ।

प्रत्यक्ष देख सर्वज्ञ देव, भाख्यो हैं शिव-मारग असेव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनद पाय ।।६१।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दर्शनशरणाय नम अर्घ्यं० ।

ससार विषम बन्धन उछेद, अरहन्त वीर्य पायो अखेद ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय ।।६२।।

ॐ ह्रीं अर्हद्वीर्यशरणाय नम अर्घ्यं० ।

सब कुमति विगत मत जिन प्रतीत, हो जिसते शिवसुख दे अभीत ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय ।।६३।।

ॐ ह्रीं अर्हद्द्वादशागायश्रुतगणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

अनुमानादिक साधित विज्ञान, अरहन्त मती प्रत्यक्ष जान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय ।।६४।।

ॐ ह्रीं अर्हदभिनिबोधकाय शरणाय नम अर्घ्यं० ।

जिन भाषित श्रुत सुनि भव्य जीव, पायो शिव अविनाशी सदीव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय ।।६५।।

ॐ ह्रीं अर्हत्श्रुतशरणाय नम अर्घ्यं० ।

प्रतिपक्षी सब जीते कषाय, पायो अवधी शिवसुख कराय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय ।।६६।।

ॐ ह्रीं अर्हदवधिबोधशरणाय नम अर्घ्यं० ।

मुनि लहैं गहैं परिणाम श्वेत, जिन मनपर्यय शिव वास देत ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय ।।६७।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मन पर्ययशरणाय नम अर्घ्यं० ।

आवरण रहित प्रत्यक्ष ज्ञान, शिवरूप केवली जिन सुजान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय।।६८।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणाय नम अर्घ्यं।

मुनि केवलज्ञानी जिन अराध, पावै शिव-सुख निश्चय अबाध ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय।।६९।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलशरणस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।

शिव-सुखदायक निज आत्म-ज्ञान, सो केवल पावै जिन महान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।७०।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलधर्मशरणाय नम अर्घ्यं०।

यह केवलगुण आतम स्वभाव, अरहन्तन प्रति शिव-सुख उपाय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय।।७१।।

ॐ ह्रीं अर्हत्केवलगुणशरणाय नम अर्घ्यं०।

ससाररूप सव विघन टार, मगल गुण श्री जिन मुक्तिकार ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।७२।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलगुणशरणाय नम अर्घ्यं०।

छय उपशम ज्ञानी विघन रूप, ता विन जिन ज्ञानी शिव सरूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।७३।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलज्ञानशरणाय नम अर्घ्यं०।

अरहत दर्श मगल स्वरूप, तासो दरशै शिव-सुख अनूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।७४।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलदर्शनशरणाय नम अर्घ्यं०।

अरहत वोध है मगलीक, शिव-मारग प्रति वरते अलीक ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय।।७५।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलबोधशरणाय नम अर्घ्यं०।

निज ज्ञानानन्द प्रवाह धार, वरते अखण्ड अव्यय अपार ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय।।७६।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मगलकेवलशरणाय नम अर्घ्यं०।

जा विन तिहुं लोक न और मान, भव सिधु तरण तारण महान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनद पाय।।७७।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नम अर्घ्यं०।

स्वाभाविक भव्यन प्रति दयाल, विच्छेद करण ममार जाल ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नम 'सत' आनद पाय।।७८।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमशरणाय नम अर्घ्यं० ।

तुम विन समरथ तिहुँ लोकमांहि, भवसिंधु उतारण और नांहि ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।७९।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यशरणाय नम अर्घ्यं०।

विन परिश्रम तारणतरण होय, लोकोत्तम अद्भुत शक्ति सोय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनद पाय।।८०।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमवीर्यगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

अप्रसिद्ध कुनय अल्पज्ञ भास, ताको विनाश शिवमग प्रकाश ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।८१।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमद्वादशागशरणाय नम अर्घ्यं० ।

सब कुनय कुपक्ष कुसाध्य नाश, सत्यारथ—मत कारण प्रकाश ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनन्द पाय।।८२।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमाभिनिबोधकाय नम अर्घ्यं० ।

मिथ्यात प्रकृति अवधि विनाश, लोकोत्तम अवधीको प्रकाश ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।८३।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमावधिशरणाय नम अर्घ्यं० ।

मनपर्यय शिव मगल लहाय, लोकोत्तम श्रीगुरु सो कहाय ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनद पाय।।८४।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तममन पर्ययशरणाय नम अर्घ्यं० ।

आवरणतीत प्रत्यक्ष ज्ञान, है सेवनीक जग मे प्रधान ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनद पाय।।८५।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमकेवलज्ञानशरणाय नम अर्घ्यं० ।

हो बाह्य विभव सुरकृत अनूप, अन्तर लोकोत्तम ज्ञानरूप ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनद पाय।।८६।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिप्रधानशरणाय नम अर्घ्यं० ।

रहनत्रय निमित मिलो अबाध, पायो निज आनन्द धर्म साध ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमै 'सत' आनन्द पाय।।८७।।
ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमविभूतिधर्मशरणाय नम अर्घ्यं० ।

सुख ज्ञान वीर्य दर्शन सुभाव, पायो सब कर प्रकृती अभाव ।
हम शरण गही मन वचन काय, नित नमैं 'सत' आनद पाय।।८८।।

ॐ ह्रीं अर्हल्लोकोत्तमअनन्तचतुष्टयशरणाय नम अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

दर्श ज्ञान सुख बल निजगुण ये चार हैं,-
आतमीक परधान विशेष अपार है ।
इनही सो है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायँ नमन यातैं करा।।८९।।

ॐ ह्रीं अर्हदनन्तगुणचतुष्टयाय नम अर्घ्यं० ।

क्षयोपशाम सम्बाधित ज्ञानकला हरी,
पूरण ज्ञायक स्वय बुद्धि श्रीजिनवरी ।
इनही सो है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायँ नमन यातै करा।।९०।।

ॐ ह्रीं अर्हन्निजज्ञानस्वयभुवे नम अर्घ्यं० ।

जनमत ही दश अतिशय शासन मे कही,
स्वय शक्ति भगवान आप तिन को लही ।
इनही सो है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायँ नमन यातैं करा।।९१।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयस्वयभुवे नम' अर्घ्यं० ।

ये दश अतिशय घातिकर्म छयको करै,
महा विभव को पाय मोक्ष नारी वरैं ।
इनही सो है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायँ नमन यातैं करा।।९२।।

ॐ ह्रीं अर्हद्दशातिशयाय नम अर्घ्यं० ।

केवल विभव उपाय प्रभू जिन पद लहो,
चौदह अतिशय देवनकरि सेवन कियो ।
इनही सो है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हूँ यह गुण पायँ नमन यातै करा।।९३।।

ॐ ह्रीं अर्हच्चतुर्दशातिशयाय नम अर्घ्यं० ।

चौंतिस अतिशय जे परगट वरणे यहाँ
सोहत समाज अनुपम श्री गुरु ने कहा ।
इनही सों है पूज्य सिद्ध परमेश्वरा,
हम हैं यह गुण पाय नमन यातें करा ॥९४॥
ॐ ह्रीं अर्हच्चतुस्त्रिंशत-अतिशयविराजमानाय नमः अर्घ्यं० ।

डालर

लोकालोक अणु सम जाना, ज्ञानानन्त सुगुण पहिचाना ।
सो अरहन्त सिद्ध-पद पाया भाव सहित हम शीश नवायो ॥ ९५॥
ॐ ह्रीं अर्हज्ज्ञानानन्तगुणाय नमः अर्घ्यं० ।
समरस सुस्थिर भाव उजारा युगपत लोकालोक निहारा ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो भाव सहित हम शीश नवायो ॥ ९६॥
ॐ ह्रीं अर्हद्ध्यानानन्तध्येयाय नमः अर्घ्यं० ।
इक इक गुण का भाव अनन्ता, पर्ययरूप सो है अरहन्ता ।
सो अरहन्त सिद्धपद पाया भाव सहित हम शीश नवायो ॥ ९७॥
ॐ ह्रीं अर्हदनतगुणाय नमः अर्घ्यं० ।
उत्तर गुण सब लख चौरासी, पूरण चारित्र भेद प्रकाशी ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥ ९८॥
ॐ ह्रीं अर्हत्तप-अन्तगुणाय नमः अर्घ्यं०
आतमशक्ति जास करि छीनी, तास नाश प्रभुताई लीनी ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥ ९९॥
ॐ ह्रीं अर्हत्परमात्मने नमः अर्घ्यं० ।
निज गुण निज ही माहि समाया, गणधरादि वरनन न कराया ।
सो अरहन्त सिद्धपद पायो, भाव सहित हम शीश नवायो ॥१००॥
ॐ ह्रीं अर्हत्स्वरूपगुप्ताय नमः अर्घ्यं० ।

दोधक

जो निज आतम साधु सुखाई, सो जगतेश्वर सिद्ध कहाई ।
लोक शिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ॥१०१॥
ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।

सर्व विशुद्ध विरूप सरूपी, स्वातम-रूप विशुद्ध अनूपी ।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ।।१०२।।

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

पराश्रित सर्व विभाव निवारा, स्वाश्रित सर्व अवाध अपारा ।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ।।१०३।।

ॐ ह्रीं सिद्धगुणेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

आकुलता सब ही विधि नाशी, ज्ञायक लोकालोक प्रकाशी ।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ।।१०४।।

ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

जीव अजीव लखे अविचारा, हो नही अन्तर एक प्रकारा ।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ।।१०५।।

ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

अन्तर बाहिर भेद उघारी, दर्श विशुद्ध सदा सुखकारी ।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ।।१०६।।

ॐ ह्रीं सिद्धशुद्धसम्यक्त्वेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

एक अणू मल कर्म लजावै, सोय निरजनता नहिं पावै ।
लोकशिरोमणि हैं शिवस्वामी, भाव सहित तुम को प्रणमामी ।।१०७।।

ॐ ह्रीं सिद्धनिरजनेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

अर्द्धरोला

चारो गति को भ्रमण नाशकर थिरता पाई ।
निजस्वरूप मे लीन, अन्य सो मोह नशाई ।।१०८।।

ॐ ह्रीं सिद्धाचलपदप्राप्ताय नम अर्घ्यं० ।

रत्नत्रय आराधि साधि, निज शिवपद पायो ।
सख्या भेद उलंघि, शिवालय वास करायो ।।१०९।।

ॐ ह्रीं सख्यातीतसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

असख्यात मरजाद, एक ताहू सो वीते ।
विजयी लक्ष्मीनाथ, महावल सब विधि जीते ।।११०।।

ॐ ह्रीं असख्यातसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

काल आदि मर्याद अनादि-सो इह विधि जारी ।
भए अनन्त दिगम्बर साधु, जे शिवपद धारी।।१११।।

ॐ ह्रीं अनन्तसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

पुष्कराद्धे सागर लो, जे जल थान वखानो ।
देव सहाइ उपाई, ऊर्ध्व-गति गमन करानो।।११२।।

ॐ ह्रीं जलसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

वन गिरि नगर गुफादि, सर्व थलसो शिव पाई ।
सिद्धक्षेत्र सब ठौर बखानत, श्री जिनराई।।११३।।

ॐ ह्रीं स्थलसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

नभ ही मे जिन शुक्लध्यान—बल कर्म नाश किये ।
आउ पूर्ण वश ततछिन, ही शिववास जाय लिये।।११४।।

ॐ ह्रीं गगनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

आयु स्थिति सम अन्य कर्म-कारण परदेशा ।
परसैं पूरण लोक, आत्म, केवली जिनेशा।।११५।।

ॐ ह्रीं समुद्घात-सिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

केवलि जिन बिन समुद्घात, शिववास लिया है ।
स्वते स्वभाव समान, अघाती कर्म किया है।।११६।।

ॐ ह्रीं असमुद्घातसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

उल्लाला

तिन विशेष अतिशय रहित, सामान्य केवली नाम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परणाम है।।११७।।

ॐ ह्रीं साधारणसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

त्रिभुवन मे नही पावतो, जो जिन गुण अभिराम हैं ।
सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परणाम है।।११८।।

ॐ ह्रीं असाधारणसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

गर्भ कल्याण आदि युत, तीर्थंकर सुखधाम है ।
सिद्ध भये तिहुं योगतैं, तिनके पद परणाम है।।११९।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

तीर्थंकर के समय मे, केवली जिन अभिराम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिमके पद परणाम है।।१२०।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-अन्तरसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

पच शतक पच्चीस पुनि, धनुष काय अभिराम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२१।।

ॐ ह्रीं उत्कृष्टावगाहनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

आदि अन्त अन्तर विषैं, मध्यावगाहन नाम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२२।।

ॐ ह्रीं मध्यमावगाहनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

तीन अर्ध तन केवली, हस्त प्रमाण कहाय हैं ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम हैं।।१२३।।

ॐ ह्रीं जघन्यावगाहनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

देव निमित्त मिलो जहा, त्रिजग केवली धाम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२४।।

ॐ ह्रीं त्रिजगलोकसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

षट्विध परिणति काल की, तिन अपेक्ष यह नाम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिके पद परणाम है।।१२५।।

ॐ ह्रीं षड्विधकालसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०

अन्त समय उपसर्गतैं, शुकलध्यान अभिराम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२६।।

ॐ ह्रीं उपसर्गसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

पर-उपसर्ग मिलै नही, स्वत शुक्ल सुख धाम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२७।।

ॐ ह्रीं अन्तर निरूपसर्गसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

अन्तर द्वीप मही जहा, देवन के अभिराम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२८।।

ॐ ह्रीं अन्तर द्वीपसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं०।

देव गये ले सिंधु जब, कर्म छयो तिंह ठाम है ।
सिद्ध भये तिहुँ योगतैं, तिनके पद परणाम है।।१२९।।

ॐ ह्रीं उदधिसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१३०।।

भुजगप्रयात

धरैं जोग आसन गहे शुद्धताई,
न हो खेद ध्यानाग्नि सो कर्म छाई ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३०।।

ॐ ह्रीं स्वस्थित्यासनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

महा शाति मुद्रा पलौथी लगाये,
कियो कर्म को नाश ज्ञानी कहाये ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३१।।

ॐ ह्रीं पर्यंकासनसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

लहै आदि को सहनन पुरुप देही,
लखायो परारभ मे भाव ते ही ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३२।।

ॐ ह्रीं पुरुषवेदसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

खपायो प्रथम सात प्रकृति विमोहा,
गहो शुद्ध श्रेणी क्षयो कर्ममोहा ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३३।।

ॐ ह्रीं क्षपकश्रेणीसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

समय एक मे एक वासौ भनता,
धरो आठ ताप यही भेद अन्ता ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३४।।

ॐ ह्रीं एकसमयसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

किसी देश मे वा किसी काल माही,
गिने दो समय मे तथा अन्तराई ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३५।।

ॐ ह्रीं द्विसमयसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

समय एक दो तीन धाराप्रवाही,
किय़ो कर्म छय अन्तराय होय नाही ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३६।।

ॐ ह्रीं त्रिसमयसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

हुवे हो सु होगे सु हो हैं अबारी,
त्रिकाल सदा मोक्ष पथा विहारी ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३७।।

ॐ ह्रीं त्रिकाल सिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।

तिहूँ लोक के शुद्ध सम्यक्त्व धारी,
महा भार सजम धरै है अबारी ।
भये सिद्ध राजा निजानद साजा,
यही मोक्ष नाजा नम सिद्ध काजा।।१३८।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

मरहठा

तिहुँ लोक निहारा, सब दुखकारा, पापरूप ससार ।
ताको परिहारा सुलभ सुखारा, भये सिद्ध अविकार।।
हे जगत्रय नायक मगलदायक, मगलमय सुखकार ।
मैं नमू त्रिकाला हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१३९।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१३९।।

तिहुँ कर्म-कालिमा, लगी जालिमा, करै रूप दुखदाय ।
तुम ताको नाशो, स्वय प्रकाशो, स्वातम रूप सुभाय।।
हे जगत्रय-नायक मगलदायक, मगलमय सुखकार ।
मै नमू त्रिकाला, हो अघ टाला, तप हर शशि उनहार।।१४०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलस्वरूपेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४०।।

तिहुँ जग के प्राणी, सब अज्ञानी, फसे मोह जजाल ।
हो तिहुँ जगत्राता, पूरण ज्ञाता, तुम ही एक खुशहाल।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलज्ञानेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४१।।

यह मोह अधेरी, छाई घनेरी, प्रबल पटल रहो छाय ।
तुम ताहि उघारो, सकल निहारो, युगपत आनददाय।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलदर्शनेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४२।।

निजबधन डोरी, छिन मे तोरी, स्वय शक्ति परकाश ।
निरभय निरमोही, परम अछोही, अन्तरायविधि नाश।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलवीर्येभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४३।।

जाके प्रसादकर, सकल चराचर, निजसों भिन्न लखाय ।
रुष-राग निवारा, सुख विस्तारा, आकुलता विनशाय।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलसम्यक्त्वेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४४।।

अस्पर्श अमूरति, चिनमय मूरति अरस अलिग अनूप ।
मन अक्ष अलक्ष, ज्ञान प्रत्यक्ष, शुभ अवगाह स्वरूप।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलावगाहनेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४५।।

अव्यक्त स्वरूप, अमल अनूप, अलख अगम असमान ।
अवगाह उदर धर, वास परस्पर, भिन्न भिन्न परनाम।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलसूक्ष्मत्वेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४६।।

अनुभूति विलासी समरस रासी, हीनाधिक विधि नाश ।
विधि गोत्र नाशकर, पूरण पदधर, असबाध परकाश।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगल-अगुरुलघुभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४७।।

पुद्गल कृत सारी, विविधि पकारी, द्वैतभाव अधिकार ।
सब भांति निवारी, निज सुखकारी, पायो पद अविकार।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगला-व्याबाधितेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४८।।

अवगाह प्रणामी, ज्ञानारामी, दर्शन-वीर्य अपार ।
सूक्षम अवकाश अज अविनाश, अगुरुलघू सुखकार।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगलाष्टगुणेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१४९।।

शुद्धातम सार, अष्ट प्रकार, शिव स्वरूप अनिवार ।
निज गुणपरधान, सम्यकज्ञान, आदि अन्त अविकार।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगल-अष्टरूपेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१५०।।

मगल अरहन्त, अष्टम भन्त, सिद्ध अष्टगुण भास ।
ये ही विलनावैं, अन्य न पावैं, असाधारण परकाश।। हे जगत्रय०।।

ॐ ह्रीं सिद्धमगल-अष्टप्रकाशकेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१५१।।

निरभेद अछेद विकाशित हे, मव लोक अलोक विभाषित ह ।
इनही गुण मे मन पागत हे, शिववाम करो शरणागत ह ।।१६१।।
ॐ ह्रीं सिद्धदर्शनशरणाय नम अर्घ्यं० ।

निरबाध अगाध प्रकाशमई, निरद्वन्द अवध अभय अजइ ।
इनही गुण मे मन पागत हे, शिववाम करो शरणागन हे ।।१६२।।
ॐ ह्रीं सिद्धज्ञानशरणाय नम अर्घ्यं० ।

हितकारण तारण-तरण कहे, अप्रमाद प्रमाद प्रकाशन हे ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत ह ।।१६३।।
ॐ ह्रीं सिद्धवीर्यशरणाय नम अर्घ्यं० ।

अविरुद्ध विशुद्ध प्रसिद्ध महा, निज आतम-तत्त्व प्रवोध लहा ।
इनही गुण मे मन पागत हे, शिववास करो शरणागत हैं ।।१६४।।
ॐ ह्रीं सिद्धसम्यक्त्वशरणाय नम अर्घ्यं० ।

जिनको पूर्वापर अन्त नही, नित धार-प्रवाह वहै अति ही ।
इनही गुण मैं मन पागत हैं, शिववास करो शरणागत हैं ।।१६५।।
ॐ ह्रीं सिद्ध-अनन्तशरणाय नम अर्घ्यं० ।

कबहू नही अन्त समावत है, सु अनन्त-अनन्त कहावत है ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ।।१६६।।
ॐ ह्रीं सिद्ध-अन्तानन्तशरणाय नम अर्घ्यं० ।

तिहुँ काल सु सिद्ध महा सुखदा, निजरूप विषै थिर भाव सदा ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत है ।।१६७।।
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिकालशरणाय नम अर्घ्यं० ।

तिहुँ लोक शिरोमणि पूजि महा, तिहुँ लोक प्रकाशक तेज कहा ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ।१६८।।
ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकशरणाय नम अर्घ्यं० ।

गिनती परमाण जु लोक धरे, परदेश समूह प्रकाश करे ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ।।१६९।।
ॐ ह्रीं सिद्धासख्यातशरणाय नम अर्घ्यं० ।

पूर्वापर एकहि रूप लसे, नित लोक सिहासन वास बसे ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं ।।१७०।।
ॐ ह्रीं सिद्धध्रौव्यगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

जगवास पर्याय विनाश कियो, अब निश्चय रूप विशुद्ध भयो ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७१।।

ॐ ह्रीं सिद्धोत्पादगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

परद्रव्य थकी रुष राग नही, निज भाव बिना कहु लाग नही ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७२।।

ॐ ह्रीं सिद्धसाम्यगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

बिन कर्म-कलक विराजत हैं, अति स्वच्छ महागुण राजत हैं ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७३।।

ॐ ह्रीं सिद्धस्वच्छगुणशरणाय नम अर्घ्यं ।

मन इन्द्रिय आदि न व्याधि तहाँ, रुष-राग कलेश प्रवेश न ह्वा ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७४।।

ॐ ह्रीं सिद्धस्वस्थितगुणशरणाय नम अर्घ्यं ।

निजरूप विषै नित मगन रहैं, पर योग-वियोग न दाह लहैं ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७५।।

ॐ ह्रीं सिद्धसमाधिगुणशरणाय नम' अर्घ्यं० ।

श्रुतज्ञान तथा मतिज्ञान दऊ, परकाशत हैं यह व्यक्त सऊ ।
इनही गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७६।।

ॐ ह्रीं सिद्धव्यक्तगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

परतक्ष अतीन्द्रिय भाव महा, मन इन्द्रिय बोध न गुह्य कहा ।
इनहीं गुण मे मन पागत है, शिववास करो शरणागत हैं।।१७७।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-अव्यक्तगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।

मालिनी

निजगुणवर स्वामी शुद्धसबोधनामी।
परगुण नहिं लेशा एक ही भाव शेषा ।
मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर।।१७८।।

ॐ ह्रीं सिद्धगुणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।१७८।।

सब विधि-मल जारा बन्ध-ससार टारा ।
जगजिय हितकारी उच्चता पाय सारी।।

मनवचतन लाइ पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर ।।१७९।।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमात्मस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।१७९।।

पर-परणति-खण्ड भेदबाधा-विहण्ड ।
शिवसदन निवासी नित्य स्वानंदरासी ।।
मनवचतन लाइ पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर ।।१८०।।

ॐ ह्रीं सिद्धाखण्डस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।१८०।।

चितसुखविलसान आकुल भावहान ।
निज अनुभवसार द्वैतसकल्पटार ।।
मनवचतन लाइ पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर ।।१८१।।

ॐ ह्रीं सिद्धचिदानन्दस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।१८१।।

परकरणनिवार भाव सभाव धार ।
निज अनुपम ज्ञान सुक्खरूप निधान ।।
मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर ।।१८२।।

ॐ ह्रीं सिद्धसहजानदाय नम अर्घ्यं० ।।१८२।।

विधिवश सब प्रानी हीन-आधिक्य ठानी ।
तिन्नकरण निमूलापाय रूपाधल्ला ।।
मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर ।।१८३।।

ॐ ह्रीं सिद्धाच्छेवरूपाय नम अर्घ्यं० ।।१८३।।

जब लग परजाया भेद नाना धराया ।
इक शिवपद माही भेद आभास नाही ।।
मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर ।।१८४।।

ॐ ह्रीं सिद्धाभेदगुणाय नम अर्घ्यं० ।।१८४।।

अनुपम गुणधारी लोक सभावटारी ।
सुरनरमुनि ध्यावै सो नही पार पावैं ।।

मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई ।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर।।१८५।।
ॐ ह्रीं सिद्धानुपमगुणाय नम अर्घ्यं० ।।१८५।।
जिस अनुभव सरसै धार आनद वरसै।
अनुपम रस सोई स्वाद जासो न कोई।।
मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर।।१८६।।
ॐ ह्रीं सिद्ध—अमृततत्त्वाय नम अर्घ्यं० ।।१८६।।
सव श्रुत विस्तारा जास माही उजारा।
यह निजपद जानो आत्म सभावमानो।।
मनवचतन लाई पूजहो भक्ति भाई।
भवि भवभय चूर शाश्वत सुक्खपूर।।१८७।।
ॐ ह्रीं सिद्धश्रुतप्राप्ताय नम. अर्घ्यं० ।।१८७।।

दोधक

जीव-अजीव सवै प्रतिभासी, केवल जोति लहो तम नाशी ।
सेद्ध-समूह नमू शिरनाई, पाप कलाप सब खिर जाई।।१८८।।
ॐ ह्रीं सिद्धकेवलप्राप्ताय नम अर्घ्यं० ।
चेतनरूप प्रदेश विराजै, आकृतिरूप अलिग सु छाजै ।
सिद्ध-समूह नमू शिरनाई, पाप कलाप सवै खिर जाई।।१८९।।
ॐ ह्रीं सिद्धसाकारनिराकाराय नम अर्घ्यं० ।
नाहि गहैं पर आश्रित जानो, जो अवलम्ब विना पद मानो ।
सिद्ध-समूह जजो मन लाई, पाप कलाप सवै खिर जाई।।१९०।।
ॐ ह्रीं निरालम्वाय नम अर्घ्यं० ।
राग-विषाद वसै नहि जामे, जोग वियोग भोग नहि तामैं ।
सिद्ध-समूह जजो मन लाई, पाप कलाप सवै खिर जाई।।१९१।।
ॐ ह्रीं सिद्धनिष्कलकाय नम अर्घ्यं० ।
ज्ञान प्रभाव प्रकाश भयो है, कर्म-समूह विनाश भयो है ।
सिद्ध-समूह जजो मन लाई, पाप कलाप सवै खिर जाई।।१९२।।
ॐ ह्रीं सिद्धतेज सपन्नाय नम अर्घ्यं० ।

आतमलाभ निजाश्रित पाया, द्वैत विभाव समूल नसाया ।
सिद्ध-समूह जजो मन लाई, पाप कलाप सबै खिर जाई।।१९३।।

ॐ ह्रीं सिद्धात्मसपन्नाय नम अर्घ्यं० ।

मोतियादाम

चहूँ गति काय-स्वरूप प्रत्यक्ष, शिवालय वास अनूप अलक्ष ।
भजो मन आनन्दसो शिवनाथ, धरो चरणावुजको निज माथ।।१९४।।

ॐ ह्रीं सिद्धगर्भवासाय नम अर्घ्यं० ।

निजानन्द श्रीयुत् ज्ञान अथाह, सुशोभित तृप्त भयो सुख पाय ।
भजो मन आनन्दसो शिवनाथ, धरो चरणावुजको निज माथ।।१९५।।

ॐ ह्रीं सिद्धलक्ष्मीसतर्पकाय नम अर्घ्यं० ।

सुभाव निजातम अन्तर लीन, विभाव परातम आपद कीन ।
भजो मन आनन्दसो शिवनाथ, धरो चरणावुजको निज माथ।।१९६।।

ॐ ह्रीं सिद्धान्तराकाराय नम अर्घ्यं० ।

जहाँ लग द्वेष प्रवेश न होय, तहाँ लग सार रसायन होय ।
भजो मन आनन्दसो शिवनाथ, धरो चरणावुजको निज माथ।।१९७।।

ॐ ह्रीं सिद्धसाररसाय नम अर्घ्यं० ।

जिसो निरलेप हुए विषतुव्य, तिसो जग अग्र निराश्रय लुब्य ।
भजो मन आनदसो शिवनाथ, धरो चरणावुज को निज माथ।।१९८।।

ॐ ह्रीं सिद्धशिखरमण्डनाय नम अर्घ्यं० ।

तिहूँ जग शीश बिराजित नित्य, शिरोमणि सर्व समाज अनित्य ।
भजो मन आनदसो शिवनाथ, धरो चरणाबुजको निज माथ।।१९९।।

ॐ ह्रीं सिद्धत्रिलोकाग्रनिवासिने नम अर्घ्य० ।

अकाय अरूप अलक्ष अवेद, निजातम लीन सदा अविछेद ।
भजो मन आनदसो शिवनाथ, धरो चरणाबुज को निज माथ।।२००।।

ॐ ह्रीं सिद्धस्वरूपगुप्तेभ्यो नम अर्घ्यं० ।

अडिल्ल

ऋषभ आदि चितधारि प्रथम दीक्षा धरी,
केवलज्ञान उपाय धर्मविधि उच्चरी ।

निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है।।२०७।।

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यगुणेभ्यो नम अर्घ्यं०।।२०७।।

षट्त्रिंशति गुण सूरि मोक्षफल पाइयो,
तातैं हम इन गुणकर ही जश गाइयो।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है।।२०८।।

ॐ ह्रीं सूरिषट्त्रिंशत्गुणेभ्यो नम अर्घ्यं०।

पचाचार आचार साध शिवपद लियो,
वास्तव मे ये गुण निज मे परगट कियो।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है।।२०९।।

ॐ ह्रीं सूरिपचाचारगुणेभ्यो नम अर्घ्यं०।

गुण समुदाय सरूप द्रव्य आतम महा,
परसो भिन्न अभेद निजातम पद लहा।
निजस्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है।।२१०।।

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यगुणेभ्यो नम अर्घ्यं०।

वीतराग परणति रचही सुखकार जू,
परम शुद्ध स्वय सिद्ध भयो अनिवार जू।
निज स्वरूप थितिकरण हरण विधि चार है,
परमारथ आचार्य सिद्ध सुखकार है।।२११।।

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायगुणेभ्यो नम अर्घ्यं०।

चचला

आप सुक्खरूप हो सु, और सौख्यकार होत,
ज्यू घटादिको प्रकाशकार है सुदीप जोत।
सूरि धर्म को प्रकाश सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमू त्रिकाल एकही अभेद पक्षमान।।२१२।।

ॐ ह्रीं सूरिमगलेभ्यो नम अर्घ्यं०।

शील आदि पूर भेद कर्मके कलाप छेद,
आत्म-शक्तिको प्रकाश शुद्ध चेतना विलास।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमू त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान।।२१९।।

ॐ ह्रीं सूरितपेभ्यो नम अर्घ्यं०।

लोक चाहकी न दाह, द्वेष को प्रवेश नाह,
शुद्ध चेतना प्रवाह, वृद्धता धरै अथाह।
सूरि धर्म को प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमू त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान।।२२०।।

ॐ ह्रीं सूरिपरमतपेभ्यो नम अर्घ्यं०।

मोह को न जोर जाय घोर, आपदा नसाय,
घोरते तपो सु लोक-शीश जाय मुक्ति पाय।
सूरि धर्मको प्रकाश, सिद्ध-धर्म-रूप जान,
मैं नमू त्रिकाल एक ही अभेद पक्षमान।।२२१।।

ॐ ह्रीं सूरितपोघोरगुणेभ्यो नम अर्घ्यं०।

कामिनी मोहन

वृद्ध पर वृद्ध गुण गहन नित हो जहाँ,
शाश्वत पूर्णता सातिशय गुण तहाँ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये।।२२२।।

ॐ ह्रीं सूरिघोरगुणपराक्रमेभ्यो नम अर्घ्यं०।।

एक सम-भाव सम और नही ऋद्धि है,
सर्वही ऋद्धि जाके भये सिद्ध है।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये।।२२३।।

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिऋषिभ्यो नम अर्घ्यं०।।

जोगके रोकसे कर्म का रोक हो,
गुप्त साधन किये साध्य शिवलोक हो।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये।।२२४।।

ॐ ह्रीं सूरिसुयोगिनेभ्यो नम अर्घ्यं०।।

ध्यान-वल कर्म के नाशके हेतु है,
कर्मको नाश शिववास ही देत है ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये ।।२२५।।

ॐ ह्रीं सूरिध्यानेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।

पचधाचार मे आत्म अधिकार है,
वाहय आधार-आधेय सुविकार है ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये ।।२२६।।

ॐ ह्रीं सूरिधात्रिभ्यो नम अर्घ्यं० ।।

सूर सम आप परतेज करतार है,
सूर ही मोक्षनिधि पात्र सुखकार है ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये ।।२२७।।

ॐ ह्रीं सूरिपात्रेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।

वाहय छत्तीस अन्तर अभेदात्मा,
आप थिर रूप हैं सूर परमात्मा ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये ।।२२८।।

ॐ ह्रीं सूरिगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।।

ज्ञान उपयोग मे स्वस्थिता शुद्धता,
पूर्ण चारित्रता पूर्ण ही वुद्धता ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये ।।२२९।।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।।

शरण, दुख हरण, पर आपही शर्ण हैं,
आपने कार्य मे आपही कर्ण हैं ।
सूरि सिद्धात के पारगामी भये,
मैं नमू जोर कर मोक्षधामी भये ।।२३०।।

ॐ ह्रीं सूरिशरणाय नम अर्घ्यं० ।।

दोहा

ज्यो कचन बिन कालिमा, उज्ज्वल रूप सुहाय ।
त्योही कर्म-कलक बिन, निज स्वरूप दरसाय।।२३१।।

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपशरणाय नम अर्घ्यं० ।

भेदाभेद सु नय थकी, एक ही धर्म विचार ।
पायो सूरि सुबोध करि, भवदधि करि उद्धार।।२३२।।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मस्वरूपशरणाय नम अर्घ्यं० ।

अन्य समस्त विकल्प तजि, केवल निजपद लीन ।
पूरण-ज्ञान स्वरूप यह, पायो सूरि सुधीन।।२३३।।

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

सुखाभास इन्द्रीजनित, त्यागी सूरि महन्त ।
पूरण-सुख स्वाधीन निज, साध्य भये सुखवन्त।।२३४।।

ॐ ह्रीं सूरिसुखस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

अनेकात तत्वार्थ के, ज्ञाता सूरि महान ।
निरावर्ण निजरूप लखि, पायो पद निरवाण।।२३५।।

ॐ ह्रीं सूरिदर्शनस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

मोहादिक रिपु नाशिके, सूर्य महा सामर्थ ।
शिव भामिन भरतार नित, रमै साध निज अर्थ।।२३६।।

ॐ ह्रीं सूरिवीर्यस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

पद्धडी

जिन निज-आतम निष्पाप कीन, ते सन्त करैं पर पाप छीन ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण सही आनद पूर।।२३७।।

ॐ ह्रीं सूरिमगलशरणाय नम अर्घ्यं० ।

रत्नत्रय जीव सुभावभाय, भवि पतित उधारण हो सहाय ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२३८।।

ॐ ह्रीं सूरिधर्मशरणाय नम अर्घ्यं० ।

तपकर ज्यो कचन अग्नि जोग, ह्वै शुद्ध निजातम पद मनोग ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२३९।।

ॐ ह्रीं सूरितपशरणाय नम अर्घ्यं० ।

एकाग्र-चित्त चिन्ता निरोध, पावैं अबाध शिव आत्मबोध ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४०।।

ॐ ह्रीं सूरिध्यानशरणाय नम अर्घ्यं० ।

केवलज्ञानादि विभूति पाइ, ह्वै शुद्ध निरजन पद सुखाइ ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४१।।

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धशरणाय नम अर्घ्यं० ।

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक माँहि, या सम दूजो सुखदाय नाँहि ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४२।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकशरणाय नम अर्घ्यं० ।

आगत अतीत अरु वर्तमान, तिहुँ काल भव्य पावैं निर्वाण ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४३।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिकालशरणाय नम अर्घ्यं० ।

मधि अधो उर्द्ध तिहुँ जगतमाँहि, सब जीवन सुखकर और नाँहि ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४४।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मगलाय नम अर्घ्यं० ।

तिहुँ लोकमाँहि मुखकार आप, सत्यारथ मगल हरण पाप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४५।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमगलशरणाय नम अर्घ्यं० ।

उत्तम मगल परमार्थ रूप, जग दुख नासे शिव-सुख-स्वरूप ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४६।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मगलोत्तमशरणाय नम अर्घ्यं० ।

शरणागत दुखनाशन महान, तिहुँ जग हितकारण सुख निधान ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४७।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिजगन्मगलशरणाय नम अर्घ्यं० ।

तिहुँ लोकनाथ तिहुँ लोक पूज्य, शरणागत प्रतिपालन अदूज्य ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४८।।

ॐ ह्रीं सूरित्रिलोकमण्डनशरणाय नम अर्घ्यं० ।

अव्यय अपूर्व सामर्थ युक्त, ससारातीत विमोहमुक्त ।
शिवमग प्रगटन आदित्य सूर, हम शरण गही आनद पूर।।२४९।।

ॐ ह्रीं सूरिऋद्धिमण्डल शरणाय नम अर्घ्यं० ।

त्रोटक

निज रूप अनूप लखे सुख हो, जग मे यह मत्र महान कहो ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमू शिववास करै सुखदा।।२५०।।

ॐ ह्रीं सूरिमत्रस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।

जिम नागदेव वश मत्र विधि, भव वास हरण तुम नाम निधि।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिमत्रगुणाय नम अर्घ्यं० ।।२५१।।

जगमोहित जीव न पावत है, यह मत्र सु धर्म कहावत है।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिधर्माय नम अर्घ्य० ।।२५२।।

चिदरूप चिदातम भाव धरे, गुण सार यही अविरुद्ध करे।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिचैतन्यस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२५३।।

अविकार चिदातम आनन्द हो, परमातम हो परमानद हो।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिचिदानदाय नम अर्घ्यं० ।।२५४।।

निज ज्ञान प्रमाण प्रकाश करै, सुख रूप निराकुलता सु धरै।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिज्ञानानन्दाय नम अर्घ्य० ।।२५५।।

धरि योग महा शम भाव गहै, सुख राशि महा शिववास लहैं।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिशमभावाय नम अर्घ्यं० ।।२५६।।

सम भाव महा गुण धारत है, निज आनद भाव निहारत है।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणानन्दाय नम अर्घ्यं० ।।२५७।।

शिवसाधन को विधिनाश कहा, विधिनाशन को तप कर्ण महा ।
धरि भक्ति हिये गणराज सदा, प्रणमू शिववास करै सुखदा।।

ॐ ह्रीं सूरितपोगुणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।। २५८।।

निज आत्म विषैं नित मगन रहैं, जग के सुख मूल न भूलि चहैं।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिहसाय नम अर्घ्य० ।।२५९।।

वनवास उदास सदा जगतै, पर आस न खास विलास रतै।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिहसगुणाय नम अर्घ्यं० ।।२६०।।

निज नाम महागुण मत्र धरैं, छिन मात्र जपे भवि आश वरै।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिमत्रगुणानन्दाय नम अर्घ्यं० ।। २६१।।

परमोत्तम सिध परियाय कही, अति शुद्ध प्रसिद्ध सुखात्म मही।। धरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिसिद्धानन्दाय नम अर्घ्यं० ।।२६२।।

माला

सूरि निजभेद कियो परसे,
भये मुक्त म नमू शीश नित जोर युगल करसे।। टेक ।।
शशि सन्ताप क्लाप निवारण ज्ञान कला सरसै ।
मिथ्यातम हरि भवि आनद करि अनुभव भाव दरसै।।
ॐ ह्रीं सूरि-अमृतचन्द्राय नम अर्घ्यं० ।।२६३।।
पूरणचन्द्र सरूप कलाधर ज्ञान-सुधा वरसै ।
भवि चकोर चित चाहत नित मनु चरण जोति परसै।। सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसुधाचन्द्रस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२६४।।
जगजिय ताप निवारण कारण विलसे अन्तर सै ।
देव सुधा सम गुण निवाहकर, सकल चराचर से।। सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसुधागुणाय नम अर्घ्यं० ।।२६५।।
जा धुनि सुनि नशाय विनसे जिम ताप मेघ वरसै ।
मनहु कमल मकरद वृन्द अलि पाय सुधासर सै।। सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसुधाध्वनये नम अर्घ्यं० ।।२६६।।
अजर अमर सुखदाय भाय मन ज्यो मयूर हरसै,
गाजत घन वाजत ध्वनि सुनि मनु भाजत भय उरसै ।
सूरि निज भेद कियो परसै,
भये मुक्ति मैं नमू शीश नित जोर युगल करसैं।।
ॐ ह्रीं सूरि-अमृतध्वनिसुरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२६७।।

चकोर

जो अपने गुण वा पयाय, वरै निज धर्म न होत विनास ।
द्रव्य कहावत है सु अनन्त,स्वभाव धरे निज आत्म विलास।।
सूरि कहाय सु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम,भये सुख काम नमू वसु जाम।।
ॐ ह्रीं सूरिद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।२६८।।
ज्यो शशि जोति रहै सियरा नित, ज्यो रवि जोति रहै नित ताप ।
त्यो निज ज्ञानकला परपूरण, राजत हो निज करण सु आप।। सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिगुणद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।२६९।।

हो अविनाश अनूपमरूप सु, ज्ञानमई नित केलि करान ।
पै न तजै मरजाद रहै, जिम सिन्धु कलोल सदा परिमाण।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायाय नमः अर्घ्यं० ।।२७०।।

जे कछु द्रव्य तनो गुण है, सु समस्त मिलै गुण आतम माही ।
ताकरि द्रव्य सरूप कहावत, है अविनाश नमैं हम ताई।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२७१।।

जा गुण मे गुण और न हो, निज द्रव्य रहै नित और न ठौर ।
सो गुण रूप सदा निवसैं, हम पूजत हैं करके कर जोर।।
सूरि कहायसु कर्म खिपाइ, निजातम पाय गये शिवधाम ।
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सुखकाम नमू वसु जाम।।

ॐ ह्रीं सूरिगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२७२।।

जो परिणाम धरैं तिनसो, तिनमे करहै वरतैं तिस रूप ।
सो पर्याय उपाय बिना नित, आप विराजत हैं सु अनूप।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिपर्यायस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।२७३।।

हो नित ही परिणाम समय प्रति, सो उत्पाद कहो भगवान।।
सो तुम भाव प्रकाश कियो, निज यह गुण का उत्पाद महान।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं० ।।२७४।।

ज्यो मृतिका निज रूप न छाडत, है घटमाँहि अनेक प्रकार ।
सो तुम जीव स्वभाव धरो नित, मुक्त भए जगवास निवार।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिध्रुवगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं० ।।२७५।।

ये जग मे सव भाव विभाव, पराश्रित रूप अनेक प्रकार।।
तं सव त्याग भये शिवरूप, अवध अमन्द महा सुखकार।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिव्ययगुणोत्पादाय नमः अर्घ्यं० ।।२७६।।

जे जगमे षट्-द्रव्य कहे, तिनमे इक जीव सुज्ञान स्वरूप।।
और सभी विन-ज्ञान कहे, तुम राजत हो नित ज्ञान अनूप।। सूरि०।।

ॐ ह्रीं सूरिजीवतत्त्वाय नमः अर्घ्यं० ।।२७७।।

ज्ञान सुभाव धरो नित ही, नहि छाडत हो कवहूँ निज वान ।
ये ही विशेष भयो सवसो, नही औरन मे गुण ये परधान।।

नहिं चहाव सु बस विपाक, निजातम पाय गये शिवधाम,
सु आतमराम सदा अभिराम, भये सदा वाम नमूं वसु जाम।।
ॐ ह्रीं सूरिजीपतत्त्वगुणाय नम अर्घ्यं०।।२७८।।
जे वर्णादि अनेक सुभाव निजातम मे परसै अनिवार ।
सो परको न लगाव रहो, निजही निजरूप रहो सुखकार।।सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिनिजस्वभावधारकाय नम अर्घ्यं०।।२७९।।
द्रव्य तथापि, विभाव दोउ विधि, कर्म प्रवाह बहै बिन आदि ।
ते सब दूर भये चिद्रूप निजातम शुद्ध सुभाव प्रसाद।।सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरि-आश्रयविनाशाय नम अर्घ्यं०।।२८०।।

मोदक

बंध दोउ विधिके दूर वारण, नाश कियो भवपार उतारण ।
सूरि भये निज ज्ञान कलाधर, तिष्ठ भये प्रणमूं मैं मनधर।।
ॐ ह्रीं सूरिबंधतत्त्वविनाशाय नम अर्घ्यं०।।२८१।।
संवरतत्त्व महा सुख देत है। आश्रव रोकनको यह हेत है।।सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वसहिताय नम अर्घ्यं०।।२८२।।
ज्यूं मणि दीप अडोल अनूपही। संवर तत्व निराकुलरूप ही।।सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसंवरतत्त्वस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।।२८३।।
संवरके गुण ते मुनि पावत, जो मुनि शुद्ध सुभाव सु ध्यावत।।सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसंवरगुणाय नम अर्घ्यं०।।२८४।।
संवर धर्मतनी शिव पावहिं। संवर धरम तहां दरशावहिं।।सूरि०।।
ॐ ह्रीं सूरिसंवरधर्माय नम अर्घ्यं०।।२८५।।

दोहा

एक देश वा सर्व विधि, दोनों मुक्ति स्वरूप ।
नमूं निरजरा तत्व सो, पायो सिद्ध अनूप।।
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वाय नम अर्घ्यं०।।२८६।।
शुद्ध सुभाव जहां तहां, कहो कर्मको नाश ।
एम निर्जरा तत्त्वका, रूप कियो परकाश।।
ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरातत्त्वस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।।२८७।।

कोटि जन्मके विघन सब, सूखे तृण सम जान ।
दहे निर्जरा अग्निसो, इह गुण है परधान।।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरागुणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२८८।।

निज बल कर्म खपाइये, कहो निर्जरा धर्म ।
धर्मी सोई आत्मा, एक हि रूप सुपर्म।।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराधर्मस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२८९।।

समय समय गुणश्रेणि का, खिरै कर्म बल ध्यान ।
ये सम्बन्ध निवार करि, करै मुक्ति सुख पान।।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरानुबधाय नम अर्घ्यं० ।।२९०।।

अतुल शक्ति थिर भावकी, सो प्रगटी तुम माहि ।
यही निर्जरा रूप है, नमू भक्ति कर ताहि।।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जरास्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२९१।।

सर्व कर्म के नाश बिन, लहै न शिव-सुखरास ।
निश्चय तुम ही निर्जरा, कियो प्रतीत प्रकाश।।

ॐ ह्रीं सूरिनिर्जराप्रतीताय नम अर्घ्यं० ।।२९२।।

सकल कर्ममल नाशते, शुद्ध निरजन रूप ।
ज्यो कचन बिन कालिमा, राजै मोक्ष अनूप।।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षाय नम अर्घ्यं० ।।२९३।।

द्रव्य-भाव दोनो सु विधि, करै जगत मे वास ।
द्वैविध बन्ध उखारिकैं, भये मुक्त सुखरास।।

ॐ ह्रीं सूरिबन्धमोक्षाय नम अर्घ्यं० ।।२९४।।

पर विकलप सुख दुख नही, अनुभव निज आनन्द ।
जन्म-मरण विधि नाशकर, राजत शिवसुख कद।।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।२९५।।

जहाँ न दुखको लेश है, उदय कर्म अनुसार ।
सो शिवपद पायो महा, नमू भक्ति उर धार।।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षगुणाय नम अर्घ्यं० ।।२९६।।

जो शिव सुगुण प्रसिद्ध है, तिनसो नित्त प्रबन्ध ।
जे जगवास विलास दुख, तिनकू नमू अबन्ध।।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुबधाय नम अर्घ्यं० । अर्घ्यं० ।।२९७।।

जैसी निज तन आकृती, तज कीनो शिववास ।
ते तैंसैं नित अचल हैं, ज्ञानानन्द प्रकाश।।

ॐ ह्रीं सूरिमोक्षानुप्रकाशाय नम अर्घ्यं० ।।२९८।।

क्षयोपशम परिणाम कर, साधन निजका रूप ।
वा निजपद मे लीनता, ये ही गुप्त-स्वरूप।।

ॐ ह्रीं सूरिस्वरूपगुप्तये नम अर्घ्यं० ।।२९९।।

इन्द्रियजनित न दुख जहाँ, सदा निजानन्दरूप ।
निर-आकुल स्वाधीनता, वरतै शुद्ध स्वरूप।।

ॐ ह्रीं सूरिपरमात्म-स्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।१००।।

रोला

सपूरण श्रुत-सार निजातम बोध लहानो,
निजअनुभव शिवमूल मानु उपदेश करानो ।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यू रवि अंधियारा,
पाठक गुण सभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।

ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।३०१।।

मुक्ति मूल है आत्मज्ञान सोई श्रुत ज्ञानी ।
तत्व-ज्ञान सो लहै निजातम पद सुखदानी।।शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकमोक्षमण्डनाय नम अर्घ्यं० ।।३०२।।

भवसागर ते भव्य जीव तारण अनिवारा ।
तुम मे यह गुण अधिक आप पायो तिस पारा।।शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकगुणेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।३०३।।

दर्शन ज्ञान स्वभाव धरो तद्रूप अनूपी ।
हीनाधिक विन अचल विराजत शुद्ध सरूपी।।शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकगुणस्वरूपेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।३०४।।

निज गुण वा परयाय अखण्डित नित्य धरै है ।
तिहुं काल प्रति अन्य भाव नही ग्रहण करै है।।शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।३०५।।

सहभावी गुण सार जहा परभाव न लेसा ।
अगुरुलघू परणाम वस्तु सद्भाव विशेषा।।शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकगुणपर्यायेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।३०६।।

गुण समुदायी द्रव्य याहिते निरगुण नाही ।
सो अनन्त गुण सदा विराजत तुम पद माही।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकगुणद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।३०७।।

सत सरूप सब द्रव्य सधै नीके अवाधकर ।
सो तुम सत्य सरूप विराजो द्रव्य भाव धर।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३०८।।

जे जे है परनाम बिना परनामी नाही ।
परनामी परनाम एक ही है तुम माही।।
शिष्यन के अज्ञान हरै ज्यू रवि अंधियारा ।
पाठक गुण सभवै सिद्ध प्रति नमन हमारा।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायाय नम अर्घ्यं० ।।३०९।।

अगुरुलघू पर्याय शुद्ध परनाम बखानी ।
निज सरूप मे अन्तरगत श्रुतज्ञान प्रमानी।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकपर्यायस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३१०।।

जगतवास सब पापमूल जियको दुखदाई ।
ताको नाशन हेतु कहो शिव मूल उपाई।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकमगलाय नम अर्घ्यं० ।।३११।।

जहा न दुखको लेश सर्वथा सुख ही जानो ।
सोई मगल गुण तुम मे प्रत्यक्ष लखानो।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकमगलगुणाय नम अर्घ्यं० ।।३१२।।

औरन मगलकरन आप मगलमय राजैं ।
दर्शन कर सुखसार मिलै सब ही अघ भाजै।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकमगलगुणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३१३।।

आदि अनत अविरुद्ध शुद्ध मगलमय मूरति ।
निज सरूप मे बसै सदा परभाव विदूरित।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यमगलाय नम अर्घ्यं० ।।३१४।।

जितनी परणति धरौ सबहि मगलमय रूपी ।
अन्य अवस्थित टार धार तद्रूप अनूपी।। शिष्यन०।।
ॐ ह्रीं पाठकमगलपर्यायाय नम अर्घ्यं० ।।३१५।।

निश्चय वा विवहार सर्वथा मगलकारी ।
जग जीवन के विघन विनाशन सर्व प्रकारी।। शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यपर्यायमगलाय नम अर्घ्यं० ।।३१६।।

भेदाभेद प्रमाण वस्तु सर्वस्व वखानो ।
वचन अगोचर कहो तथा निर्दोष कहानो।। शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यगुणपर्यायमगलाय नम अर्घ्यं० ।।३१७।।

नव विशेष प्रतिभासमान मगलमय भासे ।
निर्विकल्प आनन्दरूप अनुभूति प्रकाशे।। शिष्यन०।।

ॐ ह्रीं पाठकस्वरूपमगलाय नम अर्घ्यं० ।।३१८।।

पायत्ता

निर्विघ्न निराश्रय होई, लोकोत्तम मगल सोई ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया ।।

ॐ ह्रीं पाठकमगलोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।३१९।।

जगजीवनको हम देखा, तुम ही गुण सार विशेखा।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकगुणलोकोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।३२०।।

षट्द्रव्य रचित जग सारा, तुम उत्तम रूप निहारा।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकद्रव्यलोकोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।३२१।।

निज ज्ञान शुद्धता पाइ, जिम करि यह है प्रभुताई।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।।३२२।।

जग जीव अपूरण ज्ञानी, तुम ही लोकोत्तम मानी।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानलोकोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।३२३।।

युगपत निरभेद निहारा, तुम दर्शन भेद उघारा।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनाय नम अर्घ्यं० ।।३२४।।

हम सोवत हैं नित मोही, निरमोही, लखे तुमको ही।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनलोकोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।३२५।।

दृगवत महासुखकारा, तुम ज्ञान महा अविकारा।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३२६।।

निरशस अनन्त अवाधा, निज बोधन भाव अराधा।। तुम गुण० ।।

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वाय नम अर्घ्यं० ।।३२७।।

सम्यक्त्व महासुखकारी, निज गुण स्वरूप अविकारी ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वगुणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३२८।।

निरखेद अछेद अभेदा, सुख रूप वीर्य निर्वेदा।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्याय नम अर्घ्यं० ।।३२९।।

निज भोग कलेश न लेशा, यह वीर्य अनन्त प्रदेशा।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणाय नम अर्घ्यं० ।।३३०।।

परनाम सुथिर निज माही, उपजै न कलेम कदाही।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपर्याय नम अर्घ्यं० ।।३३१।।

द्रव्य भाव लहो तुम जैसो, पावै जगजन न।ह ऐसो।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।३३२।।

निज ज्ञान सुधारस पीवत, आनद सुभाव सु जीवत।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यगुणपर्याय नम अर्घ्यं० ।।३३३।।

अविशेष अनन्त सुभावा, तुम दशन माहि लखावा।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायाय नम अर्घ्यं० ।।३३४।।

इकवार लखे सवही को, तद्रूप निजातम ही को।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनपर्यायस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३३५।।

सपरस आदिक गण नाही चिद्रूप निजातम ही को।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।३३६।।

शरणागति दीनदयाला, हम पूजत भाव विशाला।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३३७।।

जिनशरण गही शिव पायो, हम शरण महा गुणगायो।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३३८।।

अनुभव निज बोध करावे, यह ज्ञान शरण कहलावै ।
तुम गुण अनन्त श्रुत गाया, हम सरधत शीश नवाया।।

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानगुणशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३३९।।

दृग मात्र तथा सरधाना, निश्चय शिववास कराना।। तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३४०।।

निरभेद स्वरूप अनूपा, है शरण तनी शिव भूपा।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदर्शनस्वरूपशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३४१।।

निजआत्म-स्वरूप लखाया, इह कारण शिवपद पाया।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वशरणाय नम. अर्घ्यं० ।।३४२।।

आतम-स्वरूप सरधाना, तुम शरण गहो भगवाना।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकसम्यक्त्वस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३४३।।

निज आतम साधन माहीं, पुरुषारथ छूटै नाही।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३४४।।

आतम शक्ती प्रगटावें, तब निज स्वरूप जिय पावै।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यस्वरूपशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३४५।।

परमातम वीर्य महा है पर निमित न लेश तहाँ हे।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकवीर्यपरमात्मशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३४६।।

श्रुतद्वादशांग जिनवानी, निश्चय शिववास करानी।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकद्वादशांगशरणाय नम अर्घ्यं० ।।३४७।।

दश पूर्व महा जिनवाणी, निश्चय अघहर सुखदानी।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकदशपूर्वांगाय नम अर्घ्यं० ।।३४८।।

दश चार पूर्व जिनवानी, निश्चय शिववास करानी।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकचतुर्दशपूर्वांगाय नम अर्घ्यं० ।।३४९।।

निज आत्म चरण प्रकटावै, आचार अंग कहलावै।।तुम गुण०।।

ॐ ह्रीं पाठकाचारांगाय नम अर्घ्यं० ।।३५०।।

रेखता

विविध शब्दादि तुम टारी, निरन्तर ज्ञान आचारी ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया।।

ॐ ह्रीं पाठकज्ञानाचाराय नम अर्घ्यं० ।।३५१।।

पराश्रित भाव विनशाया, सुथिर निजरूप दर्शाया।।पूर्ण०।।

ॐ ह्रीं पाठकतपसाचाराय नम अर्घ्यं० ।।३५२।।

मुक्तपद दैन अनिवारी, सर्व बुध चर्ण आचारी।।पूर्ण०।।

ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयाय नम अर्घ्यं० ।।३५३।।

शुद्ध रत्नत्रय धारी, निजातमरूप अविकारी।।पूण०।।
ॐ ह्रीं पाठकरत्नत्रयसहायाय नम अर्घ्यं० ।।३५४।।

ध्रौव्य पचम-गती पाई, जन्म पुनि मर्ण छुटकाई।।पूण०।।
ॐ ह्रीं पाठकध्रुव-असंसाराय नम अर्घ्यं० ।।३५५।।

अनूपम रूप अधिकाइ, असाधारण स्वपद पाइ।।पूण०।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३५६।।

आन तुम सम न गुण होइ, कहो एकत्व गुण सोई।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वगुणाय नम अर्घ्यं० ।।३५७।।

निजानन्द पूर्ण पद पाया, सोइ परमात्म कहलाया।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वपरमात्मने नम अर्घ्यं० ।।३५८।।

उच्चगत मोक्षका दाता, एक निजधर्म विख्याता।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वधर्माय नम अर्घ्यं० ।।३५९।।

जु तुम चेतनता परकासी, न पावैं ऐसी जगवासी।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।३६०।।

ज्ञान दर्शन स्वरूपी हो, असाधारण अनूपी हो ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमू सत्यार्थ उवझाया।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वचेतनस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३६१।।

गहौं नित निज चतुष्टयको, मिलै कवहूँ नही परसो।।पूर्ण०।।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमू सत्यार्थ उवझाया।।
ॐ ह्रीं पाठक-एकत्वद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।३६२।।

स्वपद अनुभूत सुख रासी, चिदानन्द भाव परकासी।।पूण०।।
ॐ ह्रीं पाठकचिदानन्दाय नम अर्घ्यं० ।।३६३।।

अन्त पुरुषार्थ साधक हो, जन्म मरणादि वाधक हो।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकसिद्धसाधकाय नम अर्घ्यं० ।।३६४।।

स्वातम ज्ञान दरशाया, ये पूरण ऋद्धि पद पाया।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकऋद्धिपूर्णाय नम अर्घ्यं० ।।३६५।।

सकल विधि मूरछात्यागी, तुम्ही निरग्रथ वडभागी।।पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकनिर्ग्रन्थाय नम अर्घ्यं० ।।३६६।।

निर्जाश्रित अर्थ जानाही अवाधित अर्थ तम माहीं ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकार्थविधानाय नम अर्घ्यं० ।।३६७।।
न फिर नगार पद पाया, अपरव वन्ध विनमाया ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकसंसारानन्नुवन्धाय नम अर्घ्यं० ।।३६८।।
आप कल्याणमय राजो नवल जगवान दुख त्याजो ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठयकल्याणाय नम अर्घ्यं० ।।३६९।।
स्वपर हितकार गणधारी, परम कल्याण अविकारी ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठककल्याणगुणाय नम अर्घ्य ।।३७०।।
अहित परिहार पद जो है, परम कल्याण नामो है ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठककल्याणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३७१।।
स्वगुरा द्रव्याश्रये माही जहां कछु पर निमित नाहीं ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठककल्याणद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।३७२।।
जोहै सोहै अमित काला, अन्यथा भाव विधि टाला ।
पर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमू तत्त्वार्थ उवझाया ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकतत्त्वगुणाय नम अर्घ्यं० ।।३७३।।
रहे नित चेतन माही, वह चिद्रूप मुनि ताही ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकचिद्रूपाय नम अर्घ्यं० ।।३७४।।
सर्वथा ज्ञान परिणामी प्रकट है चेतना नामी ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।३७५।।
नहीं अन्यत्व भेदा है गुणी गुण निर-विछेदा है ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकचेतनागुणाय नम अर्घ्यं० ।।३७६।।
घटाघट वस्तु परकाशी, धरे है जोति प्रतिभाशी ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकज्योतिप्रकाशाय नम अर्घ्यं० ।।३७७।।
वस्तु सामान्य अवलोका, है युगपत दश सिद्धोका ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकदर्शनचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।३७८।।
विशेषण युक्त साकारा, ज्ञान दुति में प्रगट सारा ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकज्ञानचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।३७९।।
ज्ञानसो जीव नामी है, भेद समवाय स्वामी है ।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकजीवचिदानन्दाय नम अर्घ्यं० ।।३८०।।

चराचर वस्तु स्वाधीना, समय एकहि में लख लीना।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकवीर्यचेतनाय नम अर्घ्यं०।।३८१।।
सकल जीवों के सुख कारन, शरण तुमही हो अनिवारन।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकसकलशरणाय नम अर्घ्यं०।।३८२।।
तुम हो त्रयलोक हितकारी अद्वितीय शरण बलिहारी।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकत्रैलोक्यशरणाय नम अर्घ्यं०।।३८३।।
तुम्हारी शरण तिहुं काला, करत जग जीव प्रतिपाला।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकत्रिकालशरणाय नम अर्घ्यं०।।३८४।।
शरण अनिवार सुखदाइ, प्रगट सिद्धान्त मे गाइ ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमूं सत्यार्थ उवझाया।।
ॐ ह्रीं पाठकत्रिमगलशरणाय नम अर्घ्यं०।।३८५।।
लोक मे धम विख्याता, सो तुमही मे सुखसाता।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकलोकशरणाय नम अर्घ्यं०।।३८६।।
जोग विन आश्रवे नाही, भये निर आश्रवा ताही।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकाश्रवावेदाय नम अर्घ्यं०।।३८७।।
आश्रव कर्म का खोना, कार्य था अपना होना।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकाश्रवविनाशाय नम अर्घ्यं०।।३८८।।
तत्त्व निबाध उपदेशा, विनाशे कम परवेशा।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठक-आश्रवोपदेशछेदकाय नम अर्घ्यं०।।३८९।।
प्रकृति सब कर्म की चूरी, स्वभाव मल नाश दुख पूरी।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकबध-अन्तकाय नम अर्घ्यं०।।३९०।।
न फिर ससार अवतारा, बन्ध-विधि सन्त कर डारा।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकबधमुक्ताय नम अर्घ्यं०।।३९१।।
आश्रव कर्म दुखदाई, रुके सवर ये सुखदाई।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकसवराय नम अर्घ्यं०।।३९२।।
सर्वथा जोग विनसाया, स्व-सवररूप दरशाया।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकसवरस्वरूपाय नम अर्घ्यं०।।३९३।।
कलुषता भाव मे नाही, भये सवर करण ताही।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकसवरकरणाय नम अर्घ्यं०।।३९४।।

कुपरणति राग-रुष नाशन, निरजरा रूप प्रतिभासन।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकनिर्जरास्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३९५।।
कामदेव दाह जग सारा, आप तिस भस्म कर डारा।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठककदर्पच्छेदकाय नम अर्घ्यं० ।।३९६।।
चहुँ विधि बध विधि चूरा, ये विस्फोटक कहो पूरा।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठककर्मविस्फोटकाय नम अर्घ्यं० ।।३०७।।
दऊ विधि कर्मका खोना, सोई है मोक्ष का होना।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकमोक्षाय नम अर्घ्यं० ।।३९८।।
द्रव्य अर भाव मल टारा, नमू शिवरूप सुखकारा।। पूर्ण०।।
ॐ ह्रीं पाठकमोक्षस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३९९।।
अरति-रति पर-निमित खोई, आत्म-रति है प्रगट सोई ।
पूर्ण श्रुतज्ञान फल पाया, नमू सत्यार्थ उवझाया।।
ॐ ह्रीं पाठक-आत्मरतये नम अर्घ्यं० ।।४००।।

लोलतरग तथा बड़ी चौपाई

अठाईस मूल सदा गुण धारी, सो सब साधु वरै शिवनारी ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे।। ४०१ ।
ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नम अर्घ्यं० ।।४०१।।
मूल तथा सब उत्तर गाये, ये गुण पालत साधु कहाये।। साधु भये०।
ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।४०२।।
साधुनके गुण साधुहि जाने, होत गुणी गुणही परमाने।। साधु भये०।
ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।४०३।।
नेम थकी विश्वास करे जो, द्रव्य थकी शिवरूप करै जो।। साधु भये०।
ॐ ह्रीं सर्वसाधुद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।४०४।।
जीव सदा चित भाव विलासी, आपहीआप सधै शिवराशी।। साधु भये०।
ॐ ह्रीं सर्वसाधुगुणद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।४०५।।
ज्ञानमई निज ज्योति प्रकाशी, भेद विशेष सबै प्रतिभासी।। साधु भये०।।
ॐ ह्रीं साधुज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।।४०६।।
एकहि बार लखाय अभेदा, दर्शनको सब रोग विछेदा।। साधु भये०।।
ॐ ह्रीं साधुदर्शनाय नम अर्घ्यं० ।।४०७।।

आपहि साधन साध्य तुमही हो, एक अनेक अबाध तुम्ही हो ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ।।
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यभावाय नम अर्घ्यं० ।।४०८।।
चेतनता निजभाव न छारे, रूप स्पर्शन आदि न धारे ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।४०९।।
जो उतपाद भये इकवार मो निरबाध रहै अविकार ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुवीर्याय नम अर्घ्यं० ।।४१०।।
है परनाम अभिन्न प्रणामी सो तुम साधु भये शिवगामी ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नम अर्घ्य ।।४११।।
जो गुण वा परियाय धरो हो, सो निज माहि अभिन्न वरो हो ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणपर्यायाय नम अर्घ्यं० ।।४१२।।
मगलमय तुम नाम कहावे, लेनहि नाम सु पाप नसावे ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुमगलाय नम अर्घ्यं० ।।४१३।।
मगल रूप अनूपम सोहे, ध्यान किये नित आनन्द होहे ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुमगलस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।४१४।।
पाप मिटै तुम शरण गहेते, मगल शरण कहाय लहैते ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुमगलशरणाय नम अर्घ्यं० ।।४१५।।
देखत ही सब पाप नसे हैं, आनन्द मगलरूप लसे ह ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुमगलदर्शनाय नम अर्घ्यं० ।।४१६।।
जानत है तुमको मुनि नीके, पाप कलाप मिटै तिनहीके ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुमगलज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।।४१७।।
ज्ञानमई तुम हो गुणारासा, मगल ज्योति धरो रविकासा ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुज्ञानगुणमगलाय नम अर्घ्यं० ।।४१८।।
मगल वीर्य तुम्ही दशाया, काल अनन्त न पाप लगाया ।। साधु भये० ।।
ॐ ह्रीं साधुवीर्यमगलाय नम अर्घ्यं० ।।४१९।।

वीर महा सरूप तिहारा, पाप विना नित ही अविकारा ।
साधु भये शिव साधनहारे, सो तुम साधु हरो अघ म्हारे ।।

ॐ ह्रीं साधुवीर्यमंगलस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४२०।।

मंगल वीर्य महा गुणधामी, निज पुरुषार्थहि मोक्ष लहामी ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुवीर्यपरममंगलाय नमः अर्घ्यं० ।।४२१।।

वीर स्वभाविक पण तिहारा, कर्म नशाय भये भवपारा ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुवीर्यद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ।।४२२।।

तीन हि लोक सरस सब माई, आप समान न उत्तम कोई ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमाय नमः अर्घ्यं० ।।४२३।।

लोक सभी विधि बन्धन माही, तुम सम रूप धरे ते नाही ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।४२४।।

लायकनके गुण पाप कलेशा, उत्तम रूप नही तुम जेसा ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४२५।।

लोक अलोक निहारक नामी, उत्तम द्रव्य तुम्ही अभिरामी ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्याय नमः अर्घ्यं० ।।४२६।।

लोक सभी षटद्रव्य रचाया, उत्तम द्रव्य तुम्ही हम पाया ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमद्रव्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४२७।।

ज्ञानमई चित उत्तम साह, ऐसो लोक विषै अरु को है ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।।४२८।।

ज्ञान स्वरूप सुभाव तिहारा, उत्तम लोक कहे इम सारा ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४२९।।

देखन मे कुछ आड न आवे, लोग तनी सब उत्तम गावे ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।।४३०।।

देखन जानन भाव धरे हो, उत्तम लोकके हेतु गहे हो ।। साधु भये० ।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमज्ञानदर्शनाय नमः अर्घ्यं० ।।४३१।।

जाकर लोकशिखर पद धारा, उत्तम धर्म कहो जग सारा।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्माय नमः अर्घ्यं० ।।४३२।।

धर्म स्वरूप निजातम माही, उत्तम लोक विषै ठहराई।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमधर्मस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४३३।।

अन्य सहाय न चाहत जाको, उत्तम लोक कहै बल ताको।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्याय नमः अर्घ्यं० ।।४३४।।

उत्तम वीर्य सरूप निहारा, साधन मोक्ष कियो अनिवारा।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमवीर्यस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४३५।।

पूरण आत्मकला परकाशी, लोक विषै अतिशय अविनाशी।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमातिशयाय नमः अर्घ्यं० ।।४३६।।

राग-विरोध न चेतन माही, ब्रह्म कहो जग उत्तम ताही।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।।४३७।।

ज्ञान-स्वरूप अकम्प अडोला, पूरण ब्रह्म प्रकाश अटोला।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमब्रह्मज्ञानस्वरूपाय नमः अर्घ्यं० ।।४३८।।

राग विरोध जयो शिवगामी, आत्म अनातम अन्तरजामी।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।४३९।।

भेद विना गुण-भेद धरो हो, सांख्य कुवादिक पक्ष हरो हो।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणसम्पन्नाय नमः अर्घ्यं० ।।४४०।।

साधत आतम पुरुष सखाई, उत्तम पुरुष कहो जग ताई।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमपुरुषाय नमः अर्घ्यं० ।।४४१।।

साधु समान न दीनदयाला, शरण गहै सुख होत विशाला।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।४४२।।

जे जन साधु शरण गही है, ते शिव आनन्द लब्धि लही है।। साधु भये०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकोत्तमगुणशरणाय नमः अर्घ्यं० ।।४४३।।

ता गुन के गुण द्रव्य चितारे, होत महासुख शरण उभारे।।साधुभये०।।
ॐ ह्रीं साधुगुणद्रव्यशरणाय नम अर्घ्यं० ।।४४४।।

लावनी

तुम चितवत वा अवलोकत वा सरधानी,
इम शरण गहे पावै निश्चय शिवरानी ।
निजरूप मगन मन ध्यान धरे मुनिराजै,
मैं नमूं साधु सम सिद्ध अकंप विराजै।।
ॐ ह्रीं साधुदर्शनशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४४५।।
तुम अनुभव करि शुद्धोपयोग मन धारा ।
यह ज्ञान शरण पायो निश्चै अविकारा।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुज्ञानशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४४६।।
निज आत्मरूप मे दृढ़ सरधा तुम पाई ।
थिर रूप सदा निवसो शिववास कराई।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधु-आत्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४४७।।
तुम निराकार निरभेद अछेद अनूपा ।
तुम निरावरण निरद्वंद स्वदर्श स्वरूपा।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुदर्शस्वरूपाय नमोऽर्घ्यं० ।।४४८।।
तुम परम पूज्य परमेश परमपद पाया ।
हम शरण गही पूजे नित मनवचकाया।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुपरमात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४४९।।
तुम मन इन्द्री व्यापार जीत सु अभीता ।
हम शरण गही मनु आज कर्मरिपु जीता।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुनिजात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५०।।
भववास दुखी जे शरण गहैं तुम मन मे ।
तिनको अवलम्ब उभारो भयहर छिन मे।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुवीर्यशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५१।।
दृग वोध अनन्तानन्त धरो निरखेदा ।
तुम वल अपार शरणागति विघनविछेदा।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुवीर्यात्मशरणाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५२।।

निज ज्ञानानन्दी महा लक्षिमी सोहै ।
सुर असुरन मे नित परम मुनी मन मोहै।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीअलकृताय नमोऽर्घ्यं० ।।४५३।।

भववास महा दुखरास ताहि विनशाया ।
अति क्षीन लीन स्वाधीन महासुख पाया।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीप्रणीताय नमोऽर्घ्यं० ।।४५४

त्रिभुवन का ईश्वरपना तुम्ही मे पाया ।
त्रिभुवन के पातिक हरौ मनू रवि-छाया।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुलक्ष्मीरूपाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५५।।

तुम काल अनतानत अबाध विराजो ।
परनिमित्त विकार निवार सु नित्य सु छाजो।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुध्रुवाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५६।।

तुम छायकलब्धि प्रभाव परम गुणधारी ।
निवासौ निज-आनद माहि अचल अविकारी।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुगुणध्रुवाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५७।।

तेरम चौदस गुणथान द्रव्य है जैसो ।
रहै काल अनन्तानन्त शुद्धता तैसो।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुद्रव्यगुणध्रुवाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५८।।

फिर जन्ममरण नही होय जान्म वो पाया ।
ससार-विलक्षण निज अपूर्व पद पाया।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुद्रव्योत्पादाय नमोऽर्घ्यं० ।।४५९।।

सूक्षम अलब्धि पर्याप्त निगोद शरीरा ।
ते तुच्छ द्रव्य करनाश भये भवतीरा।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुनव्यापिने नमोऽर्घ्यं० ।।४६०।।

रागादि परिग्रह टारि तत्त्व सरधानी ।
इम साधु जीव निज साधत शिवसुखदानी।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुजीवाय नमोऽर्घ्यं० ।।४६१।।

स्वसवेदन विज्ञान परम अमलाना ।
तज इष्ट-अनिष्ट विकल्प जाल दुखसाना।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुजीवगुणाय नम अर्घ्यं०।।४६२।।

देखन जानन चेतन सु रूप अविकारी ।
गुण-गुणी भेद मे अन्य भेद व्यभिचारी।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुचेतनगुणाय नम अर्घ्यं० ।।४६३।।
चेतनकी परिणति रहै सदा चित माही ।
ज्यो सिंधु लहर ही सिंधु और कुछ नाही।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुचेतनस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।४६४।।
चेतनविलास सुखरास नित्य परकाशी ।
सो साधु दिगम्बर साधु भये अविनाशी।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।४६५।।
तुम असाधारण अरू परमात्मप्रकाशी ।
नही अन्य जीव यह लहै गहै भववासी।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुपरमात्मप्रकाशाय नम अर्घ्यं० ।।४६६।।
तुम मोह तिमिर बिन स्वय सूर्य परकाशी ।
गुणद्रव्यपर्य सब भिन्न-भिन्न प्रतिभासी।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुज्योतिस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।४६७।।
ज्यो घटपटादि दीपक की ज्योति दिखावै ।
त्यो ज्ञानज्योति सब भिन्न-भिन्न दरशावै।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुज्योतिप्रदीपाय नम अर्घ्यं० ।।४६८।।
सामान्यरूप अवलोकन युगपत सारा ।
तुम दर्शन ज्योति प्रदीप हरै अंधियारा।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुदर्शनज्योतिप्रदीपाय नम अर्घ्यं० ।।४६९।।
साकार रूप सु विशेष ज्ञानद्युति माही ।
युगपत कर प्रतिबिंबित वस्तु प्रगटाई।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुज्ञानज्योतिप्रदीपाय नम अर्घ्यं० ।।४७०।।
जे अर्थजन्य कहैं ज्ञान वो झूठेवादी ।
है स्वर-प्रकाशक आतम-ज्योति अनादी।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधु-आत्मज्योतिषे नम अर्घ्यं० ।।४७१।।
है तारणतरण जहाजाश्रित भवसागर ।
हम शरण गही पावैं शिववास उजागर।।निजरूप०।।
ॐ ह्रीं साधुशरणाय नम अर्घ्यं० ।।४७२।।

सामान्यरूप सब साधु मुक्ति-मग साधैं ।
हम पावैं निजपद नेमरूप आराधैं।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुसर्वशरणाय नम अर्घ्यं० ।।४७३।।

त्रसनाडी ही मे तत्वज्ञान सरधानी ।
ताकर साधै निश्चय पावै शिवरानी।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुलोकशरणाय नम अर्घ्यं० ।।४७४।।

तिहुँलोक करन हित बरते नित उपदेशा ।
हम शरण गही मेटो भववास क्लेशा।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुत्रिलोकशरणाय नम अर्घ्यं० ।।४७५।।

ससार विषम दुखकार असार अपारा ।
तिस छेदक वेदक सुखदायक हितकारा।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुससारछेदकाय नम अर्घ्यं० ।।४७६।।

यद्यपि इक क्षेत्र अवगाह अभिन्न विराजैं ।
यद्यपि निज सत्ता माँहि भिन्नता साजैं।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुएकत्वाय नम अर्घ्यं।।४७७।।

यद्यपि सामान्य-सरूप सु पूरणज्ञानी ।
तद्यपि निज आश्रयभाव भिन्न परनामी।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुएकत्वगुणाय नम अर्घ्यं० ।।४७८।।

है असाधारण एकत्वद्रव्य तुम माही ।
तुम सम ससार मझार और कोउ नाही।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुएकत्वद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।४७९।।

यद्यपि सब ही हो असख्यात परदेशी ।
तद्यपि निज मे निजरूप स्वद्रव्य सुदेशी।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुएकत्वस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।४८०।।

सामान्यरूप सब ब्रह्म कहा वैज्ञानी ।
तिनमे तुम वृषभ नु परमब्रह्म परणामी।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुपरब्रह्मणे नम अर्घ्यं० ।।४८१।।

सापेक्ष एक ही कहे नु नय विस्तारा ।
तुम भाव प्रकटकर कहै सुनिश्चैकारा।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुपरमस्याद्वादाय नम अर्घ्यं० ।।४८२।।

है ज्ञाननिमित यह वचन जाल परमाणा ।
है वाचक-वाच्य सयोग ब्रह्म कहलाना।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुशुद्धब्रह्मणे नम अर्घ्यं० ।।४८३।।

षट्द्रव्य निरूपण करै सोई आगम हो ।
तिसके तुम मूलनिधान सु परमागम हो।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुपरमागमाय नम अर्घ्यं० ।।४८४।।

तीर्थेश कहै सर्वज्ञ दिव्य धुनि माही ।
तुम गुण अपार इम कहो जिनागम ताही।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुजिनागमाय नम अर्घ्यं० ।।४८५।।

तुम नाम प्रसिद्ध अनेक अर्थ का वाची ।
ताके प्रवोध सो हो प्रतीत मन साची।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधु-अनेकार्थाय नम अर्घ्यं० ।।४८६।।

लोभादिक मेटे विन न शौचता होई ।
है वृथा तीर्थ-स्नान करो भी कोई।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुशौचाय नम अर्घ्यं० ।।४८७।।

है मिथ्या मोह प्रवल मल इनका खोना ।
सो शुद्धशौच गुण यही, न तनका धोना।।निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुशुचित्वगुणाय नम अर्घ्यं० ।।४८८।।

इकदेश कर्ममल नाशि पवित्र कहायो,
तुम सर्व कर्ममल नाशि परमपद पायो।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुपवित्राय नम अर्घ्यं० ।।४८९।।

तुम रहो बधसो दूरि एकात सुखाई ।
ज्यो नभ अलिप्त सब द्रव्य रहो तिस माही।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुविमुक्ताय नम अर्घ्यं० ।।४९०।।

सब द्रव्य-भाव-नोकर्म बध छुटकाया ।
तुम शुद्ध निरजन निजसरूप थिर पाया।। निजरूप०।।

ॐ ह्रीं साधुबन्धमुक्ताय नम अर्घ्यं० ।।४९१।।

अडिल्ल

भावाश्रव विन अतिशय महित अवध हो ।
मेघपटल विन ज्यो रविकिरण अमद हो ।।
मोक्षमार्ग वा मोक्ष श्रेय मव साधु है ।
नमत निरतर हम हुं कर्म रिपुको दहे ।। टेक ।।

ॐ ह्रीं साधुबन्धप्रतिबन्धकाय नम अर्घ्यं० ।।४९२।।

निज स्वरूप मे लीन परम सवर करैं ।
यह कारण अनिवार कर्म आवन हरैं ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुसवरकारणाय नम अर्घ्यं० ।।४९३।।

पुद्गलीक परिणाम आठ विधि कर्म है ।
तिनकी करत निरजरा शुद्धसु पम है ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुनिर्जराद्रव्याय नम अर्घ्यं० ।।४९४।।

पर्म शुद्ध उपयोग रूप वरते जहा ।
छिनमे नन्तानन्त कम खिरै है तहाँ ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरानिमित्ताय नम अर्घ्यं० ।।४९५।।

सकल विभाव अभाव निर्जरा करत है ।
ज्यो रवि तेज प्रचड सकल तम हरत है ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुनिर्जरागुणाय नम अर्घ्यं० ।।४९६।।

जे ससार निमित्त ते सव दुख रूप है ।
तुम निमित्त शिव कारण शुद्ध अनूप है ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुनिमित्तमुक्ताय नम अर्घ्य ।।४९७।।

सशयरहित सुनिश्चै सम्मतिदाय हो ।
मिथ्या-भ्रम-तमनाशन सहज उपाय हो ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुबोधधर्माय नम अर्घ्यं० ।।४९८।।

अति विशुद्ध निजज्ञान स्वभाव सु धरत हो ।
भव्यनके सशय आदिक तम हरत हो ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुबोधगुणाय नम अर्घ्यं० ।।४९९।।

अविनाशी अविकार परम शिवधाम हो ।
पायो सो तुम सुगत महा अभिराम हो ।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुसुगतिभावाय नम अर्घ्यं० ।।५००।।

जासो परे न और जन्म वा मरण है ।
सो उत्तम उत्कृष्ट परम गति को लहै।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुकरमगतिभावाय नम अर्घ्यं० ।।५०१।।
पर निमित्त रागादिक जे परनाम है ।
इन विभाव सो रहित साधु शुभ नाम है।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुविभावरहिताय नम अर्घ्यं० ।।५०२।।
निजसुभाव सामर्थ सु प्रभुता पाइयो ।
इन्द्र-फनेन्द्र-नरेन्द्र शीश निज नाइयो।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुस्वभावसहिताय नम अर्घ्यं० ।।५०३।।
कर्मबध सो रहित सोई शिवरूप हैं ।
निवसे सदा अबध स्वशुद्ध अनूप है।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुमोक्षस्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।५०४।।
सकल द्रव्य पर्याय विषै स्वज्ञान हो ।
सत्यारथ निश्चल निश्चै परमाण हो।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुपरमानन्दानाय नम अर्घ्यं० ।।५०५।।
तीन लोकके पूज्य यतीजन ध्यावही ।
कर्म-शुत्र को जीत 'अर्ह' पद पावही।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्स्वरूपाय नम अर्घ्यं० ।।५०६।।
परम इष्ट शिव साधत सिद्ध कहाइयो ।
तीन लोक परमेष्ट परमपद पाइयो।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुसिद्धपरमेष्ठिने नम अर्घ्यं० ।।५०७।।
शिव-मारग प्रकटावन कारण हो तुम्ही ।
भविजन पतित उधारन तारन हो तुम्ही।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधुसूरिप्रकाशिने नम अर्घ्यं० ।।५०८।।
स्वपर सुहित करि परम बुद्धि भरतार हो ।
ध्यान धरत आनद-बोध दातार हो।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधु-उपाध्यायाय नम अर्घ्यं० ।।५०९।।
पच परम गुरु प्रकट तुम्हारो नाम है ।
भेदाभेद सुभाव सु आतमराम है।। मोक्षमार्ग०।।
ॐ ह्रीं साधु-अर्हतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नम अर्घ्यं।।५१०।।

लोकालोक सु व्यापक ज्ञानमुभावतें ।
तद्यपि निजपद लीन विहीनविभावतें।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधुआत्मरतये नम अर्घ्यं० ।।५११।।

रतनत्रय निज भाव विशेष अनत ह ।
पच परमगुरु भये नमें नित मत हं।। मोक्षमार्ग०।।

ॐ ह्रीं साधु-अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरत्नत्रयात्मकानत-गुणेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।५१२।।

पच परम गुरु नाम विशेषण को धरे ।
तीन लोक मे मगलमय आनन्द करै।।
पूरणकर थुतिनाम अन्त मुख कारण ।
पूजूँ हूँ युत भाव सु अर्घ उतारण।।

ॐ ह्रीं अर्ह द्वादशाधिकपचशतगुणयुतसिद्धेभ्यो नम पूर्णार्घ्यं० ।।

अथ जयमाला

रत्नत्रय भूषित महा, मच सुगुरु शिवकार ।
सकल सुरेन्द्र नमें नमू, पाऊ सो गुणसार।। १ ।।

पद्धडी

जय महा मोहदल दलन सूर, जय निर्विकल्प आनन्दपूर ।
जय द्वैविधि कर्म विमुक्त देव, जय निजानन्द स्वाधीन एव।। १ ।।
जय सशयादि भ्रमतम निवार, जय स्वामिभक्ति द्युतिथुति अपार ।
जय युगपत सकल प्रत्यक्ष लक्ष, जय निरावरण निर्मल अनक्ष।। २ ।।
जय जय जय सुखसागर अगाध, निरद्वन्द निरामय निर-उपाधि ।
जय मनवचतन व्यापार नाश, जय थिरसरूप निज पद प्रकाश।। ३ ।।
जय पर-निमित्त सुख-दुख निवार, निरलेप निराश्रय निर्विकार ।
निज मे परको पर मे न आप, परवेश न हो नित निर-मिलाप।। ४ ।।
तुम परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार ।
तुम पच परम आचार युक्त, नित भक्त वर्ग दातार मुक्त।। ५ ।।
एकादशाग सर्वाग पूर्व, स्वैअनुभव पायो फल अपूर्व ।
अन्तर-बाहिर परिग्रह नसाय, परमारथ साधू पद लहाय।। ६ ।।
हम पूजत निज उर भक्ति ठान, पावे निश्चय शिवपद महान ।
ज्यों शशि किरणावलि सियर पाय, मणि चन्द्रकांति द्रवता लहाय।। ७ ।।

घतानन्द

जय भव-भयहार, बन्धविडार, सुखसार शिवकरतार ।
नित 'सन्त' सु ध्यावत, पाप नसावत, पावत पद निज अविकार ।।

ॐ ह्रीं द्वादशाधिकपचशतदलोपरिस्थितसिद्धेभ्यो नम पूर्णार्घ्यं० ।

सोरठा

तुम गुण अमल अपार, अनुभवते भव-भय नशै ।
"सन्त" सदा चित धार, शांति करो भवतप हरो ।।

इत्याशीर्वाद

(यहाँ १०८ बार "ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नम " मत्र का जाप करे।)

बन्धन क्या है?

बन्धन तभी तक बन्धन है, जबतक बन्धन की अनुभूति है। यद्यपि पर्याय मे बन्धन है, तथापि आत्मा तो अबन्धस्वभावी ही है। अनादिकाल से यह अज्ञानी प्राणी अबन्धस्वभावी आत्मा को भूलकर बन्धन पर केन्द्रित हो रहा है। वस्तुत बन्धन की अनुभूति ही बन्धन है। वास्तव मे 'मैं बँधा हू' —इस विकल्प से यह जीव बँधा है।

लौकिक बन्धन से विकल्प का बन्धन अधिक मजबूत है, विकल्प का बन्धन टूट जावे तथा अबध की अनुभूति सघन हो जावे तो बाह्य बन्धन भी सहज टूट जाते है। बन्धन के विकल्प से, स्मरण से, मनन से दीनता-हीनता का विकास होता है। अबन्ध की अनुभूति से, मनन से, चिन्तन से शौर्य का विकास होता है, पुरुषार्थ सहज जागृत होता है, पुरुषार्थ की जागृति मे बन्धन कहाँ?

—तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ, पृ० ७०

(एक हजार चौबीस गुण सहित)

अष्टम पूजा

छप्पय

ऊरध अधो सरेफ सबिन्दु हकार विराजे ।
अकारादि स्वरलिप्त कर्णिका अन्त सु छाजे ।।
वर्गनिपूरित वसुदल अम्बुज तत्त्व संधिधर ।
अग्रभाग में मन्त्र अनाहत सोहत अतिवर ।।
पुनि अन्त ह्रीं बेढ्यो परम सुर ध्यावत अरि नागको ।
ह्वै केहरि सम पूजन निमित्त सिद्धचक्र मंगल करो ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं श्रीसिद्धपरमेष्ठिन् ! चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्र-गुणसहितविराजमान अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

दोहा

सूक्ष्मादि गुण सहित है कर्म रहित नीरोग ।
सिद्धचक्र सो थापहूं मिटै उपद्रव योग ।।
(इति यत्रस्थापनार्थं पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

गीता

निज आत्मरूप सु तीर्थ मग नित सरस आनन्दधार हो ।
नाशे त्रिविधि मल सकल दुखमय भव-जलधिके पार हो ।
यातैं उचित ही है सु तुम पद, नीरसों पूजा करूं ।
इक सहस अरु चौबीस गुण गण भावयुत मन में धरूं ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशत्यधिकैकसहस्रगुणसंयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

शीतल सुरूप सुगन्ध चन्दन एक भव तप नासही ।
सो भव्य मधुकर प्रिय सु यह नहिं और ठौर सुवास ही ।।

याते उचित ही है जु तुम पद, मलयसो पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने ससारतापविनाशनाय चन्दन० ।।२।।

अक्षय अबाधित आदि-अन्त, समान स्वच्छ सुभाव हो ।
ज्यो तुम विना तदुल दिपै त्यू, निखिल अमल अभाव हो।।
याते उचित ही है जु तुम पद, अक्षत पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षत० ।।३।।

गुण पुष्पमाल विशाल तुम, भवि कठ पहिरै भावसो ।
जिनके मधुपमन रसिक लुब्धित, रमत नित-प्रति चावसो।।
याते उचित ही है जु तुम पद, पुष्पमो पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविनाशनाय पुष्प० ।।४।।

शुद्धात्म सरस सुपाक मधुर, समान और न रस कही ।
ताके हो आस्वादी सु, तुम सम और सतुष्टित नही।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, चरुनसो पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य० ।।५।।

स्वपर प्रकाश स्वभावधर ज्यू, निज-स्वरूप सभारते ।
त्यू ही त्रिकाल अनत द्रव, पर्याय प्रकट निहारते।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, दीपसो पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोहाधकारविनाशनाय दीप० ।।६।।

वर ध्यान अगनि जराय वसुविधि, ऊर्ध्वगमन स्वभावते ।
राजै अचल शिव थान नित, तिह धर्मद्रव्य अभावते,।।
यातैं उचित ही है जु तुम पद, धूपसो पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूप० ।।७।।

सर्वोत्कृष्ट सु पुण्य फल, तीर्थेश पद पायो महा ।
तीर्थेश पदको स्वरुचिधर, अव्यय अमर शिवफल लहा।।

यातै उचित ही है जु तुम पद, फलनमो पूजा करू ।
इक सहस अरु चौवीस गुण गण भावयुत मन मे धरू।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फल० ।।

अष्टाग मूल सु विधि हरो, निज अष्ट गुण पायो मही ।
अष्टार्द्ध गति ससार मेटि सु अचल ह्वै अष्टम मही।।
यातै उचित ही है जु तुमपद अर्घसो पूजा करू।। इकसहस०।।

ॐ ह्रीं चतुर्विशत्यधिकैकसहस्रगुणसयुक्ताय श्रीसिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य० ।।९।।

निर्मल सलिल शुभ वास चदन, धवल अक्षत युत अनी ।
शुभपुष्प मधुकर नित रमे, चरु प्रचुर स्वाद सुविधि घनी।।
वर दीपमाल उजाल धूपायन रसायन फल भले ।
करि अर्घ सिद्ध समूह पूजत, कर्मदल सब दलमले।।
ते क्रमावर्त नशाय युगपत, ज्ञान निर्मल रूप है ।
दुख जन्म टार अपार गुण, सूक्षम सरूप अनूप हैं।।
कर्माष्ट बिन त्रैलोक्य पूज्य, अदूज शिवकमलापती ।
मुनि ध्येय सेय अमेय चहुँ गुण-गेह द्यो हम शुभ मती।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने सर्वसुखप्राप्तये महार्घ्य० ।।

दस सौ चौबीस गुण अर्घ्य

दोहा

इन्द्रिय विषय-कषाय है, अन्तर शत्रु महान ।
तिनको जीतत जिन भये, नमू सिद्ध भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाय नम अर्घ्यं० ।।१।।

रागादिक जीते सु जिन, तिनमे तुम परधान ।
ताते नाम जिनेन्द्र है, नमू सदा धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्राय नम अर्घ्यं० ।।२।।

रागादिक लवलेश बिन, शुद्ध निरजन देव ।
पूरण जिनपद तुम विषैं, राजत हो स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपूर्णताय नम अर्घ्यं० ।।३।।

बाह्य शत्रु उपचरित को, जीतत जिन नही होय ।
अतर शत्रु प्रबल जये, उत्तम जिन है सोय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।४।।

इन्द्रादिक पूजत चरन, सेवत है तिहुँ काल ।
गणधरादि श्रुत केवली, जिन आज्ञा निज भाल।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रष्ठय-नम· अर्घ्यं० ।।५।।

गणधरादि सत-पुरुष जे, वीतराग निरग्रथ ।
तुमको सेवत जिन भये, साधत है शिवपथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिपाय नम अर्घ्यं० ।।६।।

एक देश जिन सर्व मुनि, सर्व भाव अरहत ।
द्रव्यभाव सर्वातमा, नमू सिद्ध भगवत।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधीशाय नम. अर्घ्यं० ।।७।।

गणधरादि सेवत चरण, शुद्धातम लवलाय ।
तीन लोक स्वामी भये, नमू सिद्ध अधिकाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनस्वामिने नम अर्घ्यं० ।।८।।

नमत सुरासर जिन चरन, तीन काल धरि ध्यान ।
सिद्ध जिनेश्वर मै नमू, पाऊ शिवसुख थान।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नम. अर्घ्यं० ।।९।।

तीन लोक तारण तरण, तीन लोक विख्यात ।
सिद्ध महा जिननाथ हैं, सेवत पाप नशात।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिननाथाय नम अर्घ्यं० ।।१०।।

एकदेश श्रावक तथा, सर्वदेश मुनिराज ।
नित-प्रति रक्षक हो महा, सिद्ध सु पुण्यसमाज।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपतये नम अर्घ्यं० ।।११।।

त्रिभुवन शिखा-शिरोमणी, राजत सिद्ध अनत ।
शिवमारग परसिद्ध कर, नमत भवोदधि अत।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवे नम अर्घ्यं० ।।१२।।

जिन आज्ञा त्रिभुवन विषैं, वरते सदा अखड ।
मिथ्यामति दुरपक्षको, देत नीतिसो दड।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नम अर्घ्यं० ।।१३।।

तीन लोक परिपूर्ण है, लोकालोक प्रकाश ।
राजत है विस्तीर्ण जिन, नमू हरो भववास।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनविभवे नम अर्घ्यं० ।।१४।।

आत्मज्ञ जिन नमत है, शुद्धातम के हेत ।
स्वामी हो तिहुं लोक के नमू वसे शिवखेत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनभर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।१५।।

मिथ्यामति को नाश करि, तत्त्वज्ञान परकाम ।
दीप्ति रूप रवि सम सदा, करो सदा उरवास।।

ॐ ह्रीं अर्हं तत्वप्रकाशाय नम अर्घ्यं० ।।१६।।

कर्मशत्रु जीते सु जिन, तिनके स्वामी सार ।
धर्ममार्ग प्रकटात है शुद्ध सुलभ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनकर्मजिताय नम अर्घ्यं० ।।१७।।

अमृत सम निज दृष्टिसो, यथाख्यात आचार ।
तिन सबके स्वामी नमू, पायो शिवपद सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नम अर्घ्यं० ।।१८।।

समोसरण आदिक विभव, तिसके तुम परधान ।
शुद्धातम शिवपद लहो, नमू कम की हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नम अर्घ्यं० ।।१९।।

सूरज सम तिहुं लोक मे, मिथ्या तिमिर निवार ।
सहज दिखायो मोक्षमग, मैं वदू हित धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिननेत्र नम अर्घ्यं० ।।२०।।

जन्म मरण दुख जीतिकर, जिन 'जिन नाम धराय ।
नमू सिद्ध परमात्मा, भवदुख सहज नसाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनजेत्रे नम अर्घ्यं० ।।२१।।

अचल अबाधित पद लहो, निज स्वभाव दृढ भाय ।
नमू सिद्ध कर-जोरिकर भाव सहित उर लाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपरिवृढ़ायनम अर्घ्यं० ।।२२।।

सर्व-व्यापि परमात्मा, सर्व पूज्य विख्यात ।
श्रीजिनदेव नमू त्रिविध, सर्व पाप नशि जात।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाय नम अर्घ्यं० ।।२३।।

श्रीजिनेश जिनराज हो, निजस्वभाव अनिवार ।
पर-निमित्त विनशी सकल वंदू, शिवसुखकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं० ।।२४।।

परम धर्म दातार हो, तीन लोक सुखदाय ।
तीन लोक पालक महा, मैं वंदू शिवराय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनपालकाय नमः अर्घ्यं० ।।२५।।

गणधरादि सेवत महा तुम आज्ञा शिर धार ।
अधिक अधिक जिनपद लहो, नमूं करो भवपार।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिराजाय नमः अर्घ्यं० ।।२६।।

परम धर्म उपदेश करि, प्रकटायो शिवराय ।
श्रीजिन निज आनंद में, वर्ते वंदू ताय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनशासनेशाय नमः अर्घ्यं० ।।२७।।

परम पद पावन निपुण, सब देवन के देव ।
मैं पूजूं नित भावसों पाऊं शिव स्वयमेव।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनदेवाधिदेवाय नमः अर्घ्यं० ।।२८।।

तीन लोक विख्यात है तारण-तरण जिहाज ।
तुम सम देव न और है, तुम सबके शिरताज।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाद्वितीयाय नमः अर्घ्यं० ।।२९।।

तीन लोक पूजत चरन, भाव सहित शिर नाय ।
इन्द्रादिक थुति करि थके, मैं वंदू तिस पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाधिनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।३०।।

तुम समान नहीं देव है, भविजन तारन हेत ।
चरणाम्बुज सेवत सुभग, पावै शिवसुख खेत।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनेन्द्रबिंबधाय नमः अर्घ्यं० ।।३१।।

भवाताप करि तप्त हैं, तिनकी विपति निवार ।
धर्मामृत कर पोखियो, वरते शशि उनहार।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनचन्द्राय नमः अर्घ्यं० ।।३२।।

मिथ्यातम करि अन्ध थे, तीन लोकके जीव ।
तत्त्व मार्ग प्रकटाइयो, रवि सम दीप्त अतीव।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनादित्याय नमः. अर्घ्यं ।।३३।।

बिन कारण तारण तरण, दीप्त रूप भगवान ।
इन्द्रादिक पूजत चरण, करत कर्मकी हान।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तरूपाय नम अर्घ्यं० ।।३४।।

जैसे कुंजर चक्रके, जाने दलको साज ।
चार संघ नायक प्रभु, वंदू सिद्ध समाज।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनकुञ्जराय नम अर्घ्यं० ।।३५।।

दीप्त रूप तिहुँ लोकमे, ह प्रचण्ड परताप ।
भक्तनको नित देत हैं, भोग शिवसुख आप।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनार्काय नम अर्घ्यं० ।।३६।।

रत्नत्रय मग साध कर, सिद्ध भये भगवान ।
पूरण निजसुख धरत ह, निजमे निज परिणाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनधौर्याय नम अर्घ्यं० ।।३७।।

तीन लोकके नाथ हो, ज्यू तारागण सूय ।
शिवसुख पायो परमपद, वंदो श्रीजिन धूर्य।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनधूर्याय नम अर्घ्यं० ।।३८।।

पराधीन बिन परमपद, तुम बिन लह न आर ।
उत्तमातमा मे नमू, तीन लोक शिरमौर।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।३९।।

जहा न दुखको लेश है, तहाँ न परसो कार ।
तुम बिन कहूँ न श्रेष्ठता, तीन लोक दुखटार।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकदुःखनिवारकाय नम अर्घ्यं० ।।४०।।

पूण रूप निज लक्ष्मी, पाइ श्री जिनराज ।
परमश्रेय परमातमा, वदू शिवसुख साज।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनवराय नम अर्घ्यं० ।।४१।।

निरभय हो निर आश्रयी, निःसगी निबध ।
निजसाधन साधक सुगुन, परसो नहि सबध।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिननिःसगाय नम अर्घ्यं० ।।४२।।

अन्तराय विधि नाशके, निजानन्द भयो प्राप्त ।
'सन्त' नमैं कर जोरयुत, भव-दुख करो समाप्त।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोद्वाहायन नम अर्घ्यं० ।।४३।।

शिवमारग मे धरत हो, जग मारगते काढ़ ।
धर्मधुरन्धर मैं नमू, पाऊ भव वन बाढ़।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनवृषभाय नमः अर्घ्यं० ।।४४।।

धर्मनाथ धर्मेश हो, धर्म तीर्थ करतार ।
रहो सुथिर निजधर्म मे, मैं बदू सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनधर्माय नम अर्घ्यं० ।।४५।।

जगत जीव विधि धूलि सो, लिप्त न लहैं प्रभाव ।
रत्नराशि सम तुम दिपो, निर्मल सहज सुभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनरत्नाय नम अर्घ्यं० ।।४६।।

तीन लोकके शिखर पर, राजत हो विख्यात ।
तुम सम और न जगतमे, बडा कोई दिखलात।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनोरसाय नम अर्घ्यं० ।।४७।।

इन्द्रिय मन व्यापार बहु, मोह शत्रु को जीत ।
लहो जिनेश्वर सिद्धपद, तीन लोक के मीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनेशाय नम अर्घ्यं० ।।४८।।

चारि घातिया कर्मको, नाश कियो जिनराय ।
घाति-अघाति विनाश जिन, अग्र भये सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्राय नम अर्घ्यं० ।।४९।।

निज पौरुषकर साधियो, निज पुरुषारथ सार ।
अन्य सहाय नही चहैं, निज सुवीर्य अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनशार्दूलाय नम अर्घ्यं० ।।५०।।

इन्द्रादिक नित ध्यावते, तुम सम और न कोय ।
तीन लोक चूडामणि, नमू, सिद्धसुख होय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनपुगवाय नम अर्घ्यं० ।।५१।।

निजानन्द पदको लहो, अविरोधी मल नास ।
समकित बिन तिहुँलोकमे, और नही सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रवेकाय नम अर्घ्यं० ।।५२।।

जगत शत्रु को जीतिके, कल्पित जिन कहलाय ।
मोहशत्रु जीते सु जिन, उत्तम सिद्ध सुखाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनहसाय नम अर्घ्यं० ।।५३।।

द्रव्य-भाव दोनो नही, उत्तम शिवसुख लीन ।
मनवचतन करि मै नमू, निज समभाव जु कीन।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनोत्तमसुखधारकाय नम अर्घ्यं० ।।५४।।

चार सघ नायक प्रभू, शिवमग सुलभ कराय ।
तारण तरण जहान के, मैं बदू शिवराय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिननायकाय नम अर्घ्यं० ।।५५।।

स्वयबुद्ध शिवमार्ग मे, आप चले अनिवार ।
भविजन अग्रेश्वर भये बदू भक्ति विचार।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनाग्रिमाय नम अर्घ्यं० ।।५६।।

शिवमारगके चिह्न हो, सुखसागरकी पाल ।
शिवपुरके तुम हो धनी, धर्म नगर प्रतिपाल।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनग्रामण्यै नम अर्घ्यं० ।।५७।।

तुम सम और न जगत मे, उत्तम श्रेष्ठ कहाय ।
आप तिरे पर तारते, बदू तिनके पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनसत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।५८।।

स्व-पर कल्याणक हो प्रभू, पचकल्याणक ईश ।
श्रीपति शिव-शकर नमू, चरणाम्बुज धरि शीश।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनप्रभवाय नम अर्घ्यं० ।।५९।।

मोह महाबल दलमलो, विजय लक्ष्मीनाथ ।
परमज्योति शिवपद लहो, चरण नमू धरि माथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६०।।

चहुँ गति दुख विनाशिया, पूरा निज पुरुषार्थ ।
नमू सिद्ध कर-जोरिकैं, पाऊ मैं सर्वार्थ।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनचतुर्गतिदुखान्तकाय नम अर्घ्यं० ।।६१।।

जीते कर्म निकृष्ट को, श्रेष्ठ भये जिनदेव ।
तुम सम और न जगत मे, बदू मैं तिन भेव।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनश्रेष्ठाय नम अर्घ्यं० ।।६२।।

आप मोक्षमग साधियो, औरन सुलभ कराय ।
आदि पुरुष तुम जगत मे, धर्म रीत वरताय।।
ॐ ह्रीं अर्हं जिनज्येष्ठाय नम अर्घ्यं० ।।६३।।

रागादिक मल बिन दिपो, शुद्ध सुवर्ण समान ।
शुद्ध निरजन पद लियो, नमू चरण धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरजनाय नम अर्घ्यं० ।।७४।।

द्रव्य-भाव दो विधि करम, नाशि भये शिवराय ।
बन्दू मनवचकाय करि, भविजन को सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविनाशकाय नम अर्घ्यं० ।।७५।।

ज्ञानावर्णी आदि ले, चार घतिया कर्म ।
तिनको अत खिपाइके, लियो मोक्षपद पर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं घातिकर्मान्तकाय नम अर्घ्यं० ।।७६।।

ज्ञानावरण पटल बिन, ज्ञान दीप्त परकाश ।
शुद्ध सिद्ध परमातमा, बंदित भवदुख नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिनदीप्तये नम अर्घ्यं० ।।७७।।

कर्म रुलावे आत्मा, रागदिक उपजाय ।
तिनको मर्म विनाशकैं, सिद्ध भये सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्ममर्मभिदे नम अर्घ्यं० ।।७८।।

पाप कलाप न लेश है, शुद्धाशुद्ध विख्यात ।
मुनि मन मोहन रूप है नमू जोरि जुग हाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनुवयाय नम अर्घ्यं० ।।७९।।

राग नही थुतिकारसो, निंदकसो नही द्वेष ।
शम सुखिया आनन्दघन, बदू सिद्ध हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं वीतरागाय नम अर्घ्यं० ।।८०।।

क्षुधा वेदनी नाशकार, स्व-सुख भुजनहार ।
निजानन्द सतुष्ट है, बदू भाव विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अक्षुधाय नम अर्घ्यं० ।।८१।।

एक दृष्टि सबको लखे, इष्ट-अनिष्ट न कोय ।
द्वेष अश व्यापै नही, सिद्ध कहावत सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वेषाय नम अर्घ्यं० ।।८२।।

भवसागर के तीर है, शिवपुरके है राहि ।
मिथ्यातम-हर सूर्य है, मैं बदू हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मोहाय नम अर्घ्यं० ।।८३।।

भ्रम बिन, ज्ञान प्रकाश मे, भासैं जीव-अजीव ।
सशाय बिन निश्चल सुखी, बदू सिद्ध सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं नि·सशयाय नम अर्घ्यं० ।।९४।।

तुम पूरण परमातमा, सदा रहो इक सार ।
जरा न व्यापै तुम विषै, नमू सिद्ध अविकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जराय नम अर्घ्यं० ।।९५।।

तुम पूरण परमातमा, अन्त कभी नही होय ।
मरण रहित बदू सदा, देउ अमर पद सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमराय नम अर्घ्यं० ।।९६।।

निजानन्द के भोगमे, कभी न आरत आय ।
याते तुम अरतीत हो, बदू सिद्ध सुहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अरत्यतीताय नम अर्घ्यं० ।।९७।।

होत नही सोच न कभू, ज्ञान धरैं परतक्ष ।
नमू सिद्ध परमातमा, पाऊ ज्ञान अलक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं निश्चिताय नम अर्घ्यं० ।।९८।।

जानत हैं सब ज्ञेय को, पर ज्ञेयनतै भिन्न ।
याते निर्विषयी कहे, लेश न भोगै अन्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विषयाय नम अर्घ्यं०।।९९।।

अहकार आदिक त्रिषट्, तुम पद निवसै नाहिं ।
सिद्ध भये परमात्मा, मै बन्दू हूँ ताहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिषष्ठिजिते नम अर्घ्यं० ।।१००।।

जेते गुण परजाय है, द्रव्य अनन्त सुकाल ।
तिनको तुम जानो प्रभु, बदू मैं नमि भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।१०१।।

ज्ञान-आरसी तुम विषै, झलके ज्ञेय अनन्त ।
सिद्ध भये तिनको नमे, तीनो काल सु सत ।।

ॐ ह्रीं अर्ह सर्वविदे नम अर्घ्यं० ।।१०२।।

चक्षु अचक्षु न भेद है, समदर्शी भगवान ।
नमू सिद्ध परमातमा, तीनो योग प्रधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वदर्शिने नम अर्घ्यं० ।।१०३।।

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं० ॥११४॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आनन्दाय नमः अर्घ्यं० ॥११५॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं० ॥११६॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नमः अर्घ्यं० ॥११७॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं० ॥११८॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं० ॥११९॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] नमः अर्घ्यं० ॥१२०॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं अर्हं [illegible] ॥१२१॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं [illegible] ॥१२२॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

ॐ ह्रीं [illegible] ॥[illegible]॥

आतमको गुण ज्ञान है, यही यथारथ होय ।
ज्ञानानन्द ऐश्वर्यता, उदय भयो है सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्ममहोदयाय नम अर्घ्यं० ।।१३४।।

दर्श ज्ञान सुख वीर्यको, पाय परम पद होय ।
सो परमातम तुम भये, नमू जोर कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नम अर्घ्यं० ।।१३५।।

मोहकर्म के नाशते शान्ति भये सुखदेन ।
क्षोभरहित प्रशान्त हो, शात नमू सुख लेन।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशान्तात्मने नम अर्घ्यं० ।।१३६।।

पूरण पद तुम पाइयो, यातै परे न कोय ।
तुम समान नही और है, बदू हूँ पद दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नम अर्घ्यं० ।।१३७।।

पुद्गल कृत तन छारकै निज आतममे वास ।
स्व-प्रदेश गृहके विषै, नित ही करत विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मनिकेतनाय नम अर्घ्यं० ।।१३८।।

औरन को नित देत है, शिवसुख भोगै आप ।
परम इष्ट तम हो सदा, निजसम करत मिलाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेष्ठिने नम अर्घ्यं० ।।१३९।।

मोक्ष-लक्ष्मी नाथ हो, भक्तन प्रति नित देत ।
महा इष्ट कहलात हो, बदू शिवसुख हेत ।

ॐ ह्रीं अर्हं महितात्मने नम अर्घ्यं० ।।१४०।।

रागादिक मल नाशिकै, श्रेष्ठ भये जगमांहि ।
सो उपासना करणको, तुम सम कोई नाहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठात्मने नम अर्घ्यं० ।।१४१।।

परमे ममत विनाशकै, स्वै आतम थिर धार ।
पर-विकल्प सकल्प बिन, तिष्ठो सुख-आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वात्मनिष्ठिताय नम अर्घ्यं० ।।१४२।।

स्वै-आतममे मग्न है, स्वै-आतम लवलीन ।
परमे भ्रमण करैं नही, 'सन्त' चरण शिर दीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मनिष्ठाय नम अर्घ्यं० ।।१४३।।

ज्ञान-दर्श आवर्ण विन दीपो नतानत ।
सकल ज्ञेय प्रतिभास है, तुम्है नमै नित 'सत'।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतदीप्तये नम अर्घ्यं० ।।१५४।।

इक इक गुण प्रतिछेद को, पार न पायो जाय ।
सो गुण रास अनत हैं, वदू तिनके पाँय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तात्मने नम अर्घ्यं० ।।१५५।।

अहमिद्रन की शक्ति जो, करै अनती नास ।
सो तुम शक्ति अनत गुण, करै अनत प्रकाश।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतशक्तये नम अर्घ्यं० ।।१५६।।

क्षायक दर्शन जोति मे, निरावरण परकास ।
सो अनत दृग तुम धरौ, नमैं चरण नित दास।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतदर्शये नम अर्घ्यं० ।।१५७।।

जाकी शक्ति अपार है, हेत-अहेत प्रसिद्ध ।
गणधरादि जानत नही, मैं वदू नित सिद्ध।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतशक्तये नम अर्घ्यं० ।।१५८।।

चेतन शक्ति अनत है, निरावरण जो होय ।
सो तुम पायो सहज ही, कर्म पुजको खोय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतचिदेशाय नम अर्घ्यं० ।।१५९।।

जो सुख है निज आश्रये सो सुख परमे नाँहि ।
निजानन्द रस लीन है, मैं वदू हूँ ताँहि।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतसुदे नम अर्घ्यं० ।।१६०।।

जाकैं कर्म लिपै न फिर, दिपै सदा निरधार ।
सदा प्रकाशजु सहित है वदू योग सम्हार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सदाप्रकाशाय नम अर्घ्यं० ।।१६१।।

निजानन्द के माँहि हैं, सब अर्थ परसिद्ध ।
सो तुम पायो सहज ही, नमत मिले नवनिद्ध।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वार्थसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।१६२।।

अति सूक्षम जे अर्थ हैं, काय अकाय कहाय ।
साक्षात् सबको लखो वन्दू तिनके पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं साक्षात्कारिणे नम अर्घ्यं० ।।१६३।।

सकल-गुणनमय द्रव्य हो, शुद्ध सुभाव प्रकाश ।
तुम समान नही दूसरो, वन्दत पूरे आस।।
ॐ ह्रीं अर्हं समग्रर्द्धये नम. अर्घ्यं० ।।१६४।।

सर्व कर्मको छीन करि, जरी जेवरी सार ।
सो तुम धूलि उडाइयो, बदू भक्ति विचार।।
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मक्षीणाय नम अर्घ्यं० ।।१६५।।

चहुँ गति जगत कहात है, ताको करि विध्वश ।
अमर अचल शिवपुर वसैं, भर्म न राखो अश।।
ॐ ह्रीं अर्हं जगद्विध्वंसिने नम अर्घ्यं० ।।१६६।।

इन्द्री मन व्यापार मे, जाको नहिं अधिकार ।
सो अलक्ष आतम प्रभू, होउ सुमति दातार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अलक्षात्मने नम अर्घ्यं० ।।१६७।।

नही चलाचल अचल हैं, नही भ्रमण थिर धार ।
सो शिवपुर मे वसत हैं, बदू भक्ति विचार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अचलस्थानाय नम अर्घ्यं० ।।१६८।।

पर कृत निमित विगाड हैं, सोई दुविधा जान ।
सो तुममें नही लेश है, निराबाध परणाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नम अर्घ्यं० ।।१६९।।

जैसे हो तुम आदिमे, सोई हो तुम अन्त ।
एक भांति निवसो सदा, बदत है नित 'सत'।।
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतर्क्याय नम अर्घ्यं० ।।१७०।।

धर्मनाथ जगदीश हो, सुर मुनि मानैं आन ।
मिथ्यामत नही चलत है, तुम आगे परमाण।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रिणे नम अर्घ्यं० ।।१७१।।

ज्ञान शक्ति उत्कृष्ट है, धर्म सर्व तिस माहि ।
श्रेष्ठ ज्ञानतम पुन्ज हो, परनिमित्त कछु नाहि।।
ॐ ह्रीं अर्हं विदांवराय नम अर्घ्यं० ।।१७२।।

निज अभाव से मुक्त हो, कहैं कुवादी लोग ।
भूतात्मा सो मुक्त हैं, सो तुम पायो जोग।।
ॐ ह्रीं अर्हं भूतात्मने नम अर्घ्यं० ।।१७३।।

सहज सुभाव प्रकाशियो, परनिमित्त कछु नाहिं ।
सो तुम पायो सुलभते, स्वसुभाव के माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं सहजज्योतिषे नम अर्घ्यं० ।।१७४।।

विश्व नाम तिहुँ लोकमे, तिसमे करत प्रकाश ।
विश्वज्योति कहलात है, नमत मोहतम नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्योतिषे नम अर्घ्यं० ।।१७५।।

फरश आदि मन इन्द्रिया, द्वार ज्ञान कछु नाहिं ।
याते अतिइन्द्रिय कहो, जिन-सिद्धात के माहिं।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियाय नम अर्घ्यं० ।।१७६।।

एक मान असहाय हो, शुद्ध बुद्ध निर अश ।
केवल तुमको धर्म है, नमे तुम्हे नित 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलाय नम अर्घ्यं० ।।१७७।।

लौकिक जन या लोकमे, तुम सारू गुण नाहिं ।
केवल तुमही मे बसैं, मै बदू हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलालोकाय नम अर्घ्यं० ।।१७८।।

लोक अनन्त कहो सही, तातैं नन्तानन्त ।
है अलोक अवलोकियो, तुम्हैं नमे नित 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकायलोकाय नम अर्घ्यं० ।।१७९।।

ज्ञान द्वार निज शक्ति हो, फैलो लोकालोक ।
भिन्न-भिन्न सब जानियो, नमू चरण दे धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं विवृताय नम अर्घ्यं० ।।१८०।।

बिन सहाय निज शक्ति हो, प्रकटो आपोआप ।
स्वयबुद्ध स्वै-सिद्ध हो, नमत नसै सब पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलावलोकाय नम अर्घ्यं० ।।१८१।।

सूक्षम सुभग सुभावते, मन इन्द्रिय नहिं ज्ञात ।
वचन अगोचर गुण धरैं, नमू चरन दिन-रात।।

ॐ ह्रीं अर्हं अव्यक्ताय नम अर्घ्यं० ।।१८२।।

कर्म उदय दुख भोगवैं, सर्व जीव ससार ।
तिन सबको तुमही शरण, देहो सुक्ख अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशरणाय नम अर्घ्यं० ।।१८३।।

चितवनमे आवै नही, पा न पावे कोय ।
महा विभवके हो धनी, नमू जोर कर दोय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अचिंत्यविभवाय नम अर्घ्यं० ।।१८४।।

छहो कायके वासको, विश्व कहै सब लोक ।
तिनके थभनहार हो, राज काज के जोग।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभृते नम अर्घ्यं० ।।१८५।।

घट-घट मे राजो सदा, ज्ञान द्वार सब ठौर ।
विश्व रूप जीवात्म हो, तीन लोक सिरमौर।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वरूपात्मने नम अर्घ्यं० ।।१८६।।

घट-घट मे नित-व्याप्त हो, ज्यो घर दीपक जोति ।
विश्वनाथ तुम नाम है, पूजत शिवसुख होत।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वात्मने नम अर्घ्यं० ।।१८७।।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुम पद पूजै आन ।
याते मुखिया हो सही, मे पूजू धरि ध्यान।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वतोमुखाय नम. अर्घ्यं० ।।१८८।।

ज्ञान द्वार सब जगत मे, व्यापि रहे भगवान ।
विश्व व्यापि मुनि कहत हैं, ज्यू नभ मे शशि भान।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वव्यापिने नम अर्घ्यं० ।।१८९।।

निरावरण निरलेप हैं, तेज रूप विख्यात ।
ज्ञान कला पूरण धरैं, मैं बदू दिन रात।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयजोतिषे नम अर्घ्यं० ।।१९०।।

चितवन मे आवैं नही, धारैं सुगुण अपार ।
मन वच काय नमू सदा, मिटै सकल ससार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अचित्यात्मने नम अर्घ्यं० ।।१९१।।

नय प्रमाणको गमन नही, स्वय ज्योति परकाश ।
अद्भुत गुण पर्याय में, सुखसू करै विलास।।
ॐ ह्रीं अर्हं अमितप्रभावाय नम अर्घ्यं० ।।१९२।।

मती आदि क्रमवर्त्त बिन, केवल लक्ष्मीनाथ ।
महाबोध तुम नाम है, नमू पाय धरि माथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाबोधाय नम अर्घ्यं० ।।१९३।।

कर्मयोगते जगत मे, जीव शक्ति को नाश ।
स्वय वीर्य अद्भुत धर, नमू चरण सुखरास ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महावीर्याय नम अर्घ्यं० ।।१९४।।

क्षायक लब्धि महान हे, ताको लाभ लहाय ।
महालाभ यातें कहे, वदू तिनके पाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महालाभाय नम अर्घ्यं० ।।१९५।।

ज्ञानावरणादिक पटल, छायो आतम ज्योति ।
ताको नाश भये विमल दीप्त रूप उद्योत ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नम अर्घ्यं० ।।१९६।।

ज्ञानानन्द स्व लक्ष्मी को, भोग वाधाहीन ।
पचम गति मे वास ह, नमू जोग पद लीन ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगसुगतये नम अर्घ्यं० ।।१९७।।

पर निमित्त जामे नही, स्व-आनन्द अपार ।
सोई परमानन्द हे, भोगे निज आधार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नम अर्घ्यं० ।।१९८।।

दर्श ज्ञान सुख भोगते, नेक न वाधा होय ।
अतुल वीर्य तुम धरत हो, मैं वदू हूँ सोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतुलवीर्याय नम अर्घ्यं० ।।१९९।।

शिवस्वरूप आनन्दमय, क्रीडा करत विलास ।
महादेव कहलात हैं, वन्दत रिपुगण नाश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञार्हाय नम अर्घ्यं० ।।२००।।

महाभाग शिवगति लहो, ता सम भान न और ।
सोई भगवत है प्रभू, नमू पदाम्बुज ठौर ।।

ॐ ह्रीं अर्हं भगवते नम अर्घ्यं० ।।२०१।।

तीन लोक के पूज्य हैं, तीन लोक के स्वामि ।
कर्म-शत्रु को छय कियो, तातैं अरहत नाम ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्हते नम अर्घ्यं० ।।२०२।।

सुरनर पूजत चरण युग, द्रव्य अर्थ जुत भाव ।
महा-अर्घ तुम नाम है, पूजत कर्म अभाव ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महार्घ्याय नम अर्घ्यं० ।।२०३।।

अचल शिवालय के विषैं, अमित काल रहैं राज ।
चिरजीवी कहलात हो, बदू शिवसुख काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयायुषे नम अर्घ्यं० ।।२१४।।

मरण रहित शिवपद लसै, काल अनन्तानन्त ।
दीर्घायु तुम नाम है, वन्दत नित प्रति 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं दीर्घायुषे नम अर्घ्यं० ।।२१५।।

सकल तत्व के अर्थ कहि, निराबाध निरशस ।
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, नमत मिटै दुख अश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नम अर्घ्यं० ।।२१६।।

मुनिजन नितप्रति ध्यावतें, पावे निज कल्याण ।
सज्जन जन आराध्य हो, मैं ध्याऊ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सज्जनवल्लभाय नम अर्घ्यं० ।।२१७।।

शिवसुख जाको ध्यावतैं, पावै सन्त मुनीन्द्र ।
परमाराध्य कहात हो, पायो नाम अतीन्द्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमाराध्याय नम अर्घ्यं० ।।२१८।।

पचकल्याण प्रसिद्ध हैं, गर्भ आदि निर्वाण ।
देवन करि पूजित भये, पायो शिव सुख थान।।

ॐ ह्रीं अर्हं पचकल्याणपूजिताय नम अर्घ्यं० ।।२१९।।

देखो लोकालोक को, हस्त रेख की सार ।
इत्यादिक गुण तुम विषैं, दीखै उदय अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं दर्शनविशुद्धिगुणोदयाय नम अर्घ्यं० ।।२२०।।

क्षायक समकित को धरैं, सौधर्मादिक इन्द्र ।
तुम पूजन परभावते, अन्तिम होय जिनेन्द्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुरार्चिताय नम अर्घ्यं० ।।२२१।।

निर्विकल्प शुभ चिन्ह है, वीतराग सो होय ।
सो तुम पायो सहज ही, नमू जोर कर दोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुखदात्मने नम अर्घ्यं० ।।२२२।।

स्वर्ग आदि सुख थान के, हो परकाशन हार ।
दीप्त रूप बलवान है, तुम मारग सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिवौजसे नम अर्घ्यं० ।।२२३।।

गर्भ कल्याणक के विषैं, तुम माता सुखकार ।
पट् कुमारिका सेवती, पावें भवदधि पार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शचीसेवितमातृकाय नम अर्घ्यं० ।।२२४।।

अति उत्तम तुम गर्भ है, भवदुख जन्म निवार ।
रत्नराशि दिवलोक ते, वर्षे मूसलाधार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं रत्नगर्भाय नम अर्घ्यं० ।।२२५।।

सुर शोधन ते गर्भ मे, दर्पण सम आकार ।
यो पवित्र तुम गर्भ है, पावै शिव सुख सार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पूतगर्भाय नम अर्घ्यं० ।।२२६।।

जाके गर्भागमन तें, पहले उतसव ठान ।
दिव्य नारि मगल सहित, पूजत श्री भगवान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भोत्सवसहिताय नम अर्घ्यं० ।।२२७।।

नित-नित आनन्द उर धरैं, सुर सुरीय हरषात ।
मगल साज समाज सब, उपजावैं दिन-रात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं नित्योपचारोपचरिताय नम अर्घ्यं० ।।२२८।।

केवलज्ञान सु लक्षमी, धरत महा विस्तार ।
चरणकमल सुर मुनि जजैं, हम पूजत हितधार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभवे नम अर्घ्यं० ।।२२९।।

तिहुँविध विधि-मल धोयकर, उज्ज्वल निर्मल होय ।
शिव आलय मे वसत हैं, शुद्ध सिद्ध है सोय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निखलाय नम अर्घ्यं० ।।२३०।।

असख्यात परदेश मे, अन्य प्रदेश न होय ।
स्वय स्वभाव स्वजात हैं, मैं प्रणमामी सोय ।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयस्वभावाय नम अर्घ्यं० ।।२३१।।

पूज्य यज्ञ आराधना, जो कुछ भक्ति प्रमाण ।
तुम ही सबके मूल हो, नमत अमगल हान ।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वीयजन्मेन नम अर्घ्यं० ।।२३२।।

सूर्य सुमेरु समान हो, या सुरतरु की ठौर ।
महा पुन्य की राशि हो, सिद्ध नमू कर जोर ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यागाय नम अर्घ्यं० ।।२३३।।

ज्यू सूरज मध्यान्ह मे, दिपै अनत प्रभाव ।
त्यो तुम ज्ञानकला दिपै, मिथ्या तिमिर अभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं शास्वते नम अर्घ्यं० ।।२३४।।

चहुँविधि देवन मे सदा, तुम सम देव न आन ।
निजानद मे केलिकर, पूजत हूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्भुतदेवाय नम अर्घ्यं० ।।२३५।।

विश्व ज्ञान युगपत धरै, ज्यू दर्पण आकार ।
स्वपर प्रकाशक हो सही, नमू भक्ति उरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वज्ञातृसम्भृते नम अर्घ्यं० ।।२३६।।

सत-स्वरूप सत-ज्ञान है, तुम ही पूज्य प्रधान ।
पूजत है नित विश्वजन, देव मान परमान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वदेवाय नम अर्घ्यं० ।।२३७।।

सृष्टि को सुख करत हो, हरत दुक्ख भववास ।
मोक्ष लक्षमी देत हो, जन्म-जरा-मृत नास।।

ॐ ह्रीं अर्हं सृष्टिनिर्वृत्ताय नम अर्घ्यं० ।।२३८।।

इन्द्र सहस लोचन किये, निरखत रूप अपार ।
मोक्ष लहै सो नेमतैं, मैं पूजू मनधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सहस्राक्षदृगुत्सवाय नम अर्घ्यं० ।।२३९।।

सपूरण निज शक्ति के, है परताप अनन्त ।
सो तुम विस्तीरण करो, नमे चरण नित सत।।

ॐ ह्रीं अर्ह सर्वशक्तये नम अर्घ्यं० ।।२४०।।

ऐरावत पर रूढ है, देव नृत्यता माड ।
पूजत है सो भक्ति सो, मेटि भवार्णव हाड।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवैरावतासीनाय नम अर्घ्यं० ।।२४१।।

सुर नर चारण मुनि जजैं, सुलभ गमन आकाश ।
परिपूरण हर्षात है, पूरे मन की आश।।

ॐ ह्रीं अर्हं हर्षाकुलामरखगचारणर्षिमतोत्सवाय नम अर्घ्यं० ।।२४२।।

रक्षक हो षट् काय के, शरणागति प्रतिपाल ।
सर्वव्यापि निज-ज्ञानतै, पूजत होय निहाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नम अर्घ्यं० ।।२४३।।

महा उच्च आसन प्रभू, है सुमेर विख्यात ।
जन्माभिषेक सुरेन्द्र करि, पूजत मन उमगात।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानपीठैतादृसराजे नम अर्घ्यं० ।।२४४।।

जाकरि तरिए तीर्थ सो, मानैं मुनि गणमान्य ।
तुम सम कौन जु श्रेष्ठ है, असत्यार्थ है अन्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसामान्यदुग्दाब्धये नम अर्घ्यं० ।।२४५।।

लोकस्नान गिलानता, मेटै मैल शरीर ।
आतम प्रक्षालित कियो, तुमही ज्ञान सु नीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्नानाम्बूस्वावासवाय नम अर्घ्यं० ।।२४६।।

तारण तरण सुभाव है, तीन लोक विख्यात ।
ज्यू सुगध चम्पाकली, गन्धमई कहलात।।

ॐ ह्रीं अर्हं गन्धपवित्रितत्रिलोकाय नम अर्घ्यं० ।।२४७।।

सूक्ष्म तथा स्थूल मे, ज्ञान करै परवेश ।
जाको तुम जानो नही, खाली रहो न देश।।

ॐ ह्रीं अर्हं वज्रसूचये नम अर्घ्यं० ।।२४८।।

औरन प्रति आनन्द करि, निर्मल शुचि आचार ।
आप पवित्र भये प्रभू, कर्म धूलि को टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिश्रवसे नम अर्घ्यं० ।।२४९।।

कर्मों करि किरतार्थ हो, कृत फल उत्तम पाय ।
कर पर कर राजत प्रभू, बदू हूँ युग पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृतार्थकृतहस्ताय नम अर्घ्यं० ।।२५०।।

दर्शन इन्द्र आघात हैं, इष्ट मान उर मांहि ।
कर्म नाशि शिवपुर बसैं, मैं बदू हूँ ताहि।।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रेष्टाय नम अर्घ्यं० ।।२५१।।

मधवा जाके नृत्य करि, ताके तृप्ति महान ।
सो मैं उनको जजत हूँ, होय कम की हान ।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रनृत्यतृप्तिकाय नम अर्घ्यं० ।।२५२।।

शची इन्द्र अरु काम ये, जिन दामन के दाम ।
निश्चय मनमे नमन कर, नित वंदित पद जास।।

ॐ ह्रीं अर्हं शचीविस्मापिताय नम अर्घ्यं० ।।२५३।।

जिनके सनमुख नृत्य करि, इन्द्र हर्ष उपजाय ।
जन्म सुफल मानैं सदा, हम पर होउ महाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रारब्धानदनृत्याय नम अर्घ्यं०।।२५४।।

धन सुवर्ण ते लोक मे, पूरण इच्छा होय ।
चक्रवर्ती पद पाइये, तुम पूजत हैं सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं रैदपूर्णमनोरथाय नम अर्घ्यं०।।२५५।।

तुम आज्ञा मे है सदा, आप मनोरथ मान ।
इन्द्र सदा सेवन करैं, पाप विनाशक जान ।

ॐ ह्रीं अर्हं आज्ञार्थीन्द्रकृतसेवाय नम अर्घ्यं०।।२५६।।

सब देवन मे श्रेष्ठ हो, सब देवन सिरताज ।
सब देवन के इष्ट हो, वदत सुलभ सुकाज।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवश्रेष्ठाय नम अर्घ्यं०।।२५७।।

तीन लोक मे उच्च हो, तीन लोक परशास ।
सो शिवगति पायो प्रभू, जजत कर्म विध्वस।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवौद्यमानाय नम अर्घ्यं०।।२५८।।

जगत्पूज्य शिवनाथ हो, तुम ही द्रव्य विशिष्ट ।
हित उपदेशक परमगुरु, मुनिजन माने इष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्यशिवनाथाय नम अर्घ्यं०।।२५९।।

मति, श्रुत, अवधि अवर्ण को, नाश कियो स्वयमेव ।
केवल ज्ञान स्वतै लियो, आप स्वयभू देव।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयभुवे नम अर्घ्यं०।।२६०।।

समोसरण अद्भुत महा, और लहै नही कोय ।
धनपति रचो उछाह सो, मैं पूजू हूँ सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं कुवेररचितस्थानाय नम अर्घ्यं०।।२६१।।

जाको अन्त न हो कभी, ज्ञान लक्ष्मी नाथ ।
सोई शिवपुर के धनी, नमू भाव धरि नाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तश्रीजुषे नम अर्घ्यं०।।२६२।।

गणधरादि नित ध्यावते, पावैं शिवपुर वास ।
परम ध्येय तुम नाम है, पूरै मन की आश।।

ॐ ह्रीं अर्हं योगीश्वरार्चिताय नम अर्घ्यं०।।२६३।।

परमब्रह्म का लाभ हो, तुम पद पायो सार ।
त्रिभुवन ज्ञाता हो सही, नय निश्चय-व्यवहार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नम अर्घ्यं० ।।२६४।।

सर्व तत्त्वके आदिमे, ब्रह्म तत्त्व परधान ।
तिसके ज्ञाता हो प्रभू, मै वदू धरि ध्यान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मतत्त्वाय नम अर्घ्यं० ।।२६५।।

द्रव्य भाव द्वै विधि कही, यज्ञ यजनकी रीति ।
सो सब तुमही हेत हैं, रचत नशै भव भीति ।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञपतये नम अर्घ्यं० ।।२६६।।

महादेव शिवनाथ हो, तुमको पूजत लोक ।
मैं पूजू हूँ भाव सौ, मेटो मनको शोक ।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवनाथाय नम अर्घ्यं० ।।२६७।।

कृत्य भये निज भाव मे, सिद्ध भये सब काज ।
पायो निज पुरुषार्थको, वदू सिद्ध समाज ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृत्याय नम अर्घ्यं० ।।२६८।।

यज्ञविधान के अग हो, मुख नामी परधान ।
तुम विन यज्ञ न हो कभी, पूजत हो कल्यान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञागाय नम अर्घ्यं० ।।२६९।।

मरण रोग के हरण से, अमर भये हो आप ।
शरणागत को अमरकर, अमृत हो निष्पाप ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नम अर्घ्यं० ।।२७०।।

पूजन विधि स्थान हो, पूजत शिवसुख होय ।
सुरनर नित पूजन करैं, मिथ्या मतिको खोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं यज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।२७१।।

जो हो सो सामान्य कर, धरत विशेष अनेक ।
वस्तु सुभाव यही कहो, वदू सिद्ध प्रत्येक ।।

ॐ ह्रीं अर्हं वस्तुत्पादकाय नम अर्घ्यं० ।।२७२।।

इन्द्र सदा तुम थुति करें, मनमे भक्ति उपाय ।
सर्वशास्त्र मे तुम थुति, गणधरादि करि गाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्तुतीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।२७३।।

मगन रहो निज तत्त्वमे, द्रव्य भाव विधि नाश ।
जो है सो है विविध विध, नमू अचल अविनाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं भावाय नम अर्घ्यं० ।।२७४।।

तीन लोक सिरताज हैं, इन्द्रादिक करि पूज्य ।
धर्मनाथ प्रतिपाल जग, और नही है दूज्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं महपतये नम अर्घ्यं० ।।२७५।।

महाभाग सरधानते, तुम अनुभव करि जीव ।
सो पुनि सेवत पाप तज, निजसुख लहैं सदीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महायज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।२७६।।

यज्ञ-विधि उपदेशमे, तुम अग्रेश्वर जान ।
यज्ञ रचावनहार तुम, तुम ही हो यजमान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रयाजकाय नम अर्घ्यं० ।।२७७।।

तीन लोकके पूज्य हो, भक्तिभाव उर धार ।
धर्म-अर्थ अरु मोक्षके, दाता तुम हो सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पूज्याय नम अर्घ्यं० ।।२७८।।

दया मोह पर पापते, दूर भये स्वैतत्र ।
ब्रह्मज्ञानमे लय सदा, जपू नाम तुम मत्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं दयापराय नम अर्घ्यं० ।।२७९।।

तुम ही पूजन योग्य हो, तुम ही हो आराध्य ।
महा साधु सुख हेतुते, साधे है निज साध्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूज्यार्हाय नम अर्घ्यं० ।।२८०।।

निज पुरुषारथ सघनको, तुमको अर्चत जक्त ।
मनवांछित दातार हो, शिव सुख पावै भक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगदार्चिताय नम अर्घ्यं० ।।२८१।।

ध्यावत है नितप्रति तुम्हैं, देव चार परकार ।
तुम देवनके देव हो, नमू भक्ति उर धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवाधिदेवाय नम अर्घ्यं० ।।२८२।।

इन्द्र समान न भक्त हैं, तुम समान नही देव ।
ध्यावत है नित भावसो, मोक्ष लहैं स्वयमेव।।

ॐ ह्रीं अर्हं शक्रार्च्चिताय नम अर्घ्यं० ।।२८३।।

तुम देवन के देव हो, सदा पूजने योग्य ।
जे पूजत हैं भावसो, भोगैं शिवसुख भोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवदेवाय नम अर्घ्यं० ।।२८४।।

तीन लोक सिरताज हो, तुम से बडा न कोय ।
सुरनर पशु खग ध्यावते, दुविधा मन की खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्गुरवे नम अर्घ्यं० ।।२८५।।

जो हो सो ही तुम सही, नही समझमे आय ।
सुरनर मुनि सब ध्यावते, तुम वाणीको पाय ।

ॐ ह्रीं अर्हं देवसघाचार्याय नम अर्घ्यं० ।।२८६।।

ज्ञानानन्द स्वलक्ष्मी, ताके हो भरतार ।
स्वसुगध वासित रहो, कमल गधकी सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनन्दाय नम अर्घ्यं० ।।२८७।।

सब कुवादि वादी हते, वज्र शैल उनहार ।
विजयध्वजा फहरात हैं, वदू भक्ति विचार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जयध्वजाय नम अर्घ्यं० ।।२८८।।

दशो दिशा परकाश है, तिनकी ज्योति अमद ।
भविजन कुमुद विकास हो, वदू पूरणचद।।

ॐ ह्रीं अर्हं भामण्डलिने नम अर्घ्यं० ।।२८९।।

चमरनि करि भक्ति करैं, देव चार परकार ।
यह विभूति तुम ही, विषैं, वदू पाप निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतु षटीचामराय नम अर्घ्यं० ।।२९०।।

देव दुदुभी शब्द करि, सदा करैं जयकार ।
तथा आप परसिद्ध हो, ढोल शब्द उनहार।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवदुदुभिये नम अर्घ्यं० ।।२९१।।

तुम वाणी सब मनन कर, समझत है इकसार ।
अक्षरार्थ नही भ्रम पडे, सशय मोह निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं वाङ्स्पष्टाय नम अर्घ्यं० ।।२९२।।

धनपति रचि तुम आसन, महा प्रभूता जान ।
तथा स्व-आसन पाइयो, अचल रहो शिवथान।।

ॐ ह्रीं अर्हं लब्धासनाय नम अर्घ्यं० ।।२९३।।

तीन लोकके नाथ हो, तीन छत्र विख्यात ।
भव्य-जीव तुम छाहमे, सदा स्व-आनद पात ।।

ॐ ह्रीं अर्हं छत्रत्रयाय नम अर्घ्यं० ।।२९४।।

पुष्प वृष्टि सुर करत हैं, तीनो काल मझार ।
तुम सुगध दशदिश रमी, भविजन भ्रमर निहार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पवृष्टये नम अर्घ्यं० ।।२९५।।

देवन रचित अशोक है, वृक्ष महा रमणीक ।
समोसरण शोभा प्रभु, शोक निवारण ठीक ।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्याशोकाय नम अर्घ्यं० ।।२९६।।

मानस्तम्भ निहारके कुमतिन मान गलाय ।
समोसरण प्रभुता कहै, नमू भक्ति उर लाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मानस्थम्भाय नम अर्घ्यं० ।।२९७।।

सुरदेवी सगीत कर, गावैं शुभ गुण गान ।
भक्ति भाव उरमे जगे, बदत श्री भगवान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सगीतार्हाय नम अर्घ्यं० ।।२९८।।

मगल सूचक चिह्न हैं, कहे अष्ट परकार ।
तुम समीप राजत सदा, नमू अमगल टार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टमगलाय नम अर्घ्यं० ।।२९९।।

भविजन तरिये तीर्थ सो, तुम हो श्रीभगवान ।
कोई न भगे आन जिन, तीर्थचक्र सो जान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थचक्रवर्तिने नम अर्घ्यं० ।।३००।।

सम्यग्दर्शन धरत हो, निश्चै परमवगाढ़ ।
सशय आदिक मेटिके, नासो सकल विगाढ ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुदर्शनाय नम अर्घ्यं० ।।३०१।।

कर्त्ता हो शिव काजके, ब्रह्मा जगकी रीति ।
वर्णाश्रम को थापके, प्रकटायी शुभ नीति ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।३०२।।

सत्य धर्म प्रतिपालके, पोषत हो ससार ।
यदि श्रावक दो धर्मके, भये नाथ सुखकार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थभर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।३०३।।

धर्मतीर्थ मुनिराज हैं, तिनके हो तुम स्वामि ।
धर्म नाथ तुम जानके, नितप्रति करू प्रणाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्म तीर्येशाय नम अर्घ्यं० ।।३०४।।

लोक तीर्थ मे गिनत है, धर्मतीर्थ परधान ।
सो तुम राजत हो सदा, मैं बन्दू धरि ध्यान।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकराय नम अर्घ्यं० ।।३०५।।

तुम बिन धर्म न हो कभी, ढूढो सकल जहान ।
दश-लक्षण स्वधर्मके, तीरथ हो परधान।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थयुवाय नम अर्घ्यं० ।।३०६।।

धर्म तीर्थ करतार हो, श्रावक या मुनिराज ।
दोनो विधि उत्तम कहो, स्वर्ग मोक्ष के काज।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थंकराय नम अर्घ्यं० ।।३०७।।

तुमसे धर्म चले सदा, तुम्ही धर्म के मूल ।
सुरनर मुनि पूजैं सदा, छिर्दहि कर्म के शूल।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थप्रवत्तकाय नम अर्घ्यं० ।।३०८।।

धर्मनाथ जगमे प्रगट, तारण तरण जिहाज ।
तीन लोक अधिपति कहो, बन्दू सुख के काज।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थविधसे नम अर्घ्यं० ।।३०९।।

श्रावक या मुनि धर्मके, हो दिखलावनहार ।
अन्य लिंग नही धर्मके, बुधजन लखो विचार।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थविधायकाय नम अर्घ्यं०।।३१०।।

स्वर्ग मोक्ष दातार हो, तुम्ही मार्ग सुखदान ।
अन्य कुभेपिनमे नही, धर्म यथारथ ज्ञान।।
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यतीर्थकराय नम अर्घ्यं० ।।३११।।

सेवन योग्य सु जगतमे, तुम्ही तीर्थ हो सार ।
सुरनर मुनि सेवन करैं, मैं बन्दू सुखकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थसेव्याय नम अर्घ्यं० ।।३१२।।

भवि समुद्र भवसे तिरैं, सो तुम तीर्थ कहाय ।
हो तारण तिहुं लोकमे, सेवत हूँ तुम पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतारकाय नम अर्घ्यं० ।।३१३।।

सर्व अर्थ परकाश करि निर इच्छा तुम बैन ।
धर्म सुमार्ग प्रवर्तको तुम शासन हो ऐन ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवाक्याधिपाय नम अर्घ्यं० ॥३१४॥

धर्म मार्ग परगट करै सो शासन कहलाय ।
सो उपदेशक आप हो निज संकेत कहाय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यशासनाय नम अर्घ्यं० ॥३१५॥

अतिशय करि सबतैं हौं ज्ञानावरण विनाश ।
तेजरूप अति सुन्दर हो शिवसुख करन प्रकाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिशासनाय नम अर्घ्यं० ॥३१६॥

कहैं कथंचित धर्मको स्यात् वचन सुखकार ।
सो प्रमाणतैं साधियो नय निश्चय-व्यवहार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादिने नम अर्घ्यं० ॥३१७॥

निर अक्षर वाणी खिरै दिव्य मेघ की गर्ज ।
अक्षरार्थ हो परिणवै सुन भव्यन सब अर्ज ॥
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यध्वनये नम अर्घ्यं० ॥३१८॥

नय प्रमाण नहीं हनन हैं तुम परकाशे अर्थ ।
शिवसुखके साधन विषै नहीं गिनत हैं व्यर्थ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अव्याहतार्थाय नम अर्घ्यं० ॥३१९॥

करै पवित्र स आत्मा अशुभ कर्ममल खोय ।
पहुँचावै ऊँची सुगति तुम दिखलायो सोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यवाचे नम अर्घ्यं० ॥३२०॥

सत्यारथ तुम भाषियो सम्यक् विषै प्रधान ।
मिथ्या जहर निवारणा अमृत पान समान ।
ॐ ह्रीं अर्हं अर्थवाचे नम अर्घ्यं० ॥३२१॥

देव अतिशयसों खिरत हो अक्षरार्थ नय होय ।
दिव्यध्वनि निश्चयकरै संशय तमको खोय ॥
ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धमागधीयुक्तये नम अर्घ्यं० ॥३२२॥

सब जीवनको इष्ट है मोक्ष निजानन्द धाम ।
सो तुमने दिखलाइयो संशय मोह विनाश ॥
ॐ ह्रीं अर्हं इष्टवाचे नम अर्घ्यं० ॥३२३॥

नय प्रमाण ही कहत हैं, द्रव पर्याय सु भेद ।
अनेकान्त साधे सही, वस्तु भेद निरखेद।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनेकांतदर्शिने नम अर्घ्यं० ।।३२४।।

दुर्नय कहत एकातको, ताको अन्त कराय ।
सम्यक्मति प्रकटाइयो, पूजू तिनके पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं दुर्नयातकाय नम अर्घ्यं० ।।३२५।।

एक पक्ष मिथ्यात्व है, ताको तिमिर निवार ।
स्याद्वाद सम न्यायते, भविजन तारे पार।।
ॐ ह्रीं अर्हं एकातध्वातभिदे नम अर्घ्यं० ।।३२६।।

जो है सो निज भावमे, रहै सदा निरवार ।
मोक्ष साध्यमे सार है, सम्यक् विषैं अपार।।
ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्ववाचे नम अर्घ्यं० ।।३२७।।

निज गुण निज परयायमे, सदा रहो निरभेद ।
शुद्ध वुद्ध अव्यक्त हो, पूजूँ हूँ निरखेद।।
ॐ ह्रीं अर्हं पृथक्कृते नम अर्घ्यं० ।।३२८।।

स्यात्कार उद्योतकर, वस्तु धर्म निरशास ।
तासु ध्वजा निर्विघ्नको, भाषो विधि विध्वस।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्यात्कारध्वजावाचे नम अर्घ्यं० ।।३२९।।

परम्परा इह धर्मको, उपदेशो श्रुत द्वार ।
भवि भव सागर-तीर लह, पायो शिवसुखकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं वाचे नम अर्घ्यं० ।।३३०।।

द्रव्य दृष्टि नहिं पुरुष-कृत, है अनादि परमान ।
सो तुम भाष्यौ हैं सही, यह पर्याय सुजान।।
ॐ ह्रीं अर्हं अपौरुषेयवाचे नम अर्घ्यं० ।।३३१।।

नही चलाचल होठ हो, जिस वाणी के होत ।
सो मैं बदू हो किया-मोक्षमार्ग उद्योत।।
ॐ ह्रीं अर्हं अचलोष्ठवाचे नम अर्घ्यं० ।।३३२।।

तुम सन्तान अनादि है, शाश्वत नित्य स्वरूप ।
तुमको बदू भावसो, पाऊँ शिव-सुख कूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नम अर्घ्यं० ।।३३३।।

हीनादिक वा और विधि, नही विरुद्धता जान ।
एक रूप सामान्य है, सब ही सुखकी खान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अविरुद्धाय नम अर्घ्यं० ।।३३४।।

नय विवक्ष ते सधत है, सप्त भग निरवाध ।
सो तुम भाष्यो नमत हूँ, वस्तु रूपको साध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सप्तभगीवाचे नम अर्घ्यं० ।।३३५।।

अक्षर विन वाणी खिरे, सर्व अर्थ करि युक्त ।
भविजन निज सरधानते, पावैं जगते मुक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवर्णगिरे नम अर्घ्यं० ।।३३६।।

क्षुद्र तथा अक्षुद्र मय, सव भाषा परकाश ।
सुख मुखते खिरकैं करै, भर्म तिमिरको नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वभाषामयगिरे नम अर्घ्यं० ।।३३७।।

कहने योग्य समर्थ सव, अर्थ करै परकाश ।
तुम वाणी मुखते खिरे, करै भरम-तम नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्तिगिरे नम अर्घ्यं० ।।३३८।।

तुम वाणी नही व्यर्थ है, भग कभी नही होय ।
लगातार मुखते खिरे, सशय तमको खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमोघवाचे नम अर्घ्यं० ।।३३९।।

वस्तु अनन्त पर्याय है, वचन अगोचर जान ।
तुम दिखलाये सहज ही, हरी कुमति मतिवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवाच्यानन्तवाचे नम अर्घ्यं० ।।३४०।।

वचन अगोचर गुण धरो, लहैं न गणधर पार ।
तुम महिमा तुमही विषैं, मुझ तारो भवपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अवाचे नम अर्घ्यं० ।।३४१।।

तुम सम वचन न कहि सकै, असतमती छद्मस्थ ।
धर्म मार्ग प्रकटाइयो, मेटी कुमति समस्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वैतगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४२।।

सत्य प्रिय तुम बैन हैं, हित-मित भविजन हेत ।
सो मुनिजन तुम ध्यावते, पावैं शिवपुर खेत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सूनृतगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४३।।

नही साच नही झूठ है, अनुभव वचन कहात ।
सो तीर्थंकर ध्वनि कही, सत्यारथ सत बात।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानुभयगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४४।।

मिथ्या अर्थ प्रकाश करि, कुगिरा ताकौ नाम ।
सत्यारथ उद्योत करै, सुगिरा ताको नाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४५।।

योजन एक चहूँ दिशा, हो वाणी विस्तार ।
श्रवण सुनत भविजन लहै, आनद हिये अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं योजनव्यापिगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४६।।

निर्मल क्षीर समान हैं, गौर श्वेत तुम बैन ।
पाप मलिनता रहित हैं, सत्य प्रकाशक ऐन।।

ॐ ह्रीं अर्हं क्षीरगौरगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४७।।

तीर्थ तत्व जो नही तजैं, तारण भविजन वान ।
याते तीर्थंकर प्रभू, नमत पाप मल हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं तीर्थतत्त्वगिरे नम अर्घ्यं० ।।३४८।।

उत्तमार्थ पर्याय करि, आत्मतत्व को जान ।
सो तुम सत्यारथ कहो, मुनि जन उत्तम मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नम अर्घ्यं० ।।३४९।।

भव्यनिको श्रवणनि सुखद, तुम वाणी सुख देन ।
मैं बदू हू भाव सो, धर्म बतायो ऐन।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यैकश्रवणगिरे नम अर्घ्यं० ।।३५०।।

सशय विभ्रम मोह को, नाश करै निर्मूल ।
सत्य वचन परमाण तुम, छेदत मिथ्या शूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं सद्गवे नम अर्घ्यं० ।।३५१।।

तुम वाणी मे प्रकट है, सब सामान्य विशेष ।
नानाविध सुन तर्क मे, सशय रहै न शेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगवे नम अर्घ्यं० ।।३५२।।

परम कहै उतकृष्टको, अर्थ होय गम्भीर ।
सो तुम वाणी मे खिरै, बदत भवदधि तीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमार्थगवे नम अर्घ्यं० ।।३५३।।

मोह क्षोभ परशात हो, तुम वाणी उरधार ।
भविजन को सतुष्ट कर, भव आताप निवार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रशातगवे नम अर्घ्यं० ।।३५४।।

वारह सभासु प्रश्न कर, समाधान करतार ।
मिथ्यामति विध्वस करि, वदू मनमे धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्राश्निकगिरे नम अर्घ्यं० ।।३५५।।

महापुरुष महादेव हो, सुर नर पूजन योग ।
वाणी सुन मिथ्यात तज, पावें शिवसुख भोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं याज्युश्रुतये नम अर्घ्यं० ।।३५६।।

शिव मग उपदेशक सुश्रुत, मन मे अर्थ विचार ।
साक्षात् उपदेश तुम, तारे भविजन पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुश्रुतये नम, अर्घ्यं० ।।३५७।।

तुम समान तिहुं लोक मे, नही अर्थ परकाश ।
भविजन सम्वोधे सदा, मिथ्यामति को नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं महाश्रुतये नम अर्घ्यं० ।।३५८।।

जो निजात्म-कल्याण मे, वरतै सो उपदेश ।
धर्म नाम तिस जानियो, वदू चरण हमेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मश्रुतये नम अर्घ्यं० ।।३५९।।

जिन शासन के अधिपति, शिवमारग वतलाय ।
वा भविजन सतुष्ट करि, वदू तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपतये नम अर्घ्यं० ।।३६०।।

धारण हो उपदेश के, केवल ज्ञान सयुक्त ।
शिव मारग दिखलात हो, तुमको वदन युक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतधृताय नम अर्घ्यं० ।।३६१।।

जैसो है तैसो कहो, परम्पराय सु रीत ।
सत्यारथ उपदेश तैं, धर्म मार्ग की रीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं ध्रुवश्रुतये नम अर्घ्यं० ।।३६२।।

मोक्ष मार्ग को देखियो, औरन को दिखलाय ।
तुम सम हितकारक नही, वदू हूँ तिन पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणमार्गोपदेशकाय नम अर्घ्यं० ।।३६३।।

स्वर्ग मोक्ष मारग कहो, यति श्रावक को धर्म ।
तुमको बन्दत सुख महा, लहै ब्रह्म पद पर्म।।
ॐ ह्रीं अर्हं यतिश्रावकमार्गदेशकाय नम अर्घ्यं० ।।३६४।।

तत्व अतत्वसु जानियो, तुम सब ही परतक्ष ।
निज-आतम सतुष्ट हो, देखो लक्ष अलक्ष।।
ॐ ह्रीं अर्हं तत्वमार्गदृशे नम अर्घ्यं० ।।३६५।।

सार तत्त्व वर्णन कियो, अयथार्थ मत नाश ।
स्वपर-प्रकाशक हो महा, बदे तिनको दास।।
ॐ ह्रीं अर्हं सारतत्त्व-यथार्थाय नम अर्घ्यं० ।।३६६।।

आप तीर्थ औरन प्रति, सर्व तीर्थ करतार ।
उत्तम शिवपुर पहुँचना, यही विशेषण सार।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्तमतीर्थकृताय नम अर्घ्यं० ।।३६७।।

दृष्टा लोकालोक के, रेखा हस्त समान ।
युगपत सबको देखिये, कियो भर्म तम हान।।
ॐ ह्रीं अर्हं दृष्टाय नम अर्घ्यं० ।।३६८।।

जिनवाणी के रसिक हो, तासो रति दिन रैन ।
भोगोपभोग करो सदा, बदत ह्वै सुख चैन।।
ॐ ह्रीं अर्हं वाग्मीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।३६९।।

जो ससार समुद्र से, पार करत सो धर्म ।
तुम उपदेश्या धर्म कू, नमत मिटै भव भर्म।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मशासनाय नम अर्घ्यं० ।।३७०।।

धर्म रूप उपदेश है, भवि जीवन हितकार ।
मैं बदू तिनको सदा, करौ भवार्णव पार।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेशकाय नम अर्घ्यं० ।।३७१।।

सब विद्या के ईश हो, पूरन ज्ञान सुजान ।
तिनको बदू भाव से, पाऊ ज्ञान महान।।
ॐ ह्रीं अर्हं वागीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।३७२।।

सुमति नार भरतार को, कुमति कुसौत विडार ।
मैं पूजू हूँ भाव सो, पाऊ सुमती सार।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रयीनाथाय अर्घ्यं० ।।३७३।।

धर्म अर्थ अरु मोक्ष के, हो दाता भगवान ।
मैं नित-प्रति पायन परू, देहु परम कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभगीशाय नम अर्घ्यं० ।।३७४।।

गिरा कहै जिन वचन को, तिसका अन्त सु धर्म ।
मोक्ष करै भवि-जनन को, नाशै मिथ्या भर्म।।

ॐ ह्रीं अर्हं गिरापतये नम अर्घ्यं० ।।३७५।।

जाकी सीमा मोक्ष है, पूरण सुख स्थान ।
शरणागत को सिद्ध है, नमू सिद्ध धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धागाय नम अर्घ्यं० ।।३७६।।

नय-प्रमाणसो सिद्ध है, तुम वाणी रवि सार ।
मिथ्या तिमिर निवार कैं, करै भव्य जन पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाङ्मयाय नम अर्घ्यं० ।।३७७।।

निज पुरुषारथ साधकैं, सिद्ध भये सुखकार ।
मन वच तन करि मैं नमू, करो जगतसै पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नम अर्घ्यं० ।।३७८।।

सिद्ध करै निज अर्थ को, तुम शासन हितकार ।
भवि जन मानै सरदहै, करै कर्म रज छार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धशासनाय नम अर्घ्यं० ।।३७९।।

तीन लोक मे सिद्ध है, तुम प्रसिद्ध सिद्धान्त ।
अनेकान्त परकाश कर, नाशै मिथ्या ध्वात।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगद्प्रसिद्धसिद्धाताय नम अर्घ्यं० ।।३८०।।

ओकार यह मत्र है, तीन लोक परसिद्ध ।
तुम साधक कहलात हो, जपत मिलै नवनिद्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धमत्राय नम अर्घ्यं० ।।३८१।।

सिद्ध यज्ञ को कहत है, सशय विभ्रम नाश ।
मोक्षमार्ग मे ले धरै, निजानन्द परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धवाचे नम अर्घ्यं० ।।३८२।।

मोहरूप मलसो दुरी, वाणी कही पवित्र ।
भव्य स्वच्छता धारिके, लहै मोक्ष पद तत्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुचिवाचे नम अर्घ्यं० ।।३८३।।

देवा महा ध्वनि करत हैं, तुम सन्मुख धर भाव ।
केवल अतिशय कहत हैं, मैं पूजू युत चाव।।
ॐ ह्रीं अर्हं दुदुभीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।३९४।।

इन्द्रादिक नित पूजते, भक्ति पूर्व शिर नाय ।
त्रिभुवन नाथ कहातहो, हम पूजत नित पाँय।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवननाथाय नम अर्घ्यं० ।।३९५।।

गणी मुनीश फनीशपति, कलपेन्द्र के नाथ ।
अहमिन्द्रन के नाथ हो, तुमहि नमू धरि माथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महानाथाय नम अर्घ्यं० ।।३९६।।

भिन्न-भिन्न देख्यो सकल, लोकालोक अनन्त ।
तुम सम दृष्टि न औरकी, तुमैं नमे नित 'सन्त'।।
ॐ ह्रीं अर्हं परदृष्टे नम अर्घ्यं० ।।३९७।।

सब जगके भरतार हो, मुनिगणमे परधान ।
तुमको पूजैं भावसो, होत सदा कल्याण।।
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पतये नम अर्घ्यं० ।।३९८।।

श्रावक या मुनिराज हो, तुम आज्ञा शिर धार ।
वरतैं धर्म पुरुषार्थ मे, पूजत हूँ सुखकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वामिने नम अर्घ्यं० ।।३९९।।

धर्म कार्य करता सही, हो ब्रह्मा परमार्थ ।
मालिक हो तिहुं लोकके, पूजीनीक सत्यार्थ।।
ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।४००।।

तीन लोकके नाथ हो, शरणागत प्रतिपाल ।
चार सघके अधिपती, पूजू हूँ नमि भाल।।
ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विधसघाधिपतये नम अर्घ्यं० ।।४०१।।

तुम सम और विभव नही, धरो चतुष्ट अनत ।
क्यो न करो उद्धार अब, दास कहावै 'सत'।।
ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयविभवधारकाय नम अर्घ्यं० ।।४०२।।

जामे विघन न हो कभी, ऐसी श्रेष्ठ विभूत ।
पाई निज पुरुषार्थ करि, पूजन शुभ करतूत।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्रभवे नम अर्घ्यं० ।।४०३।।

तुम सम शक्ति न औरकी, शिवलक्ष्मी को पाय ।
भौगै सुख स्वाधीन कर, बदू जिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयशक्तितधारकायनम अर्घ्यं० ।।४०४।।

तुमसे अधिक न औरमे, पुरुषारथ कहुँ पाई ।
हो अधीश सब जगतके, बदू जिनके पाइ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४०५।।

अग्रेश्वर चउ सघ के, शिवनायक शिरमौर ।
पूजत हूँ नित भावसो, शीश दोऊ कर जोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशाय नम अर्घ्यं० ।।४०६।।

सहज सुभाव प्रयत्न बिन, तीन लोक आधीश ।
शुद्ध सुभाव विराजते, बन्दू पद धर शीश।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वाधीशाय नम अर्घ्यं० ।।४०७।।

क्षायक सुमति सुहावनी, बीजभूत तिस जान ।
तुमसे शिवमारग चलै, मैं बदू धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीशित्रे नम अर्घ्यं० ।।४०८।।

स्वयबुद्ध शिवनाथ हो, धर्मतीर्थ करतार ।
तुम सम सुमति न को धरै, मैं बदू निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मतीर्थकर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।४०९।।

पूरण शक्ति सुभाव धर, पूजत ब्रह्म प्रकाश ।
पूरण पद पायो प्रभू, पूजत पाप विनाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णपदप्राप्ताय नम अर्घ्यं० ।।४१०।।

तुमसे अधिक न और है, त्रिभुवन ईश कहाय ।
तीन लोक अत्यन्त सुख, पायो बदू ताय।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपतये नम अर्घ्यं० ।।४११।।

तीन लोक पूजत चरण, ईश्वर तुमको जान ।
मैं पूजो हो भावसो, सबसे बडे महान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ईशाय नम अर्घ्यं० ।।४१२।।

सूरज सम परकाश कर, मिथ्यातम परिहार ।
भविजन कमल प्रबोधको, पायो निज हितकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं ईशानाय नम अर्घ्यं० ।।४१३।।

क्रीडा करि शिवमार्ग मे, पाय परमपद आप ।
आज्ञा भग न हो कभी, बदत नाशे पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्राय नम अर्घ्यं० ।।४१४।।

उत्तम हो तिहुँ लोकमे, सबके हो सिरताज ।
शरणागत प्रतिपाल हो, पूजू आतम काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकोत्तमाय नम अर्घ्यं० ।।४१५।।

अधिक भूतिके हो धनी, सुखी सर्व निरधार ।
सुरनर तुम पदको लहैं, पूजत हूँ सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिभुवे नम अर्घ्यं० ।।४१६।।

तीन लोक कल्याणकर, धर्म मार्ग बतलाय ।
सब देवनके देव हो, महादेव सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४१७।।

महा ईश महाराज हो, महा प्रताप धराय ।
महा जीव पूजे चरण, सब जन शरण सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेशाय नम अर्घ्यं० ।।४१८।।

परम कहो उत्कृष्टको, धर्म तीर्थ बरताय ।
परमेश्वर याते भये, बदू तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४१९।।

तुम समान कोई नही, जग ईश्वर जगनाथ ।
महा विभव ऐश्वर्य को, धरो नमू निज माथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महेशित्रे नम अर्घ्यं० ।।४२०।।

चार प्रकानके सदा, देव तुम्हैं शिर नाय ।
सब देवनमे श्रेष्ठ हो, नमू युगल तुम पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधिदेवाय नम अर्घ्यं० ।।४२१।।

तुम समान नहिं देव अरु, तुम देवनके देव ।
यो महान पदवी धरौ, तुम पूजत हूँ एव।।

ॐ ह्रीं अर्हं महादेवाय नम अर्घ्यं० ।।४२२।।

शिवमारग तुममे सही, देव पूजने योग ।
सहचारी तुम सुगुण हैं, और कुदेव अयोग।।

ॐ ह्रीं अर्हं देवाय नम अर्घ्यं० ।।४२३।।

तीन लोक पूजत चरण, तुम आज्ञा शिर धार ।
त्रिभुवन ईश्वर हो सही, मैं पूजूं निरधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४२४।।

विश्वपती तुमको नमैं, निज कल्याण विचार ।
सर्व विश्व के तुम पती, मैं पूजूं उर धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नम अर्घ्यं० ।।४२५।।

जगत जीव कल्याण कर, लोकालोक अनन्द ।
षट्कायिक आह्लादकर, जिम कुमोदनी चद।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नम अर्घ्यं० ।।४२६।।

इन्द्रादिक जे विश्वपति, तुमको पूजत आन ।
याते तुम विश्वेश सो, साच नम धर ध्यान।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेशाय नम अर्घ्यं० ।।४२७।।

विश्व बन्ध दृढ़ तोडके, विश्व शिखर ठहराय ।
चरण कमल तल जगत है, यू सब पूजत पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४२८।।

शिवमारगकी रीति तुम, बरतायो शुभ योग ।
तिहूं काल तिहुं लोकमे, और कुनीति अयोग।।
ॐ ह्रीं अर्हं अधिराजे नम अर्घ्यं० ।।४२९।।

लोक तिमिर हर सूर्य हो, तारण लोक जिहाज ।
लोकशिखर राजत प्रभू, मैं बन्दू हित काज।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४३०।।

तीन लोक प्रतिपाल हो, तीन लोक हितकार ।
तीन लोक तारण तरण, तीन लोक सरदार।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकपतये नम अर्घ्यं० ।।४३१।।

लोक-पूज्य सुखकार हो, पूजत हैं हित धार ।
मैं पूजो नित भाव सो, करो भवार्णव पार।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकनाथाय नम अर्घ्यं० ।।४३२।।

पूजनीक जगमे सही, तुम्हैं कहैं सब लोग ।
धर्म मार्ग प्रगटित कियो, याते पूजन योग।।
ॐ ह्रीं अर्हं जगपूज्याय नम अर्घ्यं० ।।४३३।।

ऊरध अधो सु मध्य है, तीन भाग यह लोक ।
तिनमे तुम उत्कृष्ट हो, तुम्हैं देत नित धोक।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नम अर्घ्यं० ।।४३४।।

तुम समान समरथ नही, तीन लोकमे और ।
स्वय शिवालय राजते, स्वामी हो शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकेशाय नम अर्घ्यं० ।।४३५।।

जगत नाथ जग ईश हो, जगपति पूजे पाय ।
मैं पूजू नित भाव युत, तारण तरण सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नाथाय नम अर्घ्यं० ।।४३६।।

महा भूति इस जगतमे, धारत हो निरभग ।
सब विभूति जग जीतिकैं, पायो सुख सरवग।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्प्रभवे नम अर्घ्यं० ।।४३७।।

मुनि मन करण पवित्र हो, सब विभावको नाश ।
तुम को अजुलि जोरकर, नमू होत अघ नाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं पवित्राय नम अर्घ्यं० ।।४३८।।

मोक्ष रूप परधान हो, ब्रह्मज्ञान परवीन ।
बध रहित शिव-सुख सहित, नमैं 'सत' आधीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं पराक्रमाय नम अर्घ्यं० ।।४३९।।

जामे जन्म-मरण नही, लोकोत्तर कियो वास ।
अचल सुथिर राजै सदा, निजानद परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं परत्राय नम अर्घ्यं० ।।४४०।।

मोहादिक रिपु जीत के, विजयवन्त कहलाय ।
जैत्र नाम परसिद्ध है, बदू तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं जैत्रे नम अर्घ्यं० ।।४४१।।

रक्षक हो षट् कायके, कर्म शत्रु क्षयकार ।
विजय लक्ष्मी नाथ हो, मैं पूजू सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जिष्णवे नम अर्घ्यं० ।।४४२।।

करता हो विधि कर्म के, हरता पाप विशेष ।
पुन्यपाप सु विभाग कर, भ्रम नही राखो लेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।४४३।।

तीन लोक की लक्ष्मी, तुम चरणावुज ठोर ।
यातै सब जग जीति के, राजत हो शिरमौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जेत्रे नम अर्घ्यं० ।।४५४।।

तीन लोक कल्याण कर, कर्म शत्रु को जीत ।
भव्यन प्रति आनद कर, मेटत तिनकी भीति।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जिष्णवे नम अर्घ्यं० ।।४५५।।

जग जीवन को अन्ध कर, फैलो मिथ्या घोर ।
धर्म मार्ग प्रकटाय कर, पहुँचायो शिव ठौर।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगन्नेत्राय नम अर्घ्यं० ।।४५६।।

मोहादिक जिन जीतियो, सोइ जग मे नाम ।
सो तुम पद पायो महा, तुम पद करू प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगज्जयिने नम अर्घ्यं० ।।४५७।।

जो तुम धम प्रकट करि, जिय आनन्दित होय ।
अग्र भये कल्यान कर, तुम पद प्रणमू सोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अग्रण्ये नम अर्घ्यं० ।।४५८।।

रक्षा करि षट् काय की, विषय-कषाय न लेश ।
त्रास हरो जमराज को, जयवन्तो गुण शेष।।

ॐ ह्रीं अर्हं दयामूर्तये नम अर्घ्यं० ।।४५९।।

सत्य असत्य लखन करै, सोई नेत्र कहाय ।
पुद्गल नेत्र न नेत्र हो, साचे नेत्र सुखाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यनेत्राय नम अर्घ्यं० ।।४६०।।

सुर नर मुनि तुम ज्ञानतै, जानै निज कल्याण ।
ईश्वर हो सब जगत के, आनद सपति खान।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४६१।।

धर्म्माभास मनोक्त के, मूल नाश कर दीन ।
सत्य मार्ग बतलाइयो, कियो भव्य सुख लीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनायकाय नम अर्घ्यं० ।।४६२।।

ऋद्धिनमे परसिद्ध है, केवल ऋद्धि महान ।
सो तुम पायो सहज ही, योगीश्वर मुनि मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ऋद्धीशाय नम अर्घ्यं०।।४६३।।

जो प्राणी ससार मे, तिन सबके हितकार ।
आनद सो सब नमत हैं, पावैं भवदधि पार।।
ॐ ह्रीं अर्हं भूतनाथाय नम अर्घ्यं० ।।४६४।।

प्राणिन के भरतार हो, दुख टारन सुखकार ।
तुम आश्रय करि जीव सब, आनद लहैं अपार।।
ॐ ह्रीं अर्हं भूतभर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।४६५।।

सत्य धर्म के मार्ग हो, ज्ञान मात्र निरशास ।
तुम ही आश्रय पाय के, रहै न अघ को अश।।
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पात्रे नम अर्घ्यं० ।।४६६।।

अतुल वीर्य स्वशक्ति हो, जीते कर्म जरार ।
तुम सब बल नही और मे, होउ सहाय अबार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अतुलबलाय नम अर्घ्यं० ।।४६७।।

धर्म मूर्ति धरमातमा, धर्म तीर्थ बरताय ।
स्वसुभाव सो धर्म है, पायो सहज उपाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं वृषाय नम अर्घ्यं० ।।४६८।।

हिंसा को वर्जित कियो, जे अपराध महान ।
परिग्रह अर आरभ के, त्यागी श्री भगवान।।
ॐ ह्रीं अर्हं परिग्रहत्यागीजिनाय नम अर्घ्यं० ।।४६९।।

सर्व सिद्ध तुम सुलभ कर, पायो स्वय उपाय ।
साचे हो वश करण को, जग मे मत्र कराय।।
ॐ ह्रीं अर्हं मत्रकृते नम अर्घ्यं० ।।४७०।।

जितने कछु शुभ चिन्ह हैं, दीप्त अशेष स्वरूप ।
शुभ लक्षण सोहत अति, सहजे तुम शिवभूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुभलक्षणाय नम अर्घ्यं० ।।४७१।।

लोक विषैं तुम मार्ग को, मानत हैं बुधवन्त ।
तर्क हेतु करुणा लिये, याते माने 'सत'।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकाध्यक्षाय नम अर्घ्यं० ।।४७२।।

काहू के वश मे नही, काहू नमत न शीश ।
कठिन रीति धारैं प्रभ, नमू सदा जगदीश।।
ॐ ह्रीं अर्हं दुरोधृष्टाय नम अर्घ्यं० ।।४७३।।

दासनि के प्रतिपाल कर, शरणागति हितकार ।
भवि दुखियन को पोष कर, दियो अखै पदसार।।

ॐ ह्रीं अर्हं भव्यबन्धवे नम अर्घ्यं० ।।४७४।।

निराकरण करि कर्म को, सरल सिद्धगति धार ।
शिवथल जाय सु वास लहि, धर्मद्रव्य सहकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरस्तकर्माय नम अर्घ्यं० ।।४७५।।

मुनि ध्यावै, पावे सुपद, निकट भव्य धरि ध्यान ।
पावे निज कल्याण नित, ध्यान योग तुम मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमध्येयजिनाय नम अर्घ्यं० ।।४७६।।

रक्षक हो जग के सदा, धर्म दान दातार ।
पोषित हो सब जीव के, वदू भाव लगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं जगत्तापहराय नम अर्घ्यं० ।।४७७।।

मोह प्रचड बली जयो, अतुल वीर्य भगवान ।
शीघ्र गमन करि शिव गये, नमू हेत कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोहारिजिताय नम अर्घ्यं० ।।४७८।।

तीन लोक शिरमौर तुम, सब पूजत हरषाय ।
परमेश्वर हो जगत के, बदत हूँ तिन पाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगत्परमेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४७९।।

लोक शिखर पर अचल नित, राजत है तिहुँ काल ।
सर्वोत्तम आसन लियो, लोक शिरोमणि भाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वासिने नम अर्घ्यं० ।।४८०।।

विश्वभूति प्राणीन के, ईश्वर हैं भगवान ।
सबके शिर पर पग धरैं, सर्व आन तिन मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतेशाय नम अर्घ्यं० ।।४८१।।

मोक्ष सपदा होत ही, नित अक्षय ऐश्वर्य ।
कौन मूढ कौडी लहै, सर्वोत्तम धनवर्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं विभवाय नम अर्घ्यं० ।।४८२।।

त्रिभुवन ईश्वर हो तुम्ही, और जीव है रक ।
तुम तज चाहै और को, ऐसो कौ बुध बक।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनेश्वराय नम अर्घ्यं० ।।४८३।।

उत्तरोत्तर तिहुँ लोक मे, दुर्लभ लब्धि कराय ।
तुम पद दुर्लभ कठिन है, महा भाग सो पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगदुर्लभाय नम अर्घ्यं० ।।४८४।।

वढ़वारी परणामसो, पूर्ण अभ्युदय पाय ।
भई अनत विशुद्धता, भये विशुद्ध अथाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अभ्युदयाय नम अर्घ्यं० ।।४८५।।

तीन लोक मगलकरण, दुखहारण सुखकार ।
हमको मगल द्यो महा, पूजो वारम्बार।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिजगन्मगलोदयाय नम अर्घ्यं० ।।४८६।।

आप धर्म के सामने, और धर्म लुप जाये ।
धर्मचक्र आयुध धरो, शत्रु नाश तव पाये।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मचक्रायुधाय नम अर्घ्यं० ।।४८७।।

सत्य शक्ति तुम ही सही, सत्य पराक्रम जोर ।
है प्रसिद्ध इस जगतमे, कर्म शत्रु शिरमोर।।
ॐ ह्रीं अर्हं सद्योजाताय नम अर्घ्यं० ।।४८८।।

मगलमय मगलकरण, तीन लोक विख्यात ।
सुमरण ध्यानसु करत ही, सकल पाप नशि जात।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमगलाय नम अर्घ्यं० ।।४८९।।

द्रव्य-भाव दऊ वेद विन, स्वातम रति सुख मान ।
पर-आलिगन रतिकरण, निरइच्छुक भगवान।।
ॐ ह्रीं अर्हं अवेदाय नम अर्घ्यं० ।।४९०।।

घातिरहित स्व-पर दया, निजानन्द रसलीन ।
सुखसो अवगाहन करें, 'सत' चरण आधीन।।
ॐ ह्रीं अर्हं अप्रतिघाताय नम अर्घ्यं० ।।४९१।।

निजानन्द स्व-देशमे, खड खड नही होय ।
पूरण अविनाशी सुखी, पूजत हूँ भ्रम खोय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्याय नम अर्घ्यं० ।।४९२।।

सिद्ध समान सु शुभ नही, और नाम विख्यात ।
कभू न जगमे जन्म फिर, सोई दृढ़ कहलात।।
ॐ ह्रीं अर्हं दृढ़ीयसे नम अर्घ्यं० ।।४९३।।

जन्म मरण के कष्ट से, सर्व लोक भयवत ।
ताको नाश अभय करण, तुम्हैं नमे जिय 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अभयकराय नम अर्घ्यं० ।।४९४।।

ज्ञानानन्द स्व-लक्ष्मी, भोगत हो निरखेद ।
महा भोग याते भये, हैं स्वाधीन अवेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं महाभोगाय नम अर्घ्यं० ।।४९५।।

असाधारण असमान हो, सर्वोत्तम उत्कृष्ट ।
परसो भिन्न अखिन्न हो, पायो पद अविनष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरौपम्याय नम अर्घ्यं० ।।४९६।।

दश लक्षण शुभ धर्म के, राजसम्पदा भोग ।
नायक हो निज धर्म के, पूजि नमैं तिहुँ योग।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसाम्राज्यनायकाय नम अर्घ्यं० ।।४९७।।

अधिपति स्वामि स्वभाव निज, परकृत भाव विडार ।
तिहूँ वेद रति मान बिन, सपूरण सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्वेदप्रवृत्ताय नम अर्घ्यं० ।।४९८।।

यथायोग्य पद पाइयो, यथायोग्य सपूर्ण ।
नमू त्रियोग सभारिके, करू पाप मल चूर्ण।।

ॐ ह्रीं अर्हं सपूर्णयोगिने नम अर्घ्यं० ।।४९९।।

सब इन्द्रिय मन रोकके, आरोहण तिस भाव ।
श्रेणी उच्च चढ़ावमे, तत्पर अन्त सु पाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं समारोहणतत्पराय नम अर्घ्यं० ।।५००।।

एकाश्रय निज धर्ममे, परसो भिन्न सदीव ।
सहज स्वभाव विराजते, सिद्धराज सब जीव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सहजसिद्धरूपाय नम अर्घ्यं० ।।५०१।।

राग द्वेष बिन सहज ही, राजत शुद्ध स्वभाव ।
मन विकल्प नही भावमे, पूजत हो धरि चाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सामायिकाय नम अर्घ्यं० ।।५०२।।

निजानन्द निज लक्ष्मी, भोगत ग्लानि न होय ।
अतुल वीर्य स्वभावतैं, परमादी नही होय।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्प्रमादाय नम अर्घ्यं० ।।५०३।।

है अनादि सनान करि, कभी भयो नही आदि ।
नित्य शिवालय पूर्णता, बसै जगत अघवादि ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अकृताय नम अर्घ्यं० ।।५०४।।

पर-पदार्थ नहीं इष्ट है, निजपद मे लवलीन ।
विघ्नहरण मगलकरण, तुम पद मस्तक दीन ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमभावाय नम अर्घ्यं० ।।५०५।।

नित्य शौच सतोष मय पर-पदार्थसो रोक ।
निश्चय सम्यक् भाव मय, हैं प्रधान यु धोक ।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्रधानाय नम अर्घ्यं० ।।५०६।।

ज्ञान ज्योति निज धरत हो, निश्चल परम सुठाम ।
लोकालोक प्रकाश कर, मैं बदू सुख धाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वभासपरभासनाय नम अर्घ्यं० ।।५०७।।

एक स्थान सु थिर सदा, निश्चय चारित भूप ।
शुद्ध उपयोग प्रभावते, कम छिपावन रूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्राणायामचरणाय नम अर्घ्यं० ।।५०८।।

विषय स्वादनो हट रहैं, इन्द्री मन थिर होय ।
निज आतम लवलीन है शुद्ध कहावे सोय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धप्रत्याहाराय नम अर्घ्यं० ।।५०९।।

इन्द्री विषय न वश रहै, निज आतम लवलाय ।
सो जिनेन्द्र स्वाधीन हैं, बदू तिनके पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं जितेन्द्रियाय नम अर्घ्यं० ।।५१०।।

ध्यान विषै सो धारणा, निज आतम थिर धार ।
ताके अधिपति हो महा, भये भवार्णव पार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं धारणाधीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।५११।।

रागादिक मल नाशिके, ध्यान सु धर्म लहाय ।
अचल रूप राजै सदा, बदू मन वच काय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मध्याननिष्ठाय नम अर्घ्यं० ।।५१२।।

निजानन्दमे मगन है, परपद राग निवार ।
समदृष्टी राजत सदा, हमे करो भव पार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं समाधिराजे नम अर्घ्यं० ।।५१३।।

वीतराग निर्विकल्प हैं, ज्ञान उदय निरशम ।
समरसभाव परम सुखी, नमत मिटे दुख अश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्फुरितसमरसीभावाय नम अर्घ्यं० ।।५१४।।

एकै रूप विराजते, नय विकल्प नहिं ठोर ।
वचन अगोचर शुद्धता, पाप विनाशो मोर ।।
ॐ ह्रीं अर्हं एकीभावनयरूपाय नम अर्घ्यं० ।।५१५।।

परम दिगम्बर मुनि महा, समदृष्टी मुनिनाथ ।
ध्यावै पावै परम पद, नमू जोर जुग हाथ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्ग्रंथनाथाय नम अर्घ्यं० ।।५१६।।

योग साधि योगी भये, तिनको इन्द्र महान ।
ध्यावत पावत परम पद, पूजत निज कल्याण ।
ॐ ह्रीं अर्हं योगीन्द्राय नम अर्घ्यं० ।।५१७।।

शिवमारग सिद्धात के, पार भये मुनि ईश ।
तारण-तरण जिहाज हो, तुम्हे नमू नित शीश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं ऋषये नम अर्घ्यं० ।।५१८।।

निज स्वरूपको साधिकर, साधु भये जग माहि ।
निजपर हितकर गुण धरैं, तीन लोक नमि ताहि ।।
ॐ ह्रीं अर्हं साधवे नम अर्घ्यं० ।।५१९।।

रागादिक रिपु जीतके, भये यती शुभ नाम ।
धर्म धुरधर परम गुरु, जुगपद करू प्रणाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं यतये नम अर्घ्यं० ।।५२०।।

पर सपतिसू विमुख हो, निजपद रुचि करि नेम ।
मुनि मन रजन पद महा, तुम धारत हो एम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं मुनये नम अर्घ्यं० ।।५२१।।

महाश्रेष्ठ मुनिराज हो, निजपद पायौ सार ।
महा परम निरग्रन्थ हो, पूजत हूँ मन धार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महर्षिणे नम अर्घ्यं० ।।५२२।।

साधु भार दुरगमन है, ताहि उठावन हार ।
शिव-मन्दिर पहुँचात हो, महाबली सुखकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं साधुधौरेयाय नम अर्घ्यं० ।।५२३।।

इन्द्री मन जिन जे जती, तिनके हो तुम नाथ ।
परम्परा मरजाद धर, देह हमे निज साथ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं यतीनाथाय नम अर्घ्यं० ।।५२४।।

चार सघ मुनिराजके, ईश्वर हो परधान ।
परहितकर सामर्थ्य हो, निज सम करि भगवान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं मुनीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।५२५।।

गणधरादि सेवक महा, तिन आज्ञा शिरधार ।
सर्वोपरि ज्ञान न लक्ष्मी, पावत है निरधार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महामुनये नम अर्घ्यं० ।।५२६।।

महामौन सवरूप हो, धर्म मौन सरवाग ।
तिनको वंद भाव युत, पाऊ मै धर्मांग ।
ॐ ह्रीं अर्हं महामौनिने नम अर्घ्यं० ।।५२७।।

इष्टानिष्ट विभाव विन समदृष्टि स्वध्यान ।
मगन रहे निजपद विषै ध्यान रूप भगवान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाध्याननिने नम अर्घ्य० ।।५२८।।

स्व स्वभाव नहीं त्याग है नहीं ग्रहण पर माहि ।
पाप कलाप न आपमे, परम शुद्ध नमू ताहि ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाव्रतिने नम अर्घ्यं० ।।५२९।।

क्रोध प्रकृति विनाश के, धरै क्षमा निज भाव ।
समरस स्वाद सु लहत है, वदू शुद्ध स्वभाव ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नम अर्घ्यं० ।।५३०।।

मोह रूप सन्ताप विन, शीतल महा स्वभाव ।
पूरण सुख आकुल नही, वदू मन धर चाव ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाशीतलाय नम अर्घ्यं० ।।५३१।।

मन इन्द्रिय के क्षोभ विन, महाशांति सुख रूप ।
निजपद रमण स्वभाव नित, मैं वदू शिव भूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाशाताय नम. अर्घ्यं० ।।५३२।।

मन इन्द्रिय को दमन कर, पायो ज्ञान अतीन्द्र ।
स्वाभाविक स्वशक्ति कर, वदू भये जीतेन्द्र ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नम अर्घ्यं० ।।५३३।।

पर पदार्थ को क्लेश तजि, व्यापै निजपद माहि ।
स्वच्छ स्वभाव विराजते, पूजत हूँ नित ताहि।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्लेपाय नम अर्घ्यं० ।।५३४।।

सशयादि दृष्टि नही, सम्यग्ज्ञान मझार ।
सब पदार्थ प्रत्यक्ष लख, महा तुष्ट सुखकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्भ्रांताय नम अर्घ्यं० ।।५३५।।

शांतिरूप निज शांति गुण, सो तुमही मे पाय ।
निज मन शांति सुभाव धर, पूजत हूँ युग पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्रशाताय नम अर्घ्यं० ।।५३६।।

मुनि श्रावक द्वै धर्म के, तुम अधिपति शिवनाथ ।
भविजन को आनद करि, तुम्हैं नवाऊ माथ।।
ॐ ह्रीं अर्ह धर्माध्यक्षाय नम अर्घ्यं० ।।५३७।।

दया नीति वरताइयो, सुखी किये जगजीव ।
कल्पित राग ग्रसित नही, जानत मार्ग सदीव।।
ॐ ह्रीं अर्हं दयाध्वजाय नम अर्घ्यं० ।।५३८।।

केवल ब्रह्म स्वरूप हो, अन्तर बाह्य अदेह ।
ज्ञानज्योतिघन नमत हूँ, मनवचतन धरि नेह।।
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मयोनये नम अर्घ्यं० ।।५३९।।

स्वाय वुद्ध अविरुद्ध हो, स्वय ज्ञान परकाश ।
निजपर भाव दिखात हो, दीपक सम प्रतिभास।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयबुद्धाय नम अर्घ्यं० ।।५४०।।

रागादिक मल नाशियो, महा पवित्र सुखाय ।
शुद्ध स्वभाव धरैं करैं, सुरनर थुति न अघाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नम अर्घ्यं० ।।५४१।

वीतराग श्रद्धानता, सपूरण वैराग ।
द्वेष रहित शुभ गुण सहित, रहूँ सदा पगलाग।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नम अर्घ्यं० ।।५४२।।

माया मद आदिक हरे, भये शुद्ध सुख खान ।
निर्मल भाव थकी जजू, होत पाप की हान।।
ॐ ह्रीं अर्हं अमदभावाय नम अर्घ्यं० ।।५४३।।

अतुल वीर्य जो ज्ञानमें, सूर्य समान प्रकाश ।
मोक्षनाथ निज धर्म जुत, स्व-ऐश्वर्य विलास ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वर्याय नमः अर्घ्यं० ।।५४४।।

मत्सर क्रोध जु ईर्ष्या, पर मे द्वेष सुभाव ।
सो तुम नाशो सहज ही, निंदित दूषित विभाव ।।
ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं० ।।५४५।।

धर्म भार निज धारकर, समाधान परकाज ।
तुम सम श्रेष्ठ न धर्म अरु तारण तरण जिहाज ।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मवृषाय नमः अर्घ्यं० ।।५४६।।

क्रोध कर्म जडसे नसो, भयो क्षोभ सब दूर ।
महा शांति सरूप हो, पूजत अघ सब चूर ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं० ।।५४७।।

दुष्टमित्र चाहरहीं विराति विधि कर खण्ड ।
जिष्णु महाकल्याणकर, शिवमग भाग प्रचण्ड ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाविधिखण्डाय नमः अर्घ्यं० ।।५४८।।

अमृतमय तुम जन्म है, लोक तुष्टताकार ।
जन्म कल्याणक इन्द्र कर, क्षीरनीर करधार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं० ।।५४९।।

इन्द्री विषय सुविषहरण, काम पिशाच विडार ।
मूर्तीक शुभ मन्त्र हो, देव जजैं हित धार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं मन्त्रमूर्तये नमः अर्घ्यं० ।।५५०।।

सौम्य दशा प्रकटी घनी, जाति विरोधी जीव ।
वैर छाड समभाव धर, सेवत चरण सदीव ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वैरसौम्यभावाय नमः अर्घ्यं० ।।५५१।।

पराधीन इन्द्री विना, राग विरोध निवार ।
हो स्वाधीन न कर्ण पर, स्वयं सिद्ध सुखकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वतन्त्राय नमः अर्घ्यं० ।।५५२।।

ब्रह्म रूप, नहीं बाह्य तन, सभव ज्ञान स्वरूप ।
स्वयं प्रकाश विलास धर, राजत अमल अनूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मसम्भवाय नमः अर्घ्यं० ।।५५३।।

आनन्दधार मे मगन है, सब विकल्प दुख टार ।
पर आश्रित नहीं भाव है, पूजूं आनद धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रसन्नाय नम अर्घ्यं० ।।५५४।।

परिपूरण गुण सीम है, सब शक्ति भण्डार ।
तुममें सुगुण न शेष है, जो न होय सुखकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं गुणाम्बुधये नम अर्घ्यं० ।।५५५।।

ग्रहण-त्याग को भाव तज, शुभ वा अशुभ अभेद ।
व्याधिकार हैं वस्तु मे, तुम्हे नमूं निरखेद।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपापनिरोधकाय नम अर्घ्यं० ।।५५६।।

सूक्षम रूप अलख है, गणधर आदि अगम्य ।
आप गुप्त परमातमा, इन्द्रिय द्वार अगम्य।।
ॐ ह्रीं अर्हं महगम्यसूक्ष्मरूपाय नम अर्घ्यं० ।।५५७।।

अन्तरगुप्त स्व-आतमरस, ताको पान करात ।
पर प्रवेश नहीं रच है, केवल मग्न सुजात।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुगुप्तात्मने नम अर्घ्यं० ।।५५८।।

निजकारक निज कर्णकर, निजपद निज आधार ।
सिद्ध कियो निज रस लियो, पूजत हूँ हितकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धात्मने नम अर्घ्यं० ।।५५९।।

नित्य उदे बिन अस्त हो, पूरण द्युति घन आप ।
ग्रहै न राहू जास शशि, सो हो हर सन्ताप।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरुपप्लवाय नम अर्घ्यं० ।।५६०।।

लियो अपूरव लाभ को, अचल भये सुखधाम ।
पूज रचैं जे भावसो, पूण होइ सब काम।।
ॐ ह्रीं अर्हं महोदर्काय नम अर्घ्यं० ।।५६१।।

है प्रशस तिहुं लोक मे, तुम पुरुषार्थ उपाय ।
पायो धम सुधाम को, पूजो तिनके पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं महोपायाय नम अर्घ्यं० ।।५६२।।

गणधरादि जे जगतपति, तथा सुरेन्द्र सुरीश ।
तुमको पूजत भक्ति करि, चरण धरैं निजशीश।।
ॐ ह्रीं अर्हं जगत्पितामहाय नम अर्घ्यं० ।।५६३।।

तुम ही सों भवि सुख लहैं, तुम बिन दुख ही पाय ।
नेमरूप यही है तुम्हे, महानाम हम गाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाकारुणिकाय नमः अर्घ्यं० ।।५६४।।

महान्गुण की खान हो, राजत हो गुण रूप ।
लौकिकगुण औगुण नहीं, तब ही द्वेष सरूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।५६५।।

जन्म-मरण आदिक महा, क्लेश ताहि निरवार ।
परमसुखी तुमको नमूं, पाऊं भवदधि पार।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्लेशनिवारणाय नमः अर्घ्यं० ।।५६६।।

रागादिक नहीं भाव है, द्रव्य नेह नही धार ।
दोउ मलिनता छाडिय, स्वच्छ भये निरधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाशुचये नमः अर्घ्यं० ।।५६७।।

आधि व्याधि नही रोग है, नित प्रसन्न निज भाव ।
आकुलता बिन शांति-सुख धारत सहज सुभाव।।
ॐ ह्रीं अर्हं अरुजे नमः अर्घ्यं० ।।५६८।।

यथायोग्य पद थिर सदा, यथायोग्य निज लीन ।
अविनाशी अविकार है, नमैं 'सन्त' चित दीन।।
ॐ ह्रीं अर्हं सदायोगाय नमः अर्घ्यं० ।।५६९।।

स्वामृत रसको पान करि, भोगत है निज स्वाद ।
पर-निमित्त चाहे नहीं, करै न तिनको याद।।
ॐ ह्रीं अर्हं सदाभोगाय नमः अर्घ्यं० ।।५७०।।

निर-उपाधि निज धर्म मे, सदा रहैं सुखकार ।
रत्नत्रय की मूरती, अनागार आगार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सदाधृतये नमः अर्घ्यं० ।।५७१।।

रागद्वेष नही मूल है, है मध्यस्थ स्वभाव ।
ज्ञाता दृष्टा जगतके, परसो नही लगाव।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमौदासीनाय नमः अर्घ्यं० ।।५७२।।

आदि अन्त बिन वहत है, परम धाम निरधार ।
अन्तर परत न एक छिन, निज सुख परमाधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं शाश्वताय नमः अर्घ्यं० ।।५७३।।

मूल देह आकृति रहै, हो नहिं अन्य प्रकार ।
सत्याशन इम नाम है, पूज भक्ति लगाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्याशने नम अर्घ्यं० ।।५७४।।

परम शांति सुखमय सदा, क्षोभ रहित निज स्वामि ।
तीनलोक प्रति शांतिकर, तुम पद करूं प्रणामि ।।

ॐ ह्रीं अर्हं शातिनायकाय नम अर्घ्यं० ।।५७५।।

काल अनन्तानन्त रुलि रुल्या जीव जग माहिं ।
आत्मज्ञान नहीं पाइया तुम पाया है ताहि ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपूर्वविद्याय नम अर्घ्यं० ।।५७६।।

यथाख्यात चारित्र को जाना मानो भेद ।
आत्मज्ञान केवल यही पायो पद निरभेद ।।

ॐ ह्रीं अर्हं योगज्ञायकाय नम अर्घ्यं० ।।५७७।।

धर्ममूर्ति सवरूप हो राजत शुद्ध स्वभाव ।
धर्ममूर्ति तुमको नमू पाऊ मोक्ष उपाव ।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममूर्तये नम अर्घ्यं० ।।५७८।।

स्व-आतम परदेश मे अन्य मिलाप न होय ।
आकृति है निजधर्म की निज विभाव को खोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मदेहाय नम अर्घ्यं० ।।५७९।।

स्वामी हो निज-आत्म के अन्य सहाय न पाय ।
स्वयं-सिद्ध परमातमा हम पर होउ सहाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मेशाय नम अर्घ्यं० ।।५८०।।

निज पुरुषारथ करि लियो, मोक्ष परम सुखकार ।
करना था सो करि चुके, तिष्ठ सुख आधार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृतकृताय नम अर्घ्यं० ।।५८१।।

असाधारण तुम गुण धरत इन्द्रादिक नहीं पाय ।
लोकोत्तम वह मान्य हो वदूं हूं युग पाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं गुणात्मकाय नम अर्घ्यं० ।।५८२।।

तुम गुण परम प्रकाशकर, तीन लोक विख्यात ।
सूर्य समान प्रताप धर, निरावरण उघरात ।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणगुणप्रकाशाय नम अर्घ्यं० ।।५८३।।

समय मात्र नही आदि है, वहै अनादि अनत ।
तुम प्रवाह इस जगत मे, तुम्हैं नमै नित 'सत'।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्निमेषाय नम अर्घ्यं० ।।५८४।।

योग-द्वार बिन करम रज, चढे न निज परदेश ।
ज्यो बिन छिद्र न जल ग्रहै, नवका शुद्ध हमेश।।
ॐ ह्रीं अर्हं निराश्रवाय नम अर्घ्यं० ।।५८५।।

परम ब्रह्म पद पाइयो, पूरण ज्ञान प्रकाश ।
तीन लोक के जीव सब, पूजे चरण निवास।।
ॐ ह्रीं अर्ह महाब्रह्मपतये नम अर्घ्यं० ।।५८६।।

द्रव्य पर्याथिव दोऊ नय, साधत वस्तु स्वरूप ।
गुण अनत अवरोधकर, कहत सरूप अनूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुनयतत्त्वज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।५८७।।

सूर्य समान प्रकाश कर, कर्म दुष्ट हनि सूर ।
शरण गही तुम चरण की, करो ज्ञान दुति पूरि।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूरये नम अर्घ्यं० ।।५८८।।

तुम सम और न जगत मे, सत्यारथ तत्त्वज्ञ ।
सम्यग्ज्ञान प्रभावते, हो अदोष सर्वज्ञ।।
ॐ ह्रीं अर्हं तत्त्वज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।५८९।।

तीन लोक हितकार हो, शरणागति प्रतिपाल ।
भव्यनि मन आनद करि बदू दीनदयाल।।
ॐ ह्रीं अर्हं महामित्राय नम अर्घ्यं० ।।५९०।।

समता सुखमे मगन हे, राग द्वेष सक्लेश ।
ताको नाशि सुखी भये, युग-युग जिओ जिनेश।।
ॐ ह्रीं अर्हं साम्यभावधारकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।५९१।।

निरावरण निज ज्ञान मे, सशय विभ्रम नाहि ।
सम्यग्ज्ञान प्रकाशते, वस्तु प्रमाण दिखाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्रक्षीणबन्धाय नम अर्घ्यं० ।।५९२।।

एक रूप परकाश कर, दुर्बाध भाव विनाशाय ।
पर-निमित्त लवलेश नही, बदू तिनके पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नम अर्घ्यं० ।।५९३।।

मुनि विशेष स्नातक कहे परमातम परमेश ।
तुम ध्यावत निर्वाण पद पावे भविक हमेश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्नातकाय नमः अर्घ्यं० ।।५९४।।

पंच प्रकार शरीर विन, दीप्त रूप निज रूप ।
सुर मुनि मन रमणीय हो, पूजत हूँ शिवभूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनगाय नमः अर्घ्यं० ।।५९५।।

द्वय प्रकार बन्धन रहित, नित हो मोक्ष सरूप ।
भविजन बंध विनाशकर, देहो मोक्ष अनूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्वाणाय नमः अर्घ्यं० ।।५९६।।

सुगुण रत्नकी राशके, आप महा भण्डार ।
अगम अथाह विराजते बहु भाव विचार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सागराय नमः अर्घ्यं० ।।५९७।।

मुनिजन ध्यावें भावयुत, महा मोक्षप्रद साध ।
सिद्ध भये मैं नमत हूँ चहुँ सुख आराध ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महासाधवे नमः अर्घ्यं० ।।५९८।।

ज्ञान ज्योति प्रतिभास मे, रागादिक मल नाहि ।
विशद अनूपम लसत हो दीप्तज्योति शिवराह ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विमलाभाय नमः अर्घ्यं० ।।५९९।।

द्रव्य-भाव मल नाशकर शुद्ध निरंजन देव ।
निज-आतम मे रमत हो, आश्रय विन स्वयमेव ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मने नमः अर्घ्यं० ।।६००।।

शुद्ध अनन्त चतुष्ट गुण, धरत तथा शिवनाथ ।
श्रीधर नाम कहात हो, हरिहर नावत माथ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधराय नमः अर्घ्यं० ।।६०१।।

मरणादिक भयसे सदा, रक्षित है भगवान ।
स्वयं प्रकाश विलास मे, राजत सुख की खान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं मरणभयनिवारणाय नमः अर्घ्यं० ।।६०२।।

राग-द्वेष नही भावमे शुद्ध निरंजन आप ।
ज्यो के त्यो तुम थिर रहो तनक न व्यापै पाप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अमलभावाय नमः अर्घ्यं० ।।६०३।।

भवसागर ते पार हो, पहुँचे शिवपद तीर ।
भाव सहित तिन नमत हूं, लहूं न पुनि भव पीर ।।
ॐ ह्रीं अर्हं उद्धरणाय नमः अर्घ्यं ।।६०४।।

अग्निदेव या अग्नि दिश, ताके देव विशेष ।
ध्यावत है तुम चरणयग, इन्द्रादिक सुर शेष ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अग्निदेवाय नमः अर्घ्यं० ।।६०५।।

विषय-कषाय न रच हैं, निरावरण निरमोह ।
इन्द्री मनको दमन कर, बन्दूं सुन्दर सोह ।।
ॐ ह्रीं अर्हं संयमाय नमः अर्घ्यं० ।।६०६।।

मोक्षरूप कल्याण कर सुख-सागर के पार ।
महादेव स्वर्शपति धर, विद्या तिय भरतार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शिवाय नमः अर्घ्यं० ।।६०७।।

पुष्प भेट धर जजत सुर, निज कर अर्जुलि जोड ।
कमलार्पित कर-कमल मे, धरै लक्ष्मी होड ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पांजलयें नमः अर्घ्यं० ।।६०८।।

पूरण ज्ञानानंदमय अजर अमर अमलान ।
अविनाशी ध्रुव अखिलपद, अधिकारी सब मान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शिवगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।६०९।।

रोग शोक भय आदि विन, राजत नित आनन्द ।
खेद रहित रति-अरति विन, विकसत पूरणचंद्र ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमोत्साहजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।६१०।।

जो गुण शक्ति अनन्त हैं, ते सब ज्ञान मझार ।
एकनिष्ठ आकृति विविध, मोहत हैं अविकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।।६११।।

परम पूज्य परधान है, परम शक्ति आधार ।
परम पुरुष परमातमा, परमेश्वर सुखकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं० ।।६१२।।

दोष अपोष अरोष हो, सम सन्तोष अलोप ।
पंच परम पद धारियत, भविजन को परिपोष ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नमः अर्घ्यं० ।।६१३।।

पंचकल्याणक युक्त हैं समोसरण ले आदि ।
इन्द्रादिक थुतिकरत हैं तुम गुणगण अनुवाद ।।

ॐ ह्रीं अर्हं यशोधराय नम अर्घ्यं० ।।६१४।।

कृष्ण नाम तीर्थेश हैं भावी काल कहाय ।
सुमति गोपियन संग रमत निजलीला दरशाय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कृष्णाय नम अर्घ्यं० ।।६१५।।

सम्यग्ज्ञान जु सुमति धर मिथ्या मोह निवार ।
परहितकर उपदेश है निश्चय वा व्यवहार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानमतये नम अर्घ्यं० ।।६१६।।

वीतराग सर्वज्ञ हैं उपदेशक हितकार ।
सत्यारथ परमाण कर अन्य सुमति दातार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धमतये नम अर्घ्यं० ।।६१७।।

मायाचार न शल्य है शुद्ध सरल परिणाम ।
ज्ञानानन्द स्वलक्षमी भोगत हैं अभिराम ।।

ॐ ह्रीं अर्हं भद्राय नम अर्घ्यं० ।।६१८।।

शान्ति स्वभाव सजन्म ले अन्त समय निरवाण ।
भविजन आनन्दकार हैं सब कल्पना हान ।

सब कुवादि एकातको नाश कियो छिन माहि ।
भविजन मन सशयहरण, और लोक मे नाहि।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुमतये नम अर्घ्यं० ।।६२४।।

भविजन मधुकर कमल हो, धरत सुगन्ध अपार ।
तीन लोक मे विस्तरी, सुयश नाम को धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मप्रभाय नम अर्घ्यं० ।।६२५।।

पारस लोहा हेम करि, तुम भव बन्ध निवार ।
मोक्ष हेतु तुम श्रेष्ठ गुण, धारत हो हितकार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुपार्श्वाय नम अर्घ्यं० ।।६२६।।

तीन लोक आताप हर, मुनि-मन-मोदन चन्द ।
लोक प्रिय अवतार हो, पाऊ सुख तुम बन्द।।
ॐ ह्रीं अर्हं चन्द्रप्रभाय नम अर्घ्यं० ।।६२७।।

मन मोहन सोहन महा, धारैं रूप अनूप ।
दरशत मन आनन्द हो, पायो निज रस कूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुष्पदताय नम अर्घ्यं० ।।६२८।।

भव भव दाह निवार कर, शीतल भए जिनेश ।
मानो अमृत सींचियो, पूजत सदा सुरेश।।
ॐ ह्रीं अर्हं शीतलनाथाय नम अर्घ्यं० ।।६२९।।

तीर्थकर श्रेयास हम, देहो श्री शुभ भाग ।
श्रीसु अनन्त चतुष्ट हो, हरो सकल दुरभाग।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रेयाशनाथाय नम अर्घ्यं० ।।६३०।।

त्रस नाडी या लोक मे, तुम ही पूज्य प्रधान ।
तुमको पूजत भावसो, पाऊ सुख निरवाण।।
ॐ ह्रीं अर्हं वासुपूज्याय नम अर्घ्यं० ।।६३१।।

द्रव्य भाव मल रहित है, महा मुनिन के नाथ ।
इन्द्रादिक पूजत सदा, नमू पदाबुज माथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विमलनाथाय नम अर्घ्यं० ।।६३२।।

जाको पार न पाइयो, गणधर और सुरेश ।
थकित रहे असमथ करि, प्रणमे 'सन्त' हमेश।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनतनाथाय नम अर्घ्यं० ।।६३३।।

अनागार आगारके, उद्धारक जिनराज ।
धर्मनाथ पणमू सदा, पाऊ शिवसुख साज ।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।६३४।।

शांतिरूप पर शांतिकर कर्म दाह विनिवार ।
शांति हेतु वन्दू सदा, पाऊ भवदधि पार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं शांतिनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।६३५।।

क्षुद्र जीव सब जीव के, रक्षक हे तीर्थेश ।
शरणागत प्रतिपालकर, ध्याव सदा सुरेश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।६३६।।

पूजनीक सब जगतके, मंगलकारक देव ।
पूजन हैं हम भावसों विनशै अघ स्वयमेव ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अरनाथाय नमः अर्घ्यं० ।।६३७।।

अतुल वीर्य तन धरत है, अतुल वीर्य मन बीच ।
कामिन वश नहिं रचभी, जैसे जल बिच मीच ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महावीराय नम अर्घ्यं० ।।६४४।।

मोह सुभटकू पटकियो, तीन लोक परशस ।
श्रेष्ठ पुरुष तुम जगत मे, कियो कर्म विध्वश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुवीराय नम अर्घ्यं० ।।६४५।।

मिथ्या-मोह निवारि करि, महा सुमति भण्डार ।
शुभ मारग दरशाइयो, शुभ अरु अशुभ विचार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सन्मतये नम अर्घ्यं० ।।६४६।।

निज आश्रय निर्विघ्न नित, निज लक्ष्मी भण्डार ।
चरणाम्वुज नित नमत हम, पुष्पाजलि शुभ धार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महापद्माय नम अर्घ्यं० ।।६४७।।

हो देवाधीदेव तुम, नमत देव चउ भेव ।
धरो अनन्त चतुष्टपद, परमानन्द अभेव ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुरदेवाय नम अर्घ्यं० ।।६४८।।

निरावर्ण आभास है, ज्यों बिन पटल दिनेश ।
लोकालोक प्रकाश करि, सुन्दर प्रभा जिनेश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुप्रभाय नम अर्घ्यं० ।।६४९।।

आतमीक जिन गुण लिये, दीप्ति सरूप अनूप ।
स्वय ज्योति परकाशमय, बन्दत हूँ शिवभूप ।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयप्रभाय नम अर्घ्यं० ।।६५०।।

निजशक्ती निज करण हैं, साधन बाह्य अनेक ।
मोहसुभट क्षयकरन को, आयुध राशि विवेक ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वायुधाय नम अर्घ्यं० ।।६५१।।

जय-जय सुरधुनि करत हैं, तथा विजय निधिदेव ।
तुम पद जे नर नमत हैं, पावै सुख स्वयमेव ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जयदेवाय नम अर्घ्यं० ।।६५२।।

तुम सम प्रभा न औरमे, धरो ज्ञान परकाश ।
नाथ प्रभा जगमे भये, नमत मोहतम नाश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रभावदेवाय नम अर्घ्यं० ।।६५३।।

रक्षक हो षट्काय के, दया सिन्धु भगवान ।
शशिसमजिय आह्लाद करि, पूजनीकर्धरिध्यान ।।

ॐ ह्रीं अर्ह उदकाय नम अर्घ्यं० ।।६५४।।

समाधान सवके करै, द्वादश सभा मझार ।
सर्व अर्थ परकाशकर, दिव्य ध्वनि सुखकार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रश्नकीर्तये नम अर्घ्यं० ।।६५५।।

काहू विधि वाधा नही, कवहू नही व्यय होय ।
उन्नति रूप विराजते, जयवन्तो जग सोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं जयाय नम अर्घ्यं० ।।६५६।।

केवलज्ञान स्वभाव मे, लोकत्रय इक भाग ।
पूरणता को पाइयो, छांडि सकल अनुराग ।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णबुद्धाय नम अर्घ्यं० ।।६५७।।

पर आलिगन भाव तज, इच्छा क्लेश विडार ।
निज सतोष सुखी सदा, पर सवध निवार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं निजानदसतुष्टजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६५८।।

मोहादिक मल नाशकर, अतिशय करि अमलान ।
विमल जिनेश्वर मै नमू, तीन लोक परधान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं विमलप्रभाय नम अर्घ्यं० ।।६५९।।

स्वपद मे नित रमत है, कभी न आरति होय ।
अतुलवीर्य विधि जीतियो, नमू जोर कर दोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं महावलाय नम अर्घ्यं० ।।६६०।।

द्रव्य भाव मल कर्म है, ताको नाश करान ।
शुद्ध निरजन हो रहे, ज्यो वादल विन भान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्मलाय नम अर्घ्यं० ।।६६१।।

तुम चित्राम अरूप है, सुर नर साधु अगम्य ।
निराकार निर्लेप है, धारत भाव असम्य ।।

ॐ ह्रीं अर्हं चित्रगुप्ताय नम अर्घ्यं० ।।६६२।।

मग्न भये निज आत्म मे, पर पद मे नहि वास ।
लक्ष अलक्ष विराजते, पूरो मन की आश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधिगुप्ताय नम अर्घ्यं० ।।६६३।।

निज गुण आतम ज्ञान है, पर सहाय नही चाह ।
स्वय भाव परकाशियो, नमत मिटै भव दाह।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयभुवे नम अर्घ्यं० ।।६६४।।

मन मोहन सोहन महा, मुनि मन रमण अनन्द ।
महातेज परताप है, पूरण ज्योति अमन्द।।
ॐ ह्रीं अर्हं कदर्पाय नम अर्घ्यं० ।।६६५।।

विजय लक्ष्मी नाथ हैं, जीते कर्म प्रधान ।
तिनको पूजै सर्व जग, मै पूजो धरि ध्यान।।
ॐ ह्रीं अर्हं विजयनाथाय नम अर्घ्यं० ।।६६६।।

गणधरादि योगीश जे, विमलाचारी सार ।
तिनके स्वामी हो प्रभू, राग द्वेष मल जार।।
ॐ ह्रीं अर्हं विमलेशाय नम अर्घ्यं० ।।६६७।।

दिव्य अनक्षर ध्वनि खिरै, सर्व अर्थ गुणधार ।
भविजन मन सशय हरन, शुद्ध बोध आधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं दिव्यवादाय नम अर्घ्यं० ।।६६८।।

नही पार जा वीर्य को, स्वाभाविक निरधार ।
सो सहजै गुण धरत हो, नमू लहू भवपार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तवीर्याय नम अर्घ्यं० ।।६६९।।

पुरुषोत्तम परधान हो, परम निजानद धाम ।
चक्रपती हरिवल नमे, मैं पूजू निष्काम।।
ॐ ह्रीं अर्हं महापुरुषदेवाय नम अर्घ्यं० ।।६७०।।

शुभ विधि सब आचरण है, सर्व जीव हितकार ।
श्रेष्ठ वृद्ध अति शुद्ध है, नमू करो भवपार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सुविधये नम अर्घ्यं० ।।६७१।।

है प्रमाण करि सिद्ध जे, ते है बुद्धि प्रमाण ।
सो विशुद्धमय रूप हैं, सशय तमको भान।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्ञापरिमाणाय नम अर्घ्यं० ।।६७२।।

समय प्रमाण निमित तनी, कभी अन्त नही होय ।
अविनाशी थिर पद धरैं, मैं प्रणमू हूँ सोय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अव्ययाय नम अर्घ्यं० ।।६७३।।

प्रतिपालक जगदीश है, सर्वमान परमान ।
अधिक शिरोमणि लोकगुरु, पूजत नित कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुराणपुरुषाय नम अर्घ्यं० ।।६७४।।

धर्म सहायक हो प्रभू, धर्म मार्ग की लीक ।
शुभ मर्यादा बध प्रति, करण चलावन ठीक।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मसारथये नम अर्घ्यं० ।।६७५।।

शिवमारग दिखलाय कर, भविजन कियो उद्धार ।
धर्म सुयश विस्तार कर, बतलायो शुभ सार।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवकीर्तिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६७६।।

मोह अन्ध हन मूर्य हो, जगदीश्वर शिवनाथ ।
मोक्षमार्ग परकाश कर, नमू जोर जुग हाथ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मोहाधकारविनाशकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६७७।।

मन इन्द्री व्यापार बिन, भाव रूप विध्वश ।
ज्ञान अतीन्द्रिय धरत हो, नमत नशै अघवश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अतीन्द्रियज्ञानरूपजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६७८।।

पर उपदेश परोक्ष बिन, साक्षात् परतक्ष ।
जानत लोकालोक सब, धारै ज्ञान अलक्ष।।

ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६७९।।

व्यापक हो तिहुँ लोक मे, ज्ञान ज्योति सब ठौर ।
तुमको पूजत भावसो, पाऊ भवदधि ओर।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वभूतये नम अर्घ्यं० ।।६८०।।

इन्द्रादिक कर पूज्य हो, मुनिजन ध्यान धराय ।
तीन लोक नायक प्रभू, हम पर होउ सहाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वनायकाय नम अर्घ्यं० ।।६८१।।

तुम देवन के देव हो, महादेव है नाम ।
बिन ममत्व शुद्धात्मा, तुम पद करू प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं दिगम्बराय नम अर्घ्यं० ।।६८२।।

सर्व व्यापि कुमती कहैं, करो भिन्न विश्राम ।
जगसो तजी समीपता, राजत हो शिवधाम।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरन्तरजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६८३।।

हितकारी अति मिष्ट है, अर्थ सहित गम्भीर ।
पियताणी कर पोरवते, द्वादश सभासु तीर।।
ॐ ह्रीं अर्हं मिष्टदिव्यध्वनिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६८४।।

भवसागर के पार हो, सुखसागर गलतान ।
भव्य जीव पूजत चरन, पावे पद निरवान।।
ॐ ह्रीं अर्हं भयातकाय नम अर्घ्यं० ।।६८५।।

नही चलाचल भाव ह, पाप कलाप न लेश ।
दृढ परिणत निज आत्मरति, पूजू श्री मुक्तेश।।
ॐ ह्रीं अर्हं दृढव्रताय नम अर्घ्यं० ।।६८६।।

असख्यात नय भेद ह, यथायोग्य वच द्वार ।
तिन नयको जानो नृविध, महा निपुण मति धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं नयात्तुगाय नम अर्घ्यं० ।।६८७।।

क्रोधादिक सु उपाधि ह, आत्म विभाव कराय ।
तिनको त्याग विशुद्ध पद, पायो पूजू पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कलकाय नम अर्घ्यं० ।।६८८।।

ज्यो शशि-किरण उद्योत है, पूरण प्रभा प्रकाश ।
कलाधार मौंहि सु इम, पूजत अध-तम नाश।।
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णकलाधराय नम अर्घ्यं० ।।६८९।।

जन्म-मरण को आदि ले, जग मे क्लेश महान ।
तिसके हता हो प्रभू, भोगत सुख निर्वाण।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वक्लेशहराय नम अर्घ्यं० ।।६९०।।

ध्रुव स्वरूप थिर है सदा, कभी अन्त नही होय ।
अव्याबाध विराजते, पर सहाय को खोय।।
ॐ ह्रीं अर्हं ध्रौव्यरूपजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६९१।।

व्यय उत्पाद सुभाव है, ताको गौण कराय ।
अचल अनत स्वभाव मे, तीन लोक सुखदाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षयानतस्वभावात्मकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।६९२।।

स्व ज्ञानादि चतुष्ट पद, हृदय माहि विकसाय ।
सोहत है शुभ चिन्ह करि, भवि आनद कराय।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सलाछनाय नम अर्घ्यं० ।।६९३।।

धर्म रीति परगट कियो, युग की आदि मझार ।
भविजन पोषे सुख सहित, आदि धर्मअवतार।।

ॐ ह्रीं अर्हं आदिब्रह्मणे नम अर्घ्यं० ।।६९४।।

चतुरानन परसिद्ध है, दर्श होय चहुँ ओर ।
चउ अनुयोग बखानते, सब दुख नासौ मोर।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्मुखाय नम अर्घ्य० ।।३९५।।

जगत जीव कल्याण कर, धर्म मर्याद बखान ।
ब्रह्म ब्रह्म भगवान हो, महामुनी सब मान।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मणे नम अर्घ्यं० ।।६९६।।

प्रजापति प्रतिपाल कर, ब्रह्मा विधि करतार ।
मन्मय इन्द्री वश करन, बन्दू सुख आधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विधात्रे नम अर्घ्यं० ।।६९७।।

तीन लोक की लक्षमी, तुम चरणाम्बुज वास ।
श्रीपति श्रीधर नाम शुभ, दिव्यासन सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं कमलासनाय नम अर्घ्यं० ।।६९८।।

बहुरि न जग मे भ्रमण है, पचम गति मे वास ।
नित्य अमरता पाइयो, जरा-मृत्यु को नाश।।

ॐ ह्रीं अर्ह अजन्मिने नम अर्घ्य० ।।६९९।।

पाच काय मुद्गलमई, तामे एक न होय ।
केवल आत्म प्रदेश ही, तिष्ठत है दुख खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मभुवे नम अर्घ्यं० ।।७००।।

लोक शिखर सुखसो रहै, ये ही प्रभुता जान ।
धारत है तिहुं लोकमे, अधिक प्रभा परधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरनिवासिने नम अर्घ्य० ।।७०१।।

अधिक प्रताप प्रकाश हे, मोह तिमिर को नाश ।
शिवमग दिखलावत सही, सूरज सम प्रतिभास।।

ॐ ह्रीं अर्ह सुरज्येष्ठाय नम अर्घ्यं० ।।७०२।।

प्रजापाल हित धार उर, शुभ मारग वतलाय ।
मत्यारथ ब्रह्मा कहै, तुमरे वन्दू पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रजापतये नम अर्घ्यं० ।।७०३।।

गर्भ समय षड्मास ही, प्रथम इन्द्र हर्षाय ।
रत्नवृष्टि नित करत हे, उत्तम गर्भ कहाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं हिरण्यगर्भाय नम अर्घ्यं० ।।७०४।।

तुम हि चार अनुयोग के, अग कहे मुनिराज ।
तुमसो पूरण श्रुत सही, नान्तर मगल काज।।
ॐ ह्रीं अर्हं वेदागाय नम अर्घ्यं० ।।७०५।।

तुम उपदेश थकी कहे, द्वादशाग गणराज ।
पूरण ज्ञाता हो तुम्ही, प्रणमू मे शिवकाज।।
ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णवेदज्ञानाय नम अर्घ्यं० ।।७०६।।

पार भये भवमिधु के, तथा सुवर्ण ममान ।
उत्तम निर्मल थुति धरें, नमत कर्ममल हान।।
ॐ ह्रीं अर्हं भवसिधुपारगनाय नम अर्घ्यं० ।।७०७।।

सुखाभास पर-निमितते, पर-उपाधिते होत ।
स्वत सुभाव धरो सही, सत्यानन्द उद्योत।।
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यानन्दाय नम अर्घ्यं० ।।७०८।।

मोहादिक परवल महा, सो इसको तुम जीत ।
ओरन की गिनती कहाँ, तिष्ठो सदा अभीत।।
ॐ ह्रीं अर्हं अजयाय नम अर्घ्यं० ।।७०९।।

दिव्य रत्नमय ज्योति हो, अमित अकप अडोल ।
मनवाँछित फलदाय हो, राजत अखय अमोल।।
ॐ ह्रीं अर्हं मनवाछितफलदायकाय नम अर्घ्यं० ।।७१०।।

देह धार जीवन मुकत, परमातम भगवान ।
सूर्य समान सुदीप्त धर, महा ऋषीश्वर जान।।
ॐ ह्रीं अर्हं जीवनमुक्तजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७११।।

स्व-भय आदिकसे परे, पर-भय आदि निवार ।
पर उपाधि विन नित सुखी, वन्दू भाव सम्हार।।
ॐ ह्रीं अर्हं शतानदाय नम अर्घ्यं० ।।७१२।।

ईश्वर हो तिहुँ लोक के, परम पुरुष परधान ।
ज्ञानानद स्वलक्ष्मी, भोगत नित अमलान।।
ॐ ह्रीं अर्हं विष्णवे नम अर्घ्यं० ।।७१३।।

असुर काम अर हास्य इन, आदि कियो विध्वश ।
महाश्रेष्ठ तुमको नमू, रहै न अघ को अश।।
ॐ ह्रीं अर्हं असुरध्वसिने नम अर्घ्यं० ।।७२४।।

सुधाधार द्यो अमरपद, धर्म फूल की बेल ।
शुभ मति गोपिन सग मे, हमे राख निज गेल।।
ॐ ह्रीं अर्हं माधवाय नम अर्घ्यं० ।।७२५।।

विषय कषाय स्ववश करी, बलि वश कियो जुकाम ।
महा बली परसिद्ध हो, तुम पद करू प्रणाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं बलिबन्धनाय नम. अर्घ्यं० ।।७२६।।

तीन लोक भगवान हो, निजपर के हितकार ।
सुरनर पशु पूजत सदा, भक्ति भाव उर धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अधीक्षजाय नम अर्घ्यं० ।।७२७।।

हितमित मिष्ट प्रिय वचन, अमृत सम सुखदाय ।
धर्म मोक्ष परगट करन, वदू तिनके पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं हितमितप्रियवचनजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७२८।।

निज लीला मे मगन है, साचा कृष्ण सु नाम ।
तीन खड तिहुं लोक के, नाथ करू परणाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं केशवाय नम अर्घ्यं० ।।७२९।।

सूखे तृण मम की जगत की, विभव जान करवास ।
धरैं सरलता जोग मे, करैं पाप को नाश।।
ॐ ह्रीं अर्हं विष्टरश्रवसे नम अर्घ्यं० ।।७३०।।

श्री कहिये आतम विभव, ताकरि हो शुभ नीक ।
सोहत सुन्दर वदन करि, सज्जनचित रमणीक।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवत्सवाछनाय नम अर्घ्यं० ।।७३१।।

सर्वोत्तम अति श्रेष्ठ है, जिन सन्मति थुति योग ।
धर्म मोक्षमारग कहैं, पूजत सज्जन लोग।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमतये नम अर्घ्यं० ।।७३२।।

अविनाशी अविकार है, नही चिगे निज भाव ।
स्वय सु आश्रय रहत हैं, मै पूजू धर चाव।।
ॐ ह्रीं अर्हं अच्युताय नम अर्घ्यं० ।।७३३।।

नाशी लौकिक कामना, निर-इच्छुक योगीश ।
नार श्रगार न मन बसै, बदत हूँ लोकीश।।
ॐ ह्रीं अर्हं नरकान्तकाय नम अर्घ्यं० ।।७३४।।

व्यापक लोकालोक मे, विष्णु रूप भगवान ।
धर्मरूप तरु लहिलहै, पूजत हूँ धरि ध्यान।।
ॐ ह्रीं अर्हं विश्वसेनाय नम अर्घ्यं० ।।७३५।।

धर्मचक्र मन्मुख चलै, मिथ्यामति रिपु घात ।
तीन लोक नायक प्रभू, पूजत हूँ दिनरात।।
ॐ ह्रीं अर्हं चक्रपाणये नम अर्घ्यं० ।।७३६।।

सुभग सुरूपी श्रेष्ठ अति, जन्म धर्म अवतार ।
तीन लोक की लक्ष्मी, है एकत्र उदार।।
ॐ ह्रीं अर्हं पद्मनाभाय नम अर्घ्यं० ।।७३७।।

मुनिजन आदर जोग हो, लोक सराहन योग ।
सुर नर पशु आनन्दकर, सुभग निजातम भोग।।
ॐ ह्रीं अर्ह जनार्दनाय नम अर्घ्यं० ।।७३८।।

सब देवन के देव हो, महादेव विख्यात ।
ज्ञानामृत सुखसो खिरै, पीवत भवि सुख पात।।
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकण्ठाय नम अर्घ्यं० ।।७३९।।

पाप-पुञ्ज का नाश करि, धर्म रीत प्रगटाय ।
तीन लोक के अधिपती, हम पर दया कराय।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकाधिपशकराय नम अर्घ्यं० ।।७४०।।

स्वय व्यापि निज ज्ञान करि, स्वय प्रकाश अनूप ।
स्वय भाव परमातमा, बन्दू स्वय सरूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयप्रभवे नम अर्घ्यं० ।।७४१।।

सब देवन के देव हो, महादेव है नाम ।
स्व पर सुगन्धित रूप-हो, तुम पद करू प्रणाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकपलाय नम अर्घ्यं० ।।७४२।।

धर्मध्वजा जग फरहरै, सब जग माने आन ।
सब जग शीश नमे चरण, सब जगको सुखदान।।
ॐ ह्रीं अर्हं वृषभकेतवे नम अर्घ्यं० ।।७४३।।

जन्म-जरा-मृत जीतिकें, निश्चल अव्यय रूप ।
सुरासों राजत नित्य हो वन्दूं हूं शिवभूप ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मृत्युञ्जयाय नम अर्घ्यं० ।।७४४।।

सब इन्द्री-मन जीति के वर्ग दीनो तम व्यर्थ ।
स्वपर ज्ञान इन्द्री जग्यौ, नमूं सदा शिव अर्थ ।।

ॐ ह्रीं अर्हं विरूपाक्षाय नम अर्घ्यं० ।।७४५।।

सुन्दररूप मनोज्ञ है, मुनिजन मन वशकार ।
असाधारण शुभ अणु लगे, केवलज्ञान मझार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं कामदेवाय नम अर्घ्यं० ।।७४६।।

सम्यग्दर्शन ज्ञान अरु, चारित्र एक सरूप ।
धर्म मार्ग दरशात हैं, लोकत रूप अनूप ।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोचनाय नम अर्घ्यं० ।।७४७।।

निजानन्द स्व-लक्ष्मी, ताके हो भरतार ।
शिवकामिनि नित भोगते, परमरूप सुखकार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नम अर्घ्यं० ।।७४८।।

जे अज्ञानी जीव हैं, तिन प्रति बोध करान ।
रक्षक हो षट्काय के, तुम सम कौन महान ।।

ॐ ह्रीं अर्हं पशुपतये नम अर्घ्यं० ।।७४९।।

रमण भाव निज शक्ति सों, धरैं तथा दुति काम ।
कामदेव तुम नाम है, महाशक्ति बल धाम ।।

ॐ ह्रीं अर्हं शम्बरारये नम अर्घ्यं० ।।७५०।।

कामदाह को दम कियो, ज्यों अगनी जलधार ।
निजआतम आचरण नित, महाशील श्रियसार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिपुरान्तकाय नम अर्घ्यं० ।।७५१।।

निज सन्मति शुभ नारसों, मिले रले अरधाग ।
ईश्वर हो परमातमा, तुम्हें नमूं सर्वांग ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अर्द्धनारीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।७५२।।

नहीं चिगे उपयोग मे, महा कठिन परिणाम ।
महावीर्य धारक नमूं, तुमको आठों जाम ।।

ॐ ह्रीं अर्हं रुद्राय नम अर्घ्यं० ।।७५३।।

गुण-पर्याय अनन्त युत, वस्तु स्वय परदेश ।
स्वय काल स्व क्षेत्र हो, स्वय सुभाव विशेष ।।
ॐ ह्रीं अर्ह भावाय नम अर्घ्यं० ।।७५४।।

सूक्षम गुप्त स्वगुण धरैं, महा शुद्धता धार ।
चार ज्ञानधर नहीं लखैं, मैं पूजूं सुखकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं गर्भकल्याणकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७५५।।

शिव तिय सग सदा रमे, काल अनन्त न ओर ।
अविनाशी अविकार हो महादेव शिरमौर ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सदाशिवाय नम अर्घ्यं० ।।७५६।।

जगत काय तुमसो करैं, सब तुमरे आधीन ।
सबके तुम सरदार हो, आप धनी जगदीश ।।
ॐ ह्रीं अर्ह जगत्कर्त्रे नम अर्घ्यं० ।।७५७।।

महा घोर अँधियार है, मिथ्या मोह कहाय ।
जग मे शिवमग लुप्त था ताको तुम दरशाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अन्धकारातकाय नम अर्घ्यं० ।।७५८।।

सतति पक्ष जुदी नही, नही आदि नहि अन्त ।
सदा काल विन काल तुम, राजत हो जयवत ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनादिनिधनाय नम अर्घ्यं० ।।७५९।।

तीन लोक आराध्य हो, महा यज्ञ को ठाम ।
तुमको पूजन पाइये, महा मोक्ष सुखधाम ।।
ॐ ह्रीं अर्ह हराय नम अर्घ्यं० ।।७६०।।

महा सुभट गणराम हो, सेवत है तिहुं लोक ।
शरणागत प्रतिपालकर, चरणाबुज दू धोक ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महासेनाय नम अर्घ्यं० ।।७६१।।

गणधरादि सेवे चरण, महा गणपती नाम ।
पार करो भव-सिंधुते, मगलकर सुखधाम ।।
ॐ ह्रीं अर्ह महागणपतिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७६२।।

चारसघ के नाथ हो, तुम आज्ञा शिर धार ।
धम मार्ग प्रवर्त्त कर, बन्दू पाप निवार ।।
ॐ ह्रीं अर्ह गणनाथाय नम अर्घ्यं० ।।७६३।।

मोह-सर्प के दमन को, गरुड़ समान कहाय ।
सबके आदरकार हो नमूं गणपति सुखदाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाविनायकाय नमः अर्घ्यं० ।।७६४।।
जे मोही अज्ञान हैं तिनसों हो प्रतिकूल ।
धर्माधर्म विरोध कर धरूं शीश पग धूल ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विरोधविनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।७६५।।
विपति दल संसार में तिनको वार न पार ।
इन तुम ही जानी सही नाहि तजो दुखभार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विपद्विनाशकजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।७६६।।
सब विद्या के बीज हो तुम वाणी परकाश ।
सकल अविद्या सब तम इक छिन में हो नाश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं द्वादशात्मने नमः अर्घ्यं० ।।७६७।।
पर-निमित्त न जीव के, रागादिक परिणाम ।
तिनसे त्याग स्वभाव में राजत हैं सुखधाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं विभावरहिताय नमः अर्घ्यं० ।।७६८।।
अन्तर-बाहिर प्रबल रिपु जीत सके नहीं कोय ।
निर्भय अचल सुथिर रहे कोटि शिवालय सोय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं दुर्जयाय नमः अर्घ्यं० ।।७६९।।
घन सम गर्जन वचन हैं, भागे कुनय कुवादि ।
प्रबल प्रकट सबीय हैं, धर सुगुण इत्यादि ।।
ॐ ह्रीं अर्हं बृहद्भावाय नमः अर्घ्यं० ।।७७०।।
पाप सघन वन दाह दव, महादेव शिव नाम ।
अतुल प्रभा धारो महा, तुम पद करूं प्रणाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं चित्रभानवे नमः अर्घ्यं० ।।७७१।।
तुम अजन्म बिन मृत्यु हो, सदा रहो अविकार ।
ज्यों के त्यों मणि दीप सम, पूजत हूँ मनधार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अजरामरजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।७७२।।
सम्यगादि स्वगुण सहित, तिन करि हो आराध्य
तुमको वंदों भाव सों, मिटे सकल दुख व्याध्य ।
ॐ ह्रीं अर्हं द्विजाराध्याध्याय नमः अर्घ्यं० ।।७७३।।

निज आतम निज ज्ञान है, तामे रुचि परतीत ।
पर पद सौ है अरूचिता, पाई अक्षय जीत।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुधाशोचिषे नम अर्घ्यं० ।।७७४।।

जन्म-मरण को आदि लै, सकल रोग को नाश ।
दिव्य औषधि तुम धरौ, अमर करन सुखरास।।

ॐ ह्रीं अर्हं औषधीशाय नम अर्घ्यं० ।।७७५।।

पूरण गुण परकाश कर, ज्यो शशि करण उद्योत ।
मिथ्यातप निरवारते, दर्शित आनद होत।।

ॐ ह्रीं अर्हं कमलानिधये नम अर्घ्यं० ।।७७६।।

सूर्य प्रकाश धरै सही, धर्म मार्ग दिखलाय ।
चार सघ नायक प्रभू, वदू तिनके पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं नक्षत्रनाथाय नम अर्घ्यं० ।।७७७।।

भव-तप-हर हो चन्द्रमा, शीतलकार कपूर ।
तुमको जो नर सेवते, पाप कर्म हो दूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुभ्राशवे नम अर्घ्यं० ।।७७८।।

स्वर्गादिक की लक्ष्मी, तासो भी जु ग्लान ।
स्वै-पद मे आनद है, तीन लोक भगवान।।

ॐ ह्रीं अर्हं सौम्यभावरताय नम अर्घ्यं० ।।७७९।।

पर-पदार्थ को इष्ट लखि, होत नही अभिमान ।
हो अबध इस कर्मते, स्व-आनद निधान।।

ॐ ह्रीं अर्हं कुमुदबाधवाय नम अर्घ्यं० ।।७८०।।

सब विभाव को त्याग करि, हैं स्वधर्म मे लीन ।
ताते प्रभुता पाइयो, है नहिं बन्धाधीन।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरतये नम अर्घ्यं० ।।७८१।।

आकुलता नही लेश है, नही रहै चित भग ।
सदा सुखी तिहुं लोक मे, चरन नमू सब अग।।

ॐ ह्रीं अर्हं आकुलतारहितजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७८२।।

शुभ-परिणति प्रकटाय के, दियो स्वर्गको दान ।
धर्म-ध्यान तुमसे चले, सुमरत हो शुभ ध्यान।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७८३।।

कर्मविषै सस्कार विधान, तीनलोकमे विस्तर जान।।सिद्धसमूह०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धसमूहेभ्यो नम अर्घ्यं० ।।७९३।।

धर्म उपदेश देत सुखकार, महाबुद्ध तुम हो अवतार।।सिद्धसमूह०।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धाय नम अर्घ्यं० ।।७९४।।

तीन लोकमे हो शशि सूर, निज किरणावलि करि तम चूर।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं तमोभेदने नम अर्घ्यं० ।।७९५।।

धर्ममार्ग उद्योत करान, सब कुवादकी कर हो हान।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्ममार्गदर्शकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७९६।।

सर्व शास्त्र मिथ्या वा साच, तुम निज दृष्टि लियो है जाच ।
सिद्धसमूह जजू मनलाय, भव भवमे सुख-सपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रनिर्णायकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७९७।।

पचमगति बिन श्रेष्ठ न और, सो तुम पाय त्रिजग शिरमौर।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं पचमगतिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७९८।।

श्रेष्ठ सुमति तुमही हो एक, शिवमारग की जानो टेक।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठसुमतिदात्रिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।७९९।।

वृष मजिद भली विधि थाप, भविजन मेटे सब सताप।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुगतये नम अर्घ्यं० ।।८००।।

श्रेष्ठ करै कल्याण सु ज्ञान, सम्पूरण सकल्प निशान।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठकल्याणकारकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८०१।।

निज ऐश्वर्य धरो सपूर्ण, विभूति बिन हो अघ चूण।।सिद्ध०।। ।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमेश्वरीयसम्पन्नाय नम अर्घ्यं० ।।८०२।।

श्रेष्ठ शुद्ध निजब्रह्म रमाय, मगलमय पर मगलदाय।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं परब्रह्मणे नम अर्घ्यं० ।।८०३।।

श्री जिनराज कर्मरिपु जीति, पूजनीक हैं सबके मीत।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं कर्मारिजिताय नम अर्घ्यं० ।।८०४।।

षट् पदार्थ नव तत्त्व कहाय, धर्म-अधर्म भलीविधि गाय।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वशास्त्रज्ञजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८०५।।

है शुभ लक्षण मय परिणाम, पर उपाधिको नहिं कछु काम।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सुलक्षणजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८०६।।

सत्य ज्ञानमय है तुम बोध, हेय अहेय बतायो सोध।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सर्वबोधसत्वाय नम अर्घ्यं० ।।८०७।।

इष्टानिष्ट न राग न द्वेष, ज्ञाता दृष्टा हो अविशेष।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्विकल्पाय नम अर्घ्यं० ।।८०८।।

दूजो तुम सम नहिं भगवान, धर्माधर्म रीति बतलान ।
सिद्धसमूह जजू मनलाय, भव भवमे सुखसपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं अद्वितीयबोधजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८०९।।

महादुखी ससारी जान, तिनके पालक हो भगवान।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकपालाय नम अर्घ्यं० ।।८१०।।

जगविभूति निरइच्छुक होय, मानरहित आतमरत सोय।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरसरतजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८११।।

ज्यो शशि तापहरे अनिवार, अतिशय सहित शांति करतार।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं शातिदात्रे नम अर्घ्यं० ।।८१२।।

हो निरभेद अछेद अशेष, सब इकसार स्वय परदेश।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं अभेद्याछेद्य-जिनाय नम अर्घ्यं० ।।८१३।।

मायाकृत सम पाचो काय, निजसो भिन्न लखो मत भाय।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं पचस्कधमयात्मदृशे नम अर्घ्यं० ।।८१४।।

बीती बात देख ससार, भव-तन-भोग विरक्त उदार।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं भूतार्थभावनासिद्धाय नम अर्घ्यं०।।८१५।।

धर्माधर्म जान सब ठीक, मोक्षपुरी दिखलायो लीक।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुराननजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८१६।।

वीतराग सर्वज्ञ सु देव, सत्यवाक वक्ता स्वयमेव।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यवक्त्रे नम अर्घ्यं० ।।८१७।।

मन-वच-काय योग परिहार, कर्मवर्गणा नांहि लगार।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं निराश्रवाय नम अर्घ्यं० ।।८१८।।

चार अनुयोग कियो उपदेश, भव्य जीव सुख लहत हमेश।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्भूमिकशासनाय नम अर्घ्यं० ।।८१९।।

काहू पदसो मेल न होय, अन्वय रूप कहावै सोय।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं अन्वयाय नम अर्घ्यं०।।८२०।।

हो समाधिमे नित लवलीन, विन आश्रय नित ही स्वाधीन ।
सिद्धसमूह जजू मन लाय, भव-भवमे सुख-सपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं समाधि-निमग्नजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८२१।।

लोक भाल हो तिलक अनूप, हो लोकोत्तम शेष स्वरूप।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकभालतिलकजिनाय नम अर्घ्यं०।।८२२।।

अक्षाधीन हीन है शक्त, तिसको नाश करी निज व्यक्त।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं तुच्छभावभिदे नम अर्घ्यं०।।८२३।।

जीवादिक षट् द्रव्य सुजान, तिनकौ भलीभांति है ज्ञान।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं षड्द्रव्यदृशे नम अर्घ्यं०।।८२४।।

विकलरूप नय सकल प्रमाण, वस्तु भेद जानो स्वज्ञान।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं सकलवस्तुविज्ञात्रे नम अर्घ्यं० ।।८२५।।

सव पदार्थ दर्शन तुम वैन, सशयहरण करण सुख चैन।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं षोडशपदार्थवादिने नम अर्घ्यं० ।।८२६।।

वर्णन करि पचासतिकाय, भव्य जीव सशय विनशाय।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं पचास्तिकायबोधकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८२७।।

प्रतिबिंवित हो आरसि माहि, ज्ञानाध्यक्ष जान हो ताहि।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानाध्यक्ष जिनाय नम अर्घ्यं० ।।८२८।।

जामे ज्ञान जीव को एक, सो परकासो शुद्ध विवेक।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं समवायसार्थकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८२९।।

भक्तनि के हो साध्य सु कर्म, अन्तिम पौरुष साधन धर्म।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं भक्तैकसाधनधर्माय नम अर्घ्यं० ।।८३०।।

वाकी रहो न गुण शुभ एक, ताको स्वाद न हो प्रत्येक।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरवशेषगुणामृताय नम अर्घ्यं० ।।८३१।।

नय सुपक्ष करि साख्य कुवाद, तुम निरवाद पक्षकर वाद।।सिद्ध०।।

ॐ ह्रीं अर्हं साख्यादिपक्षविध्वसकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८३२।।

सम्यग्दर्शन है तुम वैन, वस्तु परीक्षा भाखो ऐन ।
सिद्धसमूह जजू मनलाय, भव-भवमे सुख-सपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्ह० समीक्षकाय नम अर्घ्यं।।८३३।।

धमशास्त्र के हो कर्तार, आदि पुरुष धारो अवतार।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं आदिपुरुषजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८३४।।
नय साधत नैयायिक नाम, सो तुम पक्ष धरो अभिराम।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं पचविंशतितत्त्ववेदकाय नम अर्घ्यं० ।।८३५।।
स्वपर चतुष्क वस्तु को भेद, व्यक्ताव्यक्त करो निरखेद।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं व्यक्ताव्यक्तज्ञानविदे नम अर्घ्यं०।।८३६।।
दर्शन ज्ञान भेद उपयोग, चेतनतामय है शुभ योग।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानचैतन्यभेददृशे नम अर्घ्यं० ।।८३७।।
स्वनवेदन शुद्ध धराय, अन्य जीव हैं मलिन कुभाय।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वसवेदनज्ञानवादिने नम अर्घ्यं० ।।८३८।।
द्वादश सभा करै सतकार, आदर योग वेन सुखकार।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं समवसरण—द्वादशसभापतये नम अर्घ्यं० ।।८३९।।
आगम अक्ष अनक्ष प्रमान, तीन भेदकर तुम पहचान।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिप्रमाणाय नम अर्घ्यं० ।।८४०।।
विशद शुद्ध मति हो साकार, तुमको जानत हैं सु विचार।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं अध्यक्षप्रमाणाय नम अर्घ्यं० ।।८४१।।
नयसापेक्षक हैं शुभ वैन, हैं अशस सत्यारथ ऐन।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्याद्वादवादिने नम अर्घ्यं० ।।८४२।।
लोकालोक क्षेत्रके माँहि, आप ज्ञान है सब दरशाहिं।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं क्षेत्रज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।८४३।।
अन्तर-वाह्य लेश नही और, केवल आतम मई अघोर।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धात्मजिनाय नम अर्घ्यं०।।८४४।।

अन्तिम पौरुप माध्यो मार, पुरुष नाम पायो सुखकार ।
सिद्धसमूह जजू मनलाय, भव-भव मे सुखसपतिदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुरुषात्मजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८४५।।
चहुँगतिमे नरदेह मझार, मोक्ष होत तुम नर आकार।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं नराधिपाय नम अर्घ्यं० ।।८४६।।
दर्श ज्ञान चेतन की लार, निरावर्ण तुम हो अविकार।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।८४७।।

भावन वेद वेद नरदेह, मोक्ष रूप है नहि सन्देह।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षरूपजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८४८।।

सत्य यथारथ हो सब ठीक, स्वय सिद्ध राजो शुभ नीक।।सिद्ध०।।
ॐ ह्रीं अर्हं अकृत्रिम जिनाय नम अर्घ्यं० ।।८४९।।

दोहा

जाकरि तुमको जानिये, सो है अगम अलक्ष ।
निर्गुण यातैं कहत है, भव-भयतैं हम रक्ष।।
ॐ ह्रीं अर्हं निर्गुणाय नम अर्घ्यं० ।।८५०।।

चेतनमय हैं अष्टगुण, सो तुम मे इक नाम ।
शुद्ध अमूरत देव हो, स्व-प्रदेश चिदराम।।
ॐ ह्रीं अर्हं अमूर्ताय नम अर्घ्यं० ।।८५१।।

उमापती त्रिभुवन धनी, राजत भू भरतार ।
निजानन्द को आदि ले, महा तुष्ट निरधान।।
ॐ ह्रीं अर्हं उमापतये नम अर्घ्यं० ।।८५२।।

व्यापक लोकालोक मे, ज्ञान-ज्योति के द्वार ।
लोकशिखर तिष्ठत अचल, करो भक्त उद्धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सर्वगताय नम अर्घ्यं० ।।८५३।।

योग प्रबन्ध निवारियो, राग द्वेष निरवार ।
देहरहित निष्कप हो, भये अक्रिया सार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अक्रियाय नम अर्घ्यं० ।।८५४।।

सर्वोत्तम अति उच्च गति, जहाँ रहो स्वयमेव ।
देव वास है मोक्ष थल, हो देवन के देव।।
ॐ ह्रीं अर्हं देवेष्टजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८५५।।

भवसागर के तीर हो, अचलरूप अस्थान ।
फिर नही जगमे जन्म है, राजत हो सुखथान।।
ॐ ह्रीं अर्हं तटस्थाय नम अर्घ्यं० ।।८५६।।

ज्यो के त्यो नित थिर रहो, अचलरूप अविनाश ।
निजपदमय राजत सदा, स्वय ज्योति परकाश।।
ॐ ह्रीं अर्हं कूटस्थाय नम अर्घ्यं० ।।८५७।।

तत्त्व-अतत्त्व प्रकाशियो, ज्ञाता हो सब भास ।
ज्ञानमूर्ति हो ज्ञानघन, ज्ञान ज्योति अविनाश।।
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञात्रे नम अर्घ्यं० ।।८५८।।

पर-निमित्त के योगतैं, व्यापै नही विकार ।
निज स्वरूप मे थिर सदा, हो अबाध निरधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं निराबाधाय नम. अर्घ्यं० ।।८५९।।

चारवाक वा साख्यमत, झूठी पक्ष धरात ।
अल्प मोक्ष नही होत है, राजत हो विख्यात।।
ॐ ह्रीं अर्हं निराभावाय नम अर्घ्यं० ।।८६०।।

तारण तरण जिहाज हो, अतुल शक्ति के नाथ ।
भव वारिधि से पारकर, राखो अपने साथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं भववारिधिपारकाय नम अर्घ्यं० ।।८६१।।

वन्ध-मोक्ष की कहन है, सो भी हे व्यवहार ।
तुम विवहार अतीत हो, शुद्ध वस्तु निरधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं बंधमोक्षरहिताय नम अर्घ्यं० ।।८६२।।

चारो पुरुषारथ विषै, मोक्ष पदारथ सार ।
तुम साधो परधान हो, सब मे सुख आधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षसाधनप्रधानजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८६३।।

कर्म-मैल प्रक्षाल कैं, निज आतम लवलाय ।
हो प्रसन्न शिवथल विषैं, अन्तरमल विनशाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मव्याधिविनाशकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८६४।।

निज सुभाव निज वस्तुता, निज सुभाव मे लीन ।
वन्दू शुद्ध स्वभावमय, अन्य कुभाव मलीन।।
ॐ ह्रीं अर्हं निजस्वभावस्थितजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८६५।।

निज स्वरूप परकाश है, निरावर्ण ज्यो सूर ।
तुमको पूजत भावसो मोह कर्म को चूर।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणसूर्यजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८६६।।

निज भावनते मोक्ष हो, ते ही भाव रहात ।
स्वैगुण स्वैपरजाय मे, थिरता भाव धरात।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वरूपरूढ़जिनाय नम अर्घ्यं० ।।८६७।।

सब कुभाव को जीतियो, शुद्ध भये निरमूल ।
शुद्धातम कहलात हो, नमत नशै अघ शूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रकृतिप्रियाय नम अर्घ्यं० ।।८६८।।

निज सन्मति के सन्मती, निज वुध के वुधवान ।
शुभ ज्ञाता शुभ ज्ञान हो, पूजत मिथ्या हान।।

ॐ ह्रीं अर्हं विशुद्धसन्मतिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८६९।।

कर्म प्रकृति को अश विन, उत्तर हो या मूल ।
शुद्धरूप अति तेज घन, ज्यो रवि विव अधूल।।

ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धरूपजिनाय नम अर्घ्य० ।।८७०।।

आदि पुरुष आदीश जिन, आदि धर्म अवतार ।
आदि मोक्ष दातार हो, आदि कर्म हरतार।।

ॐ ह्रीं अर्हं आद्यवेदसे नम अर्घ्यं०।।८७१।।

नहिं विकार आवै कभी, रहो सदा सुखरूप ।
रोग शोक व्यापै नही, निवसैं सदा अनूप।।

ॐ ह्रीं निर्विकृतये नम अर्घ्यं०।।८७२।।

निज पौरुष करि सूर्य सम, हरौ तिमिर मिथ्यात ।
तुम पुरुषारथ सफल है, तीन लोक विख्यात।।

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यातिमिरविनाशकाय नम अर्घ्यं० ।।८७३।।

वस्तु परीक्षा तुम बिना, और झूठ कर खेद ।
अध कूप मे आप सर, डारत है निरभेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं मीमासकाय नम अर्घ्यं० ।।८७४।।

होनहार या हो लई, या पइये इस काल।।
अस्तिरूप सब वस्तु हैं, तुम जानो यह हाल।।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिसर्वज्ञाय नम अर्घ्यं० ।।८७५।।

जिनवाणी जिनसरस्वती, तुम गुणसो परिपूर ।
पूज्य योग तुमको कहैं, करैं मोह मद चूर।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रुतपूज्याय नम अर्घ्यं० ।।८७६।।

स्वय स्वरूप आनन्द हो, निजपद रमन सुभाव ।
सदा विकसित ही रहैं, बन्दू सहज सुभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदोत्सवाय नम अर्घ्यं० ।।८७७।।

मन इन्द्री जानत नही, जाको शुद्ध स्वरूप ।
वचनातीत स्वगुणसहित, अमल अकाय अरूप ।।

ॐ ह्रीं अर्हं परोक्षज्ञानागम्याय नम अर्घ्यं० ।।८७८।।

जो श्रुतज्ञान कला धरै, तिनको हो तुम इष्ट ।
तुमको नित प्रति ध्यावते, नाशे सकल अनिष्ट ।।

ॐ ह्रीं अर्हं इष्टपाठकाय नम अर्घ्यं० ।।८७९।।

निज समरथ कर साधियो, निज पुरुषारथ सार ।
सिद्ध भये सब काम तुम, सिद्ध नाम सुखकार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धकर्मक्षयाय नम अर्घ्यं० ।।८८०।।

पृथ्वी जल अगनी पवन, जानत इनके भेद ।
गुण अनन्त पर्याय सब, सो विभाग परिछेद ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मिथ्यामतनिवारकाय नम अर्घ्यं० ।।८८१।।

निज सवेदन ज्ञान मे, देखत होय प्रत्यक्ष ।
रक्षक हो तिहुँ लोक के, हम शरणागत पक्ष ।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रत्यक्षैकप्रमाणाय नम अर्घ्यं० ।।८८२।।

विद्यमान शिवलोक मे, स्वगुण पर्य समेत ।
कहैं अभाव कुमती मती, निजपर धोका देत ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अस्तिमुक्ताय नम अर्घ्यं० ।।८८३।।

तुम आगम के मूल हो, अपर गुरू है नाम ।
तुम वानी अनुसार ही, भये शास्त्र अभिराम ।।

ॐ ह्रीं अर्हं गुरुश्रुतये नम अर्घ्यं० ।।८८४।।

तीन लोक के नाथ हो, ज्यो सुरगण मे इन्द्र ।
निजपद रमन स्वभाव धर, नमे तुम्हैं देवेन्द्र ।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकनाथाय नम अर्घ्यं० ।।८८५।।

सब स्वभाव अविरुद्ध हैं, निजपर घातक नाहिं ।
सहचारी परिणाम हैं, निवसत हैं तुम माहिं ।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्वभावाविरुद्धजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८८६।।

ब्रह्मज्ञान को वेद कर, भये शुद्ध अविकार ।
पूरण ज्ञानी हो नमू, लहो वेद को सार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मविदे नम अर्घ्यं० ।।८८७।।

शब्द ब्रह्म के ज्ञानते, आतम तत्त्व विचार ।
शुक्लध्यान मैं लय भए, हो अतर्क अविचार ।।
ॐ ह्रीं अर्ह शब्दाद्वैतब्रह्माणे नम अर्घ्य।।८८८।।

सूक्ष्म तत्त्व परकाशकर, सूक्षम कर्म अच्छेद ।
मोक्षमार्ग परगट कियो, कहो सु अन्तर भेद ।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मतत्त्वप्रकाशजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८८९।।

तीन शतक त्रेसठ जु है, सव मानै पाखण्ड ।
धर्म यथारथ तुम कहो, तिन सवको करि खड ।।
ॐ ह्रीं अर्ह पाखण्डखण्डकाय नम अर्घ्य० ।।८९०।।

कर्णरूप करतार हो, कोइक नयक द्वार ।
सुरमुनि करि पूजत भए, माननीक सुखकार ।।
ॐ ह्रीं अर्ह नयाधीनजे नम अर्घ्यं० ।।८९१।।

केवलज्ञान उपाइके, तदनन्तर हो मोक्ष ।
साक्षात् वडभाग सैं, पूजू इहाँ परोक्ष ।।
ॐ ह्रीं अर्ह अन्तकृते नम अर्घ्य० ।।८९२।।

शरणागतको पार कर, देत मोक्ष अभिराम ।
तारण-तरण सु नाम है, तुम पद करू प्रणाम ।।
ॐ ह्रीं अर्हं पारकृते नम अर्घ्यं० ।।८९३।।

भव-समुद्र गम्भीर है, कठिन जासको पार ।
निज पुरुषारथ करि तिरे, गहो किनारो सार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं तीरप्राप्ताय नम अर्घ्यं० ।।८९४।।

एक बार जो शरण गहि, ताके हो हितकार ।
याते सब जग जीव के, हो आनन्द दातार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परहितस्थिताय नम अर्घ्य० ।।८९५।।

रत्नत्रय निज नेत्र सो, मोक्षपुरी पहुँचात ।
महादेव हो जगत पितु, तीन लोक विख्यात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं रत्नत्रयनेत्रजिनाय नम अर्घ्य० ।।८९६।।

तीन लोक के नाथ हो, महा ज्ञान भण्डार ।
सरल भाव, विन कपट हो, शुद्ध-बुद्ध अविकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं शुद्धबुद्धजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८९७।।

निश्चै वा व्यवहार के, हो तुम जाननहार ।
वस्तुरूप निज साधियो, पूजत हूँ निरधार।।
ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानकर्मसमुच्चयिने नम अर्घ्यं० ।।८९८।।

सुर-नर-पशु न अघावते, सभी ध्यावते ध्यान ।
तुमको नित ही ध्यावते, पावैं सुख निर्वाण।।
ॐ ह्रीं अर्हं नित्यतृप्तजिनाय नम अर्घ्यं० ।।८९९।।

कर्म-मैल प्रक्षाल करि, तीनो योग सम्हार ।
पाप-शैल चकचूर कर, भये अयोग सुखार।।
ॐ ह्रीं अर्हं पापमलनिवारकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९००।।

सूरज हो निज ज्ञानधन, ग्रहण उपद्रव नाहिं ।
बेखटके शिवपथ सब, दीखत है जिस माहिं।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणज्ञानघनजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९०१।।

जोग योग सकल्प-सब, हरो देह को साथ ।
रहो अकंपित थिर सदा, मैं नाऊ निज माथ।।
ॐ ह्रीं अर्हं उच्छिन्नयोगाय नम अर्घ्यं० ।।९०२।।

जोग सुथिरता को हरै, करै आगमन कर्म ।
तुम तासौं निर्लेप हो, नशौ मोह मद शर्म।।
ॐ ह्रीं अर्हं योगकृतनिर्लेपाय नम अर्घ्यं० ।।९०३।

निज आतममे स्वस्थ हैं, स्वपद योग रमाय ।
निर्भय तुम निर-इच्छु हो, नमूजोर कर पाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वस्थलयोगरतजिनाय नम अर्घ्यं।।९०४।।

महादेव गिरिराज पर, जन्म समै जिम सूर ।
योग किरण विकसात हो, शोक तिमिर का दूर।।
ॐ ह्रीं अर्हं गिरिसयोगजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९०५।।

सूक्षम निज परदेश तन, सूक्षम क्रिया परिणाम ।
चितवत मन नहिं वच चलैं, राजत हो शिवधाम।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मीकृतवपुक्रियाय नम अर्घ्यं० ।।९०६।।

सूक्ष्म तत्त्व परकाश हैं, शुभ प्रिय वचनन द्वार ।
भविजन को आनदकरि, तीन जगत गुरुसार।।
ॐ ह्रीं अर्हं सूक्ष्मवाक्मितयोगाय नम अर्घ्यं० ।।९०७।।

कर्म रहित शुद्धात्मा, निश्चल क्रिया ग्यान ।
स्वप्रदेश मय थिर सदा, कृतकृत्य सुख पान ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निष्कर्मशुद्धात्मजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९०८।।

विद्यमान प्रत्यक्ष ह, चेतनराय प्रकाश ।
कर्म-कालिमासो रहित, पूजन हो अघ नाश ।।
ॐ ह्रीं अर्हं भूताभिव्यक्तचेतनाय नम अर्घ्यं० ।।९०९।।

गृहस्थाचरण सुभेद करि, धमरूप रसराश ।
एक तुम्ही हो धर्म करि, पायो शिवपुर बास ।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मरासजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९१०।।

सूर्य प्रकाशन मोह तम, हरता हो शुभ पथ ।
पाप क्रिया विन राजते, महायती निर्ग्रथ ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमहसाय नम अर्घ्यं० ।।९११।।

वन्ध रहित सर्वस्व करि, निमल हो निर्लेप ।
शुद्ध सुवर्ण दिपे सदा, नही मोह मल लेप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमसवराय नम अर्घ्यं० ।।९१२।।

मेघ पटल विन सूर्य जिम, दीप्त अनन्त प्रताप ।
निरावरण तुम शुद्ध हो, पूजत मिटि है पाप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नम अर्घ्यं० ।।९१३।।

कर्म अश सव झर गिरे, रहो न एक लगार ।
परम शुद्धता धारकै, तिष्ठो हो अविकार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमनिर्जराय नम अर्घ्यं० ।।९१४।।

तेज प्रचण्ड प्रभाव है, उदय रूप परताप ।
अन्य कुदेव कुआगिया, जुग-जुग धरत कलाप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं प्रज्वलितप्रभावाय नम अर्घ्यं० ।।९१५।।

भये निरर्थक कर्म सब, शक्ति भई है हीन ।
तिनको जीते छिनक मे, भये सुखी स्वाधीन ।।
ॐ ह्रीं अर्हं समस्तकर्मक्षयजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९१६।।

कर्म प्रकृतिक रोग सम, जानो हो क्षयकार ।
निजस्वरूप आनन्द मे, कहो विगार निहार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं कर्मविस्फोटकाय नम अर्घ्यं० ।।९१७।।

हीन शक्ति परमाद को, आप कियो हैं अन्त ।
निज पुरुषार्थ सुवीर्य यो, सुखी भए सु अनत।।

ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यजिनाय नम अर्घ्यं०।।९१८।।

एकरूप रस स्वाद मे, निर आकुलित रहाय ।
विविधरूप रस पर निमित, ताको त्याग कराय।।

ॐ ह्रीं अर्हं एकाकाररसास्वादाय नम अर्घ्यं० ।।९१९।।

इन्द्री मन के सब विषय, त्याग दिये इक लार ।
निजानन्दमे मगन है, छाडो जग व्यापार।।

ॐ ह्रीं अर्हं विश्वाकाररसाकुलिताय नम अर्घ्यं० ।।९२०।।

पर सम्बन्धी प्राण बिन, निज प्राणनि आधार ।
सदा रहै जीतव्यता, जरा मृत्यु को टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं सदाजीविताय नम अर्घ्यं० ।।९२१।।

निजरस के सागर धनी, महा प्रिय स्वादिष्ट ।
अमर रूप राजैं सदा, सुर मुनि के हो इष्ट।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमृताय नम अर्घ्यं० ।।९२२।।

पूरण निज आनन्द मे, सदा जागते आप ।
नहिं प्रमाद मे लिप्त है, पूजत विनसे पाप।।

ॐ ह्रीं अर्हं जाग्रते नम अर्घ्यं० ।।९२३।।

क्षीण ज्ञान ज्ञानावरण, करै जीवको नित्य ।
सो आवर्ण विनाशियो, रहो अस्वप्न सुवित्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं असुप्ताय नम अर्घ्यं० ।।९२४।।

स्व-प्रमाण मे थिर सदा, स्वय चतुष्टय सत्य ।
निराबाध निर्भय सुखी, त्यागत भाव असत्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वप्रमाणस्थिताय नम अर्घ्यं० ।।९२५।।

श्रमकरि नहिं आकुलित हो, सदा रहो निरखेद ।
स्वस्थरूप राजो सदा, वेदो ज्ञान अभेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं निराकुलितजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९२६।।

मन वच तन व्यापार था, तावत रहो शरीर ।
ताको नाश अकप हो, वन्दू मन धीर।।

ॐ ह्रीं अर्हं अयोगिने नम अर्घ्यं० ।।९२७।।

जितने शुभ लक्षण कहे, तुममे हैं एकत्र ।
तुमको वदू भाव सो, हरो पाप सर्वत्र।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुरशीतिलक्षणाय नम अर्घ्यं० ।।९२८।।

तुम लक्षण सूक्षम महा, इन्द्रिय विषय अतीत ।
वचन अगोचर गुण धरो, निर्गुण कहत सुनीत।।

ॐ ह्रीं अर्ह अगुणाय नम अर्घ्यं० ।।९२९।।

अगुरुलघू पर्याय के, भेद अनन्तानन्त ।
गुण अनत परिणामकरि, नित्य नमे तुम 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनतानन्तपर्यायाय नम अर्घ्यं० ।।९३०।।

राग द्वेष के नाशते, नही पूर्व सस्कार ।
निज सुभाव मे थिर रहैं, अन्य वासना टार।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वसस्कारनाशकाय नम अर्घ्यं० ।।९३१।।

गुण चतुष्ट मे वद्धता, भई अनन्तानन्त ।
तुम और इस जगत मे, सदा रहो जयवत।।

ॐ ह्री अर्हं अनन्तचतुष्टयवृद्धाय नम अर्घ्यं० ।।९३२।।

आर्ष कथित, उत्तम वचन, धर्म मार्ग अरहन्त ।
सो सव नाम कहो तुम्ही, शिवमारग के सत।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रियवचनाय नम अर्घ्यं० ।।९३३।।

महाबुद्धि के धाम हो, सूक्षम शुद्ध अवाच्य ।
चार ज्ञान नहिं गम्य हो, वस्तुरूप सो साच्य।।

ॐ ह्रीं अर्हं निरवचनीयाय नम अर्घ्यं० ।।९३४।।

सूक्ष्म ते सूक्षम विषै, तुमको है परवेश ।
आपै सूक्षम रूप हो, राजत निज परदेश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनीशाय नम अर्घ्यं० ।।९३५।।

कर्म प्रवन्ध सुघन पटल, ताकी छाय निवार ।
रविघन ज्योति प्रकट भई, पूरणता विधि धार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनण पर्यायाय नम अर्घ्यं० ।।९३६।।

निज प्रदेश मे थिर सदा, योग निमित्त निवार ।
अचल शिवालय के विर्षं, तिष्ठें सिद्ध अपार।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्थेयसे नम अर्घ्यं० ।।९३७।।

सन्तन मन प्रिय हो अति, सज्जन वल्लभ जान ।
मुनि जन मन प्यारे सही, नमत होत कल्याण।।

ॐ ह्रीं अर्हं प्रेष्ठय नम अर्घ्यं० ।।९३८।।

काल अनन्ताकाल लौं, करैं शिवालय वास ।
अव्यय अविनाशी सुथिर, स्वय ज्योति परकाश।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्थिरजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९३९।।

स्वै-आतम मे वास है, रुलत नही ससार ।
ज्यो के त्यो निश्चल सदा, वदत भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मतत्त्वनिष्ठय नम अर्घ्यं० ।।९४०।।

सुभग सरावन योग्य हैं, उत्तम भाव धराय ।
तीन लोक मे सार है, मुनिजन वंदित पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रेष्ठभवधारकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९४१।।

सव के अग्रेसर भये, सव के हो सिरताज ।
तुमसे वडा न और है, सवके कर हो काज।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्येष्ठय नम अर्घ्यं० ।।९४२।।

स्व-प्रदेश निष्कम्प है, द्रव्य-भाव विधि नाश ।
इष्टानिष्ट निमित धरै, निज आनन्द विलास।।

ॐ ह्रीं अर्हं निष्कपप्रदेशजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९४३।।

उचित क्षमादिक अर्थ सव, सत्य सुन्याय सुलब्ध ।
तिन सवके स्वामी नमू,पूरण सुखी सुअब्ध।।

ॐ ह्रीं अर्हं उत्तमक्षमादिगुणाब्धिजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९४४।।

महा कठिन दु:शक्य है, यह संसार निकास ।
तुम पायो पुरुषार्थ करि, लहो स्वलब्धि अवास ।।

ॐ ह्रीं अर्ह पूज्यपादजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।९४५।।

परमारथ निज गुण कहे, मोक्ष प्राप्ति मे होय ।
स्वारथ इन्द्रिय जन्य है, सो तुम इनको खोय ।।

ॐ ह्रीं अर्ह परमार्थगुणनिधानाय नमः अर्घ्यं० ।।९४६।।

पर-निमित्त या भेद करि या उपचरित कहाय ।
सो तुम मे सब लय भये मानो सुप्त कराय ।।

ॐ ह्रीं अर्ह व्यवहारसुप्ताय नमः अर्घ्यं० ।।९४७।।

स्व-पद मे नित रमन है अप्रमाद अधिकाय ।
निज गुण सदा प्रकाश है अतुल वली नमू पाय ।।

ॐ ह्रीं अर्ह अतिजागरूकाय नमः अर्घ्यं० ।।९४८।।

सकल उपद्रव मिटि गये, जे थे परकी साथ ।
निभय सदा सुखी भये, वदू नमि निजमाथ ।।

ॐ ह्रीं अर्ह अतिसुस्थिताय नमः अर्घ्यं० ।।९४९।।

कहैं हुवे हो नेममे, परमाराध्य अनादि ।
तुम महातमा जगत के, और कुदेव कुवादि ।।

ॐ ह्रीं अर्ह उदितोदितमाहात्म्याय नमः अर्घ्यं० ।।९५०।।

तत्त्वज्ञान अनुकूल सब, शब्द प्रयोग विचार ।
तिसके तुम अध्याय हो अथ प्रकाशन हार ।।

ॐ ह्रीं अर्ह तत्त्वज्ञानानुकूलजिनाय नमः अर्घ्यं० ।।९५१।।

ना काहू सो जन्म हो ना काहू सो नाश ।
स्वयंसिद्ध विन पर-निमित्त, स्व-स्वरूप परकाश ।।

ॐ ह्रीं अर्ह अकृत्रिमाय नमः अर्घ्यं० ।।९५२।।

अप्रमाण अत्यन्त है, तुम सन्मति परकाश ।
तेजरूप उत्सव मइ, पाप तिमिर को नाश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अमेयमहिम्ने नमः अर्घ्यं० ।।९५३।।

रागादिक मल को हरैं, तनक नही आवास ।
महा विशुद्ध अत्यत हैं, हरो पाप-अहि-डास।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तशुद्धाय नम अर्घ्यं० ।।९५४।।

स्वयंसिद्ध भरतार हो, शिवकामनि के सग ।
रमण भाव निज योग मे, मानो अति आनद।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धिस्वयराय नम अर्घ्यं० ।।९५५।।

विविध प्रकार न धरत है, हैं अजन्म अव्यक्त ।
सूक्षम सिद्ध समान है, स्वय स्वभाव सुव्यक्त।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धानुजाय नम अर्घ्यं० ।।९५६।।

मोक्षरूप शुभ वास के, आप मार्ग निरखेद ।
भविजन सुलभ गमन करैं, जगत वास को छेद।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवपुरीपथाय नम अर्घ्यं० ।।९५७।।

गुण समूह अत्यन्त हैं, कोई न पावै पार ।
थकित रहे श्रुतकेवली, निज बल कथन अगार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तगुणसमूहजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९५८।।

इक अवगाह प्रदेश मे, हो अवगाह अनन्त ।
पर उपाधि निग्रह कियो, मुख्य प्रधान अनत।।

ॐ ह्रीं अर्हं पर-उपाधिनिग्रहकारकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९५९।।

स्वयंसिद्ध निज वस्तु हो, आगम इन्द्रिय ज्ञान ।
कर्त्तादिक लक्षण नही, स्वय स्वभाव प्रमान।।

ॐ ह्रीं अर्हं स्वयसिद्धजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९६०।।

हो प्रछन्न इन्द्रिय अगम, प्रकट न जाने कोय ।
सकल अगुण को लय कियो, निज आतम मे खोय।।

ॐ ह्रीं अर्हं इन्द्रियागम्यजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९६१।।

निज गुण करि निज पोपियो, सकल क्षुद्रता त्याग ।
पूरण निजपद पाय करि, तिष्ठत हो वडभाग।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुष्टाय नम अर्घ्यं० ।।९६२।।

ब्रह्मचर्य पूरण धरैं निजपद रमता धार ।
सहस अठारह भेद करि शील सुभाव सु सार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टादशसहस्रशीलेश्वराय नमः अर्घ्यं० ॥९६३॥

महा पन्थ शिवपद कमल ताके दल विकसान ।
मुनि मन भ्रमर रमत सुथल गंधानंद महान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यसकुलाय नमः अर्घ्यं० ॥९६४॥

मति श्रुत अवधि त्रिज्ञान युत स्वयंबुद्ध भगवान ।
कृतयुग में मुनि व्रत धरो शिव साधक परधान ॥

ॐ ह्रीं अर्हं व्रताग्रयुग्याय नमः अर्घ्यं० ॥९६५॥

परम शुक्ल शुभ ध्यान में तुम सेवत हितकार ।
सब उपासक आपके कर्म-बंध छुटकार ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमशुक्लध्यानिने नमः अर्घ्यं० ॥९६६॥

क्षारवार इस जलधि को शीघ्र कियो तुम अन्त ।
गोखुरकार उलंघियो धरो स्व भुज बलवन्त ॥

ॐ ह्रीं अर्हं संसारसमुद्रतारकजिनाय नमः अर्घ्यं० ॥९६७॥

एक समय में गमन कर कियो शिवालय वास ।
काल अनन्त अचल रहो मेटो जग भ्रम त्रास ॥

ॐ ह्रीं अर्हं क्षेपिष्ठाय नमः अर्घ्यं० ॥९६८॥

पंचाक्षर लघु जाप में जितना लागे काल ।
अंतिम पाया शुक्ल का ध्यान बनै जग भाल ॥

ॐ ह्रीं अर्हं पञ्चलघ्वक्षरस्थितये नमः अर्घ्यं० ॥९६९॥

प्रकृति त्रयोदश शेष हैं जब तक मोक्ष न होय ।
सर्व प्रकृति थिति मेटकैं पहुँचे शिवपुर सोय ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशप्रकृतिस्थितिविनाशकाय नमः अर्घ्यं० ॥९७०॥

तेरह विधि चारित्र के तुम हो पूरण शूर ।
निज पुरुषारथ करि लियो शिवपुर आनंद पूर ॥

ॐ ह्रीं अर्हं त्रयोदशचारित्रपूर्णताय नमः अर्घ्यं० ॥९७१॥

निज सुख मे अन्तर नही, परसो हानि न होय ।
स्वस्थरूप परदेश जिन, तिन पूजत हूँ सोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अच्छेद्यजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९७२।।

निज पूजनते देत हो, शिव सपति अधिकाय ।
याते पूजन योग्य हो, पजू मन-वच-काय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं शिवदात्रीजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९७३।।

मोह महा परचण्ड बल, सकै न तुमको जीत ।
नमू तुम्हे जयवत हो, धार सु उर में प्रीत ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजयजिनाय नम अर्घ्यं० ।।९७४।।

यग विधान मे जजत ही, आप मिले निधि रूप ।
तुम समान नही और धन, हरत दरिद दुखकूप ।।

ॐ ह्रीं अर्हं याज्याय नम अर्घ्यं० ।।९७५।।

लोकोत्तर सम्पद विभव, है सरवस्व अघाय ।
तुमसे अधिक न और है, सुख विभूति शिवराय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यपरिग्रहाय नम अर्घ्यं० ।।९७६।।

तुमरो आह्वानन यजन, प्रासुक विधि से योग ।
त्रिजग अमोलिक निधि सही, देत पर्म सुखभोग ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनर्घ्यहेतवे नम अर्घ्यं० ।।९७७।।

एक देश मुनिराज हैं, सर्व देश जिनराज ।
भव-तन-भोग विरक्तता निर्ममत्त्व सुख साज ।।

ॐ ह्रीं अर्हं परमनिष्पृहाय नम अर्घ्यं० ।।९७८।।

परदुख मे दुख हो जहाँ, मोह प्रकृति के द्वार ।
दया कहैं तिसको सुमति, सो तुम मोह निवार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अत्यन्तनिर्मोहाय नम अर्घ्यं० ।।९७९।।

स्वयबुद्ध भगवान हो, सुर मुनि पूजन योग ।
बिन शिक्षा शिवमार्ग को, साधो हो धरि योग ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अशिष्याय नम अर्घ्यं० ।।९८०।।

तुम एकत्व अन्यत्व हो, परमो नही सम्वन्ध ।
स्वयसिद्ध अविरुद्ध हो, नाशो जगत प्रवन्ध ।।

ॐ ह्रीं अर्ह परसबधविनाशकाय नम अर्घ्यं० ।।९८१।।

काहू को नहि यजन करि, गुरु का नहि उपदेश ।
स्वयबुद्ध स्व-शक्ति हो, राजो शुद्ध हमेश ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षाय नम अर्घ्यं० ।।९८२।।

तुम त्रिभुवन के पूज्य हो, यजो न काहू और ।
निजहित मे रत हो सदा पर-निमित्त को छोर ।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रिभुवनपूज्याय नम अर्घ्यं० ।।९८३।।

अरहन्तादि उपासना, मोह उदयसो होय ।
स्वय ज्ञानमे लय भए, मोह कर्म को खोय ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अदीक्षकाय नम अर्घ्यं० ।।९८४।।

गौण रूप परिणाम है, मुख ध्रुवता गुण धार ।
अक्षय अविनश्वर स्वपद, स्वस्थ सुथिर अविकार ।।

ॐ ह्रीं अर्ह अक्षयाय नम अर्घ्यं० ।।९८५।।

सूक्षम शुद्ध स्वभाव है, लहै न गणधर पार ।
इन्द्र तथा अहमिन्द्र सब, अभिलाषित उरधार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं अगम्याय नम अर्घ्यं० ।।९८६।।

अचल शिवालय के विषै, टकोत्कीर्ण समान ।
सदा विराजो सुखसहित, जगत भ्रमणको हान ।।

ॐ ह्रीं अर्ह अगमकाय नम अर्घ्यं० ।।९८७।।

रमण योग छद्मस्थ के, नहि अलिंग सरूप ।
पर प्रवेश बिन शुद्धता, धारत सहज अनूप ।।

ॐ ह्रीं अर्ह अरम्याय नम अर्घ्यं० ।।९८८।।

पर-पदार्थ इच्छुक नही, इष्टानिष्ट निवार ।
सुथिर रहो निज आत्म मे, बन्दत हूँ हितधार ।।

ॐ ह्रीं अर्हं निजात्मसुस्थिराय नम अर्घ्यं० ।।९८९।।

जाको पार न पाइयो, अवधि रहित अत्यन्त ।
सो तुम ज्ञान महान है, आशा राखे 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञाननिर्भराय नम अर्घ्यं० ।।९९०।।

मुनिजन जिन सेवन करैं, पावैं निजपद सार ।
महा शुद्ध उपयोग मय, वरतत है सुखकार।।

ॐ ह्रीं अर्हं महायोगीश्वराय नम अर्घ्यं० ।।९९१।।

भाव शुद्ध परमातमा, द्रव्य शुद्ध विन देह ।
कर्म वर्गणा विन लिये, पूजत हूं धरि नेह।।

ॐ ह्रीं अर्हं द्रव्यशुद्धाय नम अर्घ्यं० ।।९९२।।

पच प्रकार शरीर को, मूल कियो विध्वश ।
स्व प्रदेशमय राजते, पर मिलाप नही अश।।

ॐ ह्रीं अर्हं अदेहाय नम अर्घ्यं० ।।९९३।।

जाको फेर न जन्म है, फिर नाही ससार ।
सो पचमगति शिवमई, पायो तुम निरधार।।

ॐ ह्रीं अर्हं अपुनर्भवाय नम अर्घ्यं० ।।९९४।।

सकल इन्द्रियाँ व्यर्थ करि, केवलज्ञान सहाय ।
सव द्रव्यनि को ज्ञान है, गुण अनन्त पर्याय।।

ॐ ह्रीं अर्हं ज्ञानैकविदे नम अर्घ्यं० ।।९९५।।

जीव मात्र निज धन सहित, गुण समूह मणि खान ।
अन्य विभाव विभव नही, महा शुद्धता जान।।

ॐ ह्रीं अर्हं जीवधनाय नम अर्घ्यं० ।।९९६।।

सिद्ध भये परसिद्ध तुम, निज पुरुषारथ साध ।
महा शुद्ध निज आत्ममय, सदा रहे निरवाध।।

ॐ ह्रीं अर्हं सिद्धाय नम अर्घ्यं० ।।९९७।।

लोकशिखर पर थिर भए, ज्यो मन्दिर मणि कुम्भ ।
निजशरीर अवगाह मे, अचल सुथान अलुम्भ।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकाग्रस्थिताय नम अर्घ्यं० ।।९९८।।

सहज निरामय भेद विन, निरावाध निस्सग ।
एक रूप सामान्य हो, निज विशेष मई अग।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्द्वन्द्वाय नम अर्घ्यं० ।।९९९।।

जे अविभाग प्रछेद हैं, इक गुण के अनन्त ।
तुममें पूरण गुण नहीं, धरो अनन्तानन्त ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतानंतगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।१०००।।

पर मिलाप नहीं लेश है, स्वप्रदेशमय रूप ।
क्षयोपशम ज्ञानी तुम्हे, जानत नहीं स्वरूप ।।
ॐ ह्रीं अर्हं आत्मरूपाय नमः अर्घ्यं० ।१००१।।

क्षमा आत्मको भाव है, क्रोध कर्मनों घात ।
सो तुम कर्म खिपाइयो क्षमा सुभाव धरात ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं० ।।१००२।।

शील सुभाव सु आत्मको, क्षोभ रहित सुखदाय ।
निर आकुलता धार है, वंदू तिनके पाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाशीलाय नमः अर्घ्यं० ।।१००३।।

शशि स्वभाव ज्यों शांतिधर, और न शांति धराय ।
आप शांति पर-शांतिकर, भवदुख दाह मिटाय ।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाशांताय नमः अर्घ्यं० ।।१००४।।

तुम सम को बलवान है जीत्यो मोह प्रचंड ।
धरो अनन्त स्व-वीर्यको, निजपद सुथिर अखंड ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतवीर्यात्मकाय नमः अर्घ्यं० ।।१००५।।

लोकालोक विलोकियो, संशय विन इकबार ।
खेद रहित निश्चल सुखी, स्वच्छ आरसी सार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं लोकालोकज्ञाय नमः अर्घ्यं० ।।१००६।।

निरावर्ण स्वै गुण सहित, निजानन्द रस भोग ।
अव्यय अविनाशी सदा, अजर अमर शुभ योग ।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरणाय नमः अर्घ्यं० ।।१००७।।

परम मुनीश्वर ध्यान धर, पावैं निजपद सार ।
ज्यों रविबिंब प्रकाशकर, घट-पट सहज निहार ।।
ॐ ह्रीं अर्हं ध्येयगुणाय नमः अर्घ्यं० ।।१००८।।

कवलाहारी कहत है, महा मूढ मति मंद ।
अशन असाता पीर विन, आप भये सुखकंद ।।
ॐ ह्रीं अर्हं अशनवर्धाय नमः अर्घ्यं० ।।१००९।।

लोक शशी छवि देत हो, धरो प्रकाश अनूप ।
बुधजन आदर जोग हो, सहज अकम्प सरूप।।
ॐ ह्रीं अर्हं त्रिलोकमणये नमः अर्घ्यं० ।।१०१०।।

महा गुणन की रास हो, लोकालोक प्रजन्त ।
सुर मुनि पार न पावते, तुम्हैं नमैं नित 'सन्त'।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनंतगुणप्राप्ताय नमः अर्घ्यं० ।।१०११।।

परम सुगुण परिपूर्ण हो, मलिन भाव नही लेश ।
जगजीवन आराध्य हो, हम तुम यही विशेष।।
ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने नमः अर्घ्यं० ।।१०१२।।

केवल ऋद्धि महान है अतिशय युत तप सार ।
सो तुम पायो सहज ही, मुनिगण वंदनहार।।
ॐ ह्रीं अर्हं महाऋद्धये नमः अर्घ्यं० ।।१०१३।।

भूत भविष्यत् कालको, कभी न होवे अन्त ।
नितप्रति शिवपद पाय-कर, होत अनंतानंत।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तसिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं० ।।१०१४।।

निर्भय निर-आकुलित हो, स्वय स्वस्थ निरखेद ।
काहू विधि घबराहट नही, निज आनंद अभेद।।
ॐ ह्रीं अर्हं अक्षोभाय नमः अर्घ्यं० ।।१०१५।।

जो गुण-गुणी सुभेद करि, सो जड मती अजान ।
निज गुण-गुणी सु एकता, स्वयबुद्ध भगवान।।
ॐ ह्रीं अर्हं स्वयबुद्धाय नमः अर्घ्यं० ।।१०१६।।

निरावरण निज ज्ञान मे, सर्व स्पष्ट दिखाय ।
सशयविन नहिं भरमहै, सुथिर रहो सुखपाय।।
ॐ ह्रीं अर्हं निरावरण ज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।।१०१७।।

राग द्वेष के अंत मे, मत्सर भाव कहात ।
सो तुम नासो मूल ही, रहै कहाँ सो पात।।
ॐ ह्रीं अर्हं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं० ।।१०१८।।

अणुवत् लोकालोक है, जाके ज्ञान मझार ।
सो तुम ज्ञान अथाह है, वंदू मैं चित धार।।
ॐ ह्रीं अर्हं अनन्तानन्तज्ञानाय नमः अर्घ्यं० ।।१०१९।।

हस्तरेख सम देख हो, लोकालोक सरूप ।
सो अनत दर्शन धरो, नमत मिटै भ्रम कूप।।

ॐ ह्रीं अर्हं अनतानतदर्शनाय नम अर्घ्यं० ।।१०२०।।

तीन लोक का पूज्यपन, प्रकट कहै दिखलाय ।
तीनलोक शिरवास है, लोकोत्तम सुखदाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं लोकशिखरवासिने नम अर्घ्यं० ।।१०२१।।

निजपद मे लवलीन हैं, निज रस स्वाद अघाय ।
परसो इह रस गुप्त है, कोटि यत्न नही पाय।।

ॐ ह्रीं अर्हं सगुप्तात्मने नम अर्घ्यं० ।।१०२२।।

कर्म प्रकृति को मूल नही, द्रव्य रूप यह भाव ।
महा स्वच्छ निर्मल दिपै, ज्यो रवि मेघ अभाव।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूतात्मने नम अर्घ्यं० ।।१०२३।।

हीन अभाव न शक्ति है, कर्मवन्ध को नाश ।
उदय भये तुम गुणसकल, महा विभव की राश।।

ॐ ह्रीं अर्हं महोदयाय नम अर्घ्यं० ।।१०२४।।

पाप रूप दुख नाशियो, मोक्ष रूप सुख रास ।
दासन प्रति मगलकरण, स्वय 'सत' है दास।।

ॐ ह्रीं अर्हं महामगलात्मकजिनाय नम अर्घ्यं० ।।१०२५।।

दोहा

कहै कहाँलो तुम सुगुण, अशमात्र नही अन्त ।
मगलीक तुम नाम ही, जानि भजै नित 'सत'।।

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्णस्वगुणजिनाय नम पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अथ जयमाला

दोहा

होनहार तुम गुण कथन, जीभ द्वार नही होय ।
काष्ठ पावसैं अनल थल, नाप सकै नही कोय ।।१।।

सूक्षम शुद्ध-स्वरूप का, कहना है व्यवहार ।
सो व्यवहारातीत हैं, याते हम लाचार ।।२।।

पै जो हम कछु कहत हैं, शान्ति हेत भगवन्त ।
बार बार थुति करन मे, नहिं पुनरुक्त भनन्त।।३।।

पद्धडी

जय स्वय शक्ति आधार योग, जय स्वय स्वस्थ आनद भोग ।
जय स्वय विकास आभास भास, जय स्वयंसिद्ध निजपद निवास ।। ४।।
जय स्वयवुद्ध सकल्प टार, जय स्वय शुद्ध रागादि जार ।
जय स्वय स्वगुण आचार धार, जय स्वय सुखी अक्षय अपार ।। ५।।
जय म्वय चतुष्टय राजमान, जय स्वय अनन्त सुगुण निधान ।
जय स्वय स्वस्थ सुस्थिर अयोग, जय स्वय स्वरूप मनोग योग ।। ६।।
जय स्वय स्वच्छ निज ज्ञान पूर, जय स्वय वीर्य रिपु वज्र चूर ।
जय महामुनिन आराध्य जान, जय निपुणमती तत्त्वज्ञ मान ।। ७।।
जय सन्तनि मन आनन्दकार, जय सज्जन चित वल्लभ अपार ।
जय सुरगण गावत हर्ष पाय, जय कवि यश कथन न करि अघाय ।। ८।।
तुम महातीर्थ भवि तारण हेत, तुम महाधर्म उद्धार देत ।
तुम महामत्र विप विघ्न जार, अघ रोग रमायन कहो सार ।। ९।।
तुम महाशास्त्र का मूल ज्ञेय, तुम महा तत्त्व हो उपादेय ।
तिहुँ लोक महामगल सु रूप, लोकत्रय सर्वोत्तम अनूप ।।१०।।
तिहुँ लोक शरण अघ-हर महान, भवि देत परमपद सुख निधान ।
ससार महासागर अथाह, नित जन्म मरण धारा प्रवाह ।।११।।
सो काल अनन्त दियो विताय, तामे झकोर दुख रूप खाय ।
मो दुखी देख उर दया आन, इम पार करो कर ग्रहण पान ।।१२।।
तुम ही हो इम पुरुपार्थ जोग, अरु है अशक्त करि विषय रोग ।
सुर नर पशु दास कहे अनन्त, इनमे से भी इक जान 'सन्त' ।।१३।।

घत्ता-कवित्त

जय विघन जलधि जल हनन पवन वल सकल पाप मल जारन हो ।
जय मोह उपल हन वज्र असल दुख अनिल ताप जल कारन हो ।।
ज्यू पगु चढ़ै गिर, गूग भरे सुर, अभुज सिन्धु तर कष्ट भरै ।
त्यों तुम थुति काम महा लज ठाम, सु अत 'सत' परणाम करै ।।

ॐ ह्रीं अर्हं चतुर्विशत्यधिकसहस्रगुणयुक्तसिद्धेभ्यो नम अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा ।

इति पूर्णार्घ्यम् ।

दोहा

तीन लोक चूडामणि, सदा रहो जयवन्त ।
विघ्नहरण मगलकरन, तुम्हैं नमे नित 'सत' ।।१।।

इत्याशीर्वाद ।

अडिल्ल

पूरण मगलरूप महा यह पाठ है,
सरस सुरुचि सुखकार भक्ति को ठाठ है ।
शब्द-अर्थ मे चूक होय तो कही,
थुतिवाचक सब शब्द-अर्थ यामे सही ।।१।।
जिनगुणकरण आरभ हास्य को धाम है,
वायस का नहिं सिधु उतीरण काम है ।
पै भक्तनि की रीति सनातन है यही,
क्षमा करो भगवत शांति पूरणमही ।।२।।

इत्याशीर्वाद.

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

यहाँ पर १०८ बार 'ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा नम' मत्र का जाप करें।

हन्त हस्तावलंब

व्यवहरणनय स्याद्यद्यपि प्राक्पदव्या-
मिह निहितपदाना हन्त हस्तावलब ।
तदपि परमर्थं चिच्चमत्कारमात्र
परविरहितमत पश्यता नैव किञ्चित् ।।५।।

यद्यपि प्रथम पदवी मे पैर रखनेवाले पुरुषो के लिए अर्थात् जबतक शुद्धस्वरूप की प्राप्ति नही हो जाती तब तक, अरे रे। (खेदपूर्वक) व्यवहारनय को हस्तावलम्बन तुल्य कहा है, तथापि जा पुरुष चैतन्य चमत्कारमात्र, परद्रव्य के भावो से रहित, परम-अर्थस्वरूप भगवान आत्मा को अन्तरग में अवलोकन करते हैं, उसकी श्रद्धा करते हैं, उस रूप लीन होकर चरित्रभाव को प्राप्त होते हैं, उन्हे यह व्यवहार-नय किञ्चित् भी प्रयोजनवान नही है।

—आत्मख्याति (समयसार टीका), कलश ५